कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य
का
भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध -- प्रबन्ध

निर्देशक

माता बदल जायसवाल

रीडर, हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

शोधकर्त्री

श्रीमती वेदा रानी

१९७६

प्राक्कथन

साहित्य पर शोध कार्य करना सुगम नहीं है । विज्ञान की छात्रा होने के कारण मैंने जब शोध कार्य करने का विचार किया तो मैंने भाषा विज्ञान को ही अपने शोध प्रबंध का लक्ष्य बनाया । एम०ए० द्वितीय वर्ष में भी भाषा विज्ञान में मेरी काफी रुचि थी । मेरा शोध कार्य करने का विचार न था लेकिन परिस्थितियाँ ऐसी बनी कि उसमें फंसकर मेरा मन इस कार्य की ओर अग्रसर हुआ । मेरी दुर्बलता थी कि मुझमें आत्मबल का नितान्त अभाव था । भाषा विज्ञान विषय की जटिलता एवं कार्य के परिश्रम को देखकर, मैं आंतरिक मन: स्थितियों को इस शोध कार्य के योग्य नहीं पा रही थी । फलत: विचारों एवं भावनाओं के संघर्ष के पश्चात यह दृढ़ निश्चय किया कि शोधकार्य करना ही है ।

मेरे पूज्य पिता जी एवं गुरुदेव माताबदल जायसवाल जी ने मुझे शोधकार्य करने के लिये प्रेरित किया ।

शोध प्रबन्ध के लिये विषय का चुनाव करना भी मेरे लिये एक जटिल समस्या थी । लेकिन प्रो० माताबदल जायसवाल जी ने "कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन" नामक विषय पर मुझे शोध करने की आज्ञा प्रदान की ।

हिन्दी साहित्य को सुगमता के लिये विभिन्न युगों में विभाजित किया गया है । अत: अध्ययन की सुविधा तथा विस्तृत विवेचना के लिये अलग-अलग कालों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयत्न भाषा वैज्ञानिक शोध छात्रों द्वारा किया गया है । इस शोध प्रबन्ध में अपभ्रंश के बाद, कबीर के पूर्व युग में प्राप्त साहित्य की भाषागत विशेषताओं का वर्णनात्मक भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है । हस्तलिखित प्रतियों के

अभाव के कारण केवल वैज्ञानिक रूप से संपादित ग्रन्थों को आधार ग्रन्थ मान कर शोध प्रबन्ध लिखा है । शोधकार्य को सुगम बनाने के लिये उस युग में प्राप्त नामदेव, गोरखनाथ तथा बाबा फरीद के साहित्य का अवलोकन किया गया है । इन ग्रन्थों में प्राप्य प्रत्येक शब्दों के कार्ड्स बनाये हैं । इस प्रकार से लगभग दस हजार कार्ड्स हो गये हैं ।

शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य का ध्वनिग्रामिक अनुशीलन भी किया गया है । पदग्राम, संज्ञा सर्वनाम विशेषण तथा क्रिया विशेषण रूपों के साथ साथ समास रूपों का भी भाषा वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत है । उस युग में प्राप्त विभिन्न रूपों की तुलनात्मक विवेचना अपभ्रंश साहित्य तथा सूरपूर्व व्रजभाषा से की गई है । निष्कर्ष रूप से खड़ीबोली की प्राचीनता कबीर के पूर्व युग तक तथा उससे आगे अपभ्रंश साहित्य तक देखी जा सकती है ।

इस शोध प्रबन्ध को मैं पूरा कर सकी इसके लिए मैं कुछ व्यक्तियों की आभारी हूं । प्रयाग विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के विभागाधीश, डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय जी का मैं हृदय से आभार मानती हूं जिन्होंने इस विषय पर शोध कार्य करने की अनुमति प्रदान की ।

अपने गुरुदेव प्रो० माताबदल जायसवाल जी की मैं ऋणी हूं । इतनी व्यस्तता से अपना बहुमूल्य समय निकाल कर इस कार्य के लिये उन्होंने मुझे दिया । कार्य को सुगम बनाने के लिये पग पग पर मेरा पथ प्रदर्शन किया । सहृदयता, आत्मीयता के साथ साथ परिश्रम तथा लगन से शोध कार्य करने के लिये प्रेरित किया । मेरे पास शब्द नहीं हैं कि मैं उनका आभार प्रदर्शित करूं । आभार प्रदर्शन की औपचारिकता दिखाकर मैं उऋण नहीं होना चाहती । आपकी प्रेरणा से किया हुआ समस्त कार्य, आपकी ही प्रेरणा, परिश्रम तथा सहृदयता का फल है । मैं जो कुछ भी हूं तथा कर सकी हूं वह सिर्फ आपकी ही प्रेरणा से । अतः समस्त कार्य एवं सफलता का फल मैं आपको ही समर्पित करती हूं ।

पिता जी एवं माता जी का एक स्वप्न था कि मैं शोध कार्य करूं । इसके लिये उन्होंने मुझे सहायता तथा प्रेरणा दी । शोध कार्य की अवधि में उनका

प्रेम तथा त्याग अगर मेरे साथ न होता तो शायद यह कार्य पूरा भी न होता। माता पिता का ऋण तो मैं कभी भी नहीं उतार सकती। उनका प्रेम मेरा पथ प्रदर्शक रहा।

अंत में मैं टंकण सम्बन्धी कार्य के लिये श्री मेवालाल मिश्र की अत्यंत आभारी हूं जिन्होंने अल्प अवधि के अन्तर्गत अत्यन्त परिश्रम तथा लगन के साथ मेरा कार्य समाप्त किया है।

मैंने टंकण सम्बन्धी त्रुटियों को यथा संभव सुधारने का प्रयत्न तो किया है किन्तु फिर भी कुछ भूलों के लिये मैं क्षमा प्रार्थी हूं। ञ व्यंजन को हाथ से बनाया गया है। अंग्रेजी के शब्दों का यदाकदा प्रयोग हुआ है जिन्हें भी हाथ से लिखा गया है।

(श्रीमती) वेदा रानी
२४ जून, १९७९

अनुक्रमणिका

विषय पृष्ठसंख्या

विषय पृष्ठसंख्या

विषय पृष्ठ संख्या

अध्याय - १

खड़ी बोली का विकास

बिजनौरी बोली

क्षेत्र

बिजनौरी बोली का बिजनौर एक ऐसा जिला है जहाँ खड़ीबोली Dialect के रूप में बोली जाती है। न तो यह सीमा पर है और न पंजाब से इतना निकट कि यहाँ की बोली पर पंजाबी का विशेष प्रभाव पड़ सके। विद्वानों के अनुसार यहाँ की बोली ही खड़ी बोली क्षेत्र की प्रधान बोली है।

संख्या

इस जिले में —

१. ६००००० हिन्दुस्तानी वर्नाक्यूलर बोलने वाले
२. साहित्यिक खड़ी बोली बोलने वाले - १८६०००

(१६२१ की जन गणना के अनुसार)

सामान्य भाषावैज्ञानिक विशेषतायें

(१) व ध्वनि यदि किसी शब्दांश के अन्त में आती है तो बालाघात होने पर व यथा lactieda की तरह उच्चरित होती है। लौंड़ा या लड़की

(२) वाँ के बदले e का प्रयोग करते - लैं गया

(३) दो स्वरों के मध्य में (जबकि उनमें से एका e हो) y सुनाई नहीं पड़ता है।
यथा Khā - rīā

(४) किसी आधुनिक क्रिया के अंतिम अक्षरांश में य (y) जुड़ता है यदि उसका अंत ā या ō में होता है।

यथा - Liphya ; , Padhya

(५) In the word bit the i change into e

(६) अक्षरांश के अंत में ह ध्वनि उच्चरित नहीं होती है।
' कै दिया ' — कह दिया,
' चाये जौहो ' - चा है जौहो आदि

(७) कभी कभी अनुस्वार युक्त य • न के पूर्व adopt only
ल यथा। -ऱू for न्हूँ
तिनकू for इनकी

(८) न कभी कभी य में परिवर्तित हो जाता है।
यथा - कहानी भगवान कंगन

(९) ई और आ जिसी Stressed शब्द के अंत में आते हैं। तब उनका उच्चारण इ अ की भाँति होता है। गड़ी, घोड़ा का उच्चारण ऐसा होगा मानो ई और आ ह्रस्व है।

(१०) aw तथा o का उच्चारण कभी कभी ↄ की तरह होता है।

(११) कभी-कभी यह देखा जाता है कि अर्ध स्वर व, आ, में बदल जाता है। और पूर्व का आ लुप्त हो जाता है। यथा- Soar, Goar- Savar, Garar

(१२) जब कभी कोई व्यंजन बालाघात प्राप्त (Stressed Syllable) अक्षर में आता है तो साधारणतः व्यंजन (doubled) दुगुना हो जाता है।

घोड़्हा, गाड़्डी, पीट्टन, दुक्काल पक्कास आदि

(१३) कभी कभी ल पार, ४ में परिवर्तित हो जाते हैं
यथा निकाड़ for निकाल, चपड़ासी, चपरासी

टिप्पणी :-

(१) उच्च वर्ग के लोगों की उच्चारण पद्धति साधारण लोगों से कुछ भिन्न होती है। यह उनकी शिक्षा का नहीं बल्कि प्राचीन संस्कृति का प्रभाव है।

उच्चवर्ग	घोड़ा	गाड़ी	
साधारण वर्ग	घोड़्हा	गाड़्डी	इत्यादि

२, भाषा की साधारण प्रवृत्ति शीघ्रता के साथ जोर देकर बोलने की है । यह अनुमान ठीक हो सकता है कि भाषा की इसी शीघ्रता के कारण ही किसी व्यंजन का द्वित्व और किसी कालों पर होता है किन्तु यह कहना कठिन है कि द्वित्व जोर (Jerk) के कारण होता है या कि जोर (Jerk) द्वित्व के कारण होता है ।

जर्क, बोली में शीघ्रता, कठोर ध्वनियों का अधिक प्रयोग इस बोली के नामकरण (खड़ी बोली) (Straight Speech) का एक कारण हो सकता है । उपर्युक्त विशेषता है कि बोली में एक Straightness आ ही जाती है ।

संज्ञा

लिंग–

हिन्दी भाषाकी भांति इसमें भी दो ही लिंग हैं । पुलिंग तथा स्त्रीलिंग — किन्तु पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग के निश्चय करने के लिए कोई विशेष व निश्चित नियम नहीं है कुछ विशेष विधियों से पुल्लिंग से स्त्रीलिंग की भिन्नता प्रकट हो जाती है ।

१, शब्दों के परिवर्तन द्वारा - यथा - मर्द , औरत

२, पुलिंग में प्रत्यय (Suffix) लगाकर –

कुछ पुल्लिंग प्रत्यय निम्नलिखित हैं

ई	बकरा -बकरी
इन	धोबी- धोबिन
नी	हाथी से हथिनी
अन	चमार से चमारन
आन	ठाकुर - ठाकुरान
यन	नाई से नायन

टिप्पणी :- अन्तिम तीन प्रत्यय इस बोली की विशेषता है जो हिन्दी भाषा (आधुनिक मानक हिन्दी) में नहीं पाई जाती हैं ।

(२) कोई निश्चित नियम न होने के कारण परंपरा का ही लिंग निर्धारण में प्रधान हाथ होता है ।

२. वचन

दो वचन हैं :- १. एक वचन - बहु वचन

मूलरूप बहुवचन -:

हिन्दी संज्ञाओं में रूप परिवर्तन नहीं होता है । बहुवचन की पहचान क्रिया के रूप द्वारा होती है ।

यथा - आदमी आया था ।

आदमी आये थे ।

इसको ध्यान में रखते हुए यह तथ्य निकलता है कि -

१. आकारान्त संज्ञायें अवश्य बहुवचन वाला रूप धारण करती हैं ।

यथा - राजा मारा गया

राजे मारे गये ।

२. जब संज्ञा इकारान्त हो तो परिवर्तन इच्छा पर निर्भर रहता है ।

यथा - बिल्ली भाग गई ।

बिल्ली या बिल्लियाँ भाग गयीं ।

३. ऊ - आरान्त संज्ञा में परिवर्तन नहीं होता है ।

यथा - उल्लू उड़ गया ।

उल्लू उड़ गये ।

व्यंजनान्त संज्ञा में direct Case का प्रयोग, कर्ता मूल रूप, एक वचन तथा कर्ता मूल रूप बहुवचन और दूसरे कारकों के एक वचन में होता है ।

किन्तु दूसरे कारकों के बहुवचन में विकृत रूप कारक का प्रयोग होता है ।

यथा - घर बिकता है ।

घर बिकते हैं ।

घर. . को से मैं गया ।

घरों को से मैं गया ।

विकृत रूप बहुवचन

साधारणतः विकृत रूप बहुवचन की रचना एक वचन में ओं - जोड़कर की जाती है -

यथा घोड़ा - घोड़ों

प्रत्यय निम्नलिखित नियमों से लगता है -

१, जब किसी आकारान्त शब्द में लगता है तो आ का लोप हो जाता है और प्रत्यय आ जाता है ।

यथा - घोड़ा - घोड़ों

२, जब कभी प्रत्यय इ, ई, उ, ऊ कारान्त शब्दों में लगता है । तो दीर्घ ई, ऊ, ह्रस्व हो जाते हैं ।

यथा - लड़की, लड़कियों

बकरी - बकरियों

३, व्यंजनान्त शब्दों में प्रत्यय व्यंजन में लगाया जाता है ।

यथा - घर , घरों

बील , बीलों

कारक -

केवल दो कारक हैं -

१. मूल रूप

२. विकृत रूप

Generally like standard Hindi, but unlike standard Hindi – Nominative Singular is used in – कर्म कारक, सम्बन्ध, कारक in एक वचन ।

यथा घोड़ा – घोड़े, को से का की आदि ।

संज्ञा रूप रचना के बहुत से प्रत्यय रूपों का भी प्रयोग होता है । कुछ विशेष प्रकार की संज्ञाओं की रूप रचना भी होती है ।

अधिकरण बहुवचन बिना किसी आवश्यक परसर्ग के प्रयुक्त होता है और अधिकरण का भाव प्रकट करता है । यथा घरों-घरों जिसमें हूं । इस प्रकार के कारक अभ्यास के रूप में आते हैं । करण कारक की रचना भी इसी प्रकार होती है । यथा भूखों मरे हूं ।

सर्वनाम

कर्म से अधिकरण तक के रूप केवल परसर्ग लगाकर बनाये जाते हैं ।

वचन — कभी कभी बहुवचन के रूप एक वचन के लिये प्रयुक्त होते हैं । लेकिन हिन्दी की अन्य बोलियों से भिन्न मध्यम पुरुष में एक वचन का प्रयोग अधिक प्रचलित है । तू, तेरा, तुझे

किन्तु उत्तम पुरुष के सम्बन्ध में प्राय: बहुवचन का प्रयोग अधिक होता है —

मेरी तरफ के बदले, हमारी तरफ का प्रयोग अधिक होता है ।

लिंग —

व्यावहारिक रूप से तो लिंग परिवर्तन के कारण कोई दूसरा रूप नहीं बदलता है —किन्तु

१. पुरुषवाचक के उत्तम पुरुष मै और मध्यम पुरुष के संबंधवाचक रूप में —

यथा - मैरा, मैरी

तैरा तैरी

२. प्रश्नवाचक जब Neuter Gender में जैसा कर्ता के एक वचन, बहुवचन रूप क्या होंगे ।

कारक

परसर्गों का प्रयोग सभी सर्वनामों के साथ हो सकता है । केवल सम्बन्ध कारक उत्तम पुरुष मध्यम पुरुष को छोड़कर -

मैरा, म्हारा, हमारा म्हारा

तैरा तुम्हारा, तुमारा ।

पुरुषवाचक	उत्तम पुरुष	
कर्ता	एक वचन	बहुवचन
	मै म	हम हमनै
	मैनै	
कर्म	उसको कू	हमको, कू
	मैर को कूं	
करण	मुझसे	हमसे
	मैरे से	
सम्प्रदान	मुझको	हमको
	मैरे लियै	हमारे लियै
	म्हारे लियै	
अपादान	मुझसे	हमसे
सम्बन्ध	मैरा	हमारा
	म्हारा	म्हारा
अधिकारण	मुझमें	हममें
		म्हारे मै

टिप्पणी –

अपादान और अधिकरण को छोड़कर और प्रत्येक कारक में एक ऐच्छिक रूप है एक वचन में । कर्म करण सम्प्रदान में मेरा मेरे का रूप इस बोली की विशेषता है । केवल सम्प्रदान सम्बन्ध अधिकरण जो म्हारा को भी स्वीकार करते हैं और सर्वत्र बहुवचन में हम का प्रयोग होता है ।

मध्यम पुरुष

	ए०व०	बहु०व०
कर्ता	तू तूने	तुम, तुमने
कर्म	तुझको तुझे	तुमको
करण	तुमसे	तुमसे
सम्प्रदान	तुमको तुम्हें तेरे लिये	तुमारे लिए
अपादान	तुमसे	तुमसे
संबंध	तेरा	तुम्हारा

टिप्पणी –

१. बहुत से अतिरिक्त रूप मिलते हैं । ये एक वचन में अधिक तथा बहुवचन में कम मिलते हैं । कर्ता को छोड़कर एक वचन में विकृतरूप एक वचन का प्रयोग मिलता है किन्तु ब० व० में कर्ता का बहु वचन वाला रूप अपादान और सम्बन्ध को छोड़कर सर्वत्र मिलता है ।

२. आदर सूचक शब्द आप है । इसमें लोग जोड़ कर बहुवचन बना लेते हैं । विभक्तियाँ इसके बाद जोड़ी जाती हैं ।

अन्य पुरुष

	ए०व०	ब०व०
कर्ता	वो,उसने, उसको	वो,उन्ने, विन्ने

जिस तथा उस दोनों रूप एक वचन में प्रयुक्त होते हैं और विकृत रूप एक वचन रूप तथा बहुवचन के रूप सभी कारकों में सभी वचनों में प्रयुक्त होते हैं —

यथा जिसकी माता

उसकी माता

जिन्ने रूप कर्ता में एक वचन और बहुवचन दोनों में प्रयुक्त होता है । उसी प्रकार को कर्ता के एक वचन और ब०व० में परिवर्तित नहीं होती है ।

टिप्पणी —

बहुवचन की नियमित रूप रचना के अतिरिक्त यदाकदा सभी पुरुषों में सब लोग लगाकर भी बहुवचन बनते हैं । ये शब्द केवल बहुवचन के ही रूप लगते हैं । हम सब हम लोग तुम सब ।

निश्चय वाचक

निकटवर्ती —

ये ये

इस इन

कर्ता को छोड़कर जहाँ कि एक ब० और बहु वचन में रूप समान हैं सर्वत्र विकृत एक वचन तथा बहुवचन के रूप सभी कारकों में प्रयुक्त होते हैं । कर्ता में क्रिया के द्वारा एक वचन और बहुवचन का ज्ञान कराया जाता है ।

यथा — ये जायेगी

ये जायेंगी

दूरवर्ती —

वो वो निकट वर्ती की भाँति

जिस जिन यहाँ भी वही होता है ।

टिप्पणी –

कभी-कभी अतिरिक्त शब्द लगाकर भी बहु वचन बनते हैं –और`लोग`

वो सब आये थे
ये सब आये थे
वो लोग आये थे
ये लोग आये थे

संबंध वाचक सर्वनाम (नित्य सम्बन्धी)

जो जो
जिस जिन

इसमें कर्ता में दोनों रूप एक ही हैं। बहुवचन का भाव क्रिया के द्वारा प्रकट किया जाता है।

यथा जो बैठा है
जो बैठे हैं।

कर्म में प्राय: एक वचन में जिसे और बहुवचन में जिने का प्रयोग होता है।

" जिसे देखो वोई नवाब बना फिरे है ।

उसी भाँति Co- Relative Pronoun के रूप भी हैं –

	ए०व०	ब०व०
मूलरूप	जिस	जिन
विकृत रूप	उस	उन

सम्बन्ध वाचक तथा Co-relative दोनों का प्रयोग सार्वनामिक विशेषण के रूप में भी होता है। जब वे किसी संज्ञा के पूर्व हों।

यथा जो छोड़ा मुझ से बोला
भाई तू किदर जायगा ।

वो आदमी मुझ से बोला
भाई तू किधर जा गा ।

प्रश्न वाचक

ए०व०	ब०व०
कौन	कौन
क्या	क्या (अप्राणीवाची)
किस	किन

आदर सूचक का प्रयोग या तो बहुवचन की क्रिया का प्रयोग एक वचन के साथ करके होता है या अतिरिक्त शब्द सब जोड़ दिया जाता है

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

ए०व०	ब०व०
कोई	कोई (कोई आयके है ।)
किसे	किसे (किसी को बुला है)

एक वचन तथा बहुवचन का भाव क्रिया से प्रकट किया जाता है । किन्तु इसके साथ (he) जोड़ने की परिस्थिति भी लगभग अवश्य लगाया जाता है । बल तथा जोर देने के लिए भी इसका प्रयोग होता है ।

कुछ (Any thing.) का कोई विकृत रूप नहीं होता है । 'कुछ भेजो जी' 'कुछ को तो मैंने ई बता दिया था '

संयुक्त सर्वनाम

जबकि दो सर्वनाम संयुक्त होकर एक ही अभिव्यक्ति बनकर प्रकट होते हैं । यथा -

जो कोई जाको चाये

Euphatic form — कुछ ऐसे शब्द जो किसी दूसरे शब्द के साथ जुड़कर उसमें जोर ला देते हैं —यथा भी व

सार्वनामिक विशेषण

सर्वनाम	Manner		Pro. Adj of Quality	Pro. Adj of Time	Pro. Adj of Place	Pro. Adj of Direction	Remarks
Pronoun	Pro Adj	Pro. Adverb					
निश्चयवाचक							
निकट	ये बैसा	ऐसे	इत्ता	अभी, अब	इयां, यां	इदर	① सार्वनामिक विशेषण जब किसी Substantive के पहले सर्वनाम का प्रयोग होता है
दूरस्थ	वो वैसा	वैसे	उत्ता		उवां वां	उदर	
संबंध वाचक	जो जिसका	जैस्से	जित्ता	जब	जहां, जहां ज्ञां	जिदर जिधर	② सार्वनामिक क्रिया विशेषण क्रिया के पूर्व आते हैं।
तत्संबंधवाचक	वो वैस्सा	वैस्से	वित्ता		वां, उवां	विदर विधर	
प्रश्न वाचक	कौन वैसा	कैसे	कित्ता	कब	कौं	किदर किधर	

विशेषण

लिंग :-

विशेषण में दो लिंग होते हैं । पूर्वी बोलियों से भिन्न इस बोली में लिंग भली भांति स्पष्ट होता है । यदि शब्द आकारान्त है ~~

यथा — " मोट्टा घोट्टा, मोटी घोड्ढी "

लेकिन कभी में इस प्रकार का स्पष्ट लिंग भेद नहीं होता है —

यथा - म्दार घोड़ा , म्दार घोड़ी

रचना

जब कि विशेषण आकारान्त है तो उसमें ई जोड़कर स्त्रीलिंग बनाया जाता है । ठंढा पाणी, ठंडी हवा

किंतु जब विशेषण ईकारान्त होते हैं या व्यंजनांत होते हैं तो रूप परिवर्तन नहीं होता है ।

यथा - भारी घोड्डा , भारी लड़की

वचन नियमानुसार विशेषण में भी दो वचन होते हैं । विशेषण का वचन संज्ञा के वचन के अनुसार बदलना चाहिये । किन्तु यहां भी आकारान्त विशेषण ही संज्ञा के अनुसार वचन परिवर्तन करते हैं ।

अच्छा घोड्डा अच्छे घोड्डे

किन्तु अन्य स्वरों में अन्त होने वाले विशेषण या व्यंजनान्त विशेषण संज्ञा के वचन के अनुसार नहीं बदलते हैं ।

भारी घोड्डा भारी घोड्डे

टिप्पणी –

जब कि कोई विशेषण संज्ञा के समान प्रयुक्त होता है तब रूप रचना में वही नियम लगते हैं

वहां बहौत से घोड़े थे उनमें से कालों कृ चुन लिया

रूप –

विशेषण का एक ही रूप (मूल) होता है विकृतरूप भी होता है जब कि आकारान्त हो – व

काला काले

उंचो उचे

Degree of Composition :-

कोई ऐसे प्रत्यय नहीं हैं जिनमें जोर देने से Compusion प्रकट हो सके। कुछ मुहावरे में जिनसे उसका भाव हो जाता है।

यथा - जादा , बहौत, तन और कम , सबसे जादा

सब में, सबसे , सब में कम

जोर देने के लिये कहीं शव्द जोड़ दिया जाता है –

वो लौह्डा तो कहीं जादा बड़ा है।

पूर्णसंख्या इसमें बीस के बाद की संख्यायों को गिन्न के लिये एक दर्शनीय पद्धति है –

२८ - बीस और आठ

४७ को चालीस तथा सात

अपूर्ण संख्या –

इसमें दो लिंग -- स्त्रीलिंग तथा पुल्लिंग होते हैं। स्त्रीलिंग की रचना में आ कारान्त को इकारान्त कर देते हैं

पेला, दूसरा, तीसरा, चौत्था

चार के बाद की संख्याओं में ओं लगाकर बनाया जाता है –
पांच्चवाँ छटा वाँ सातवां आठवां

आवृति वाचक :- पाव, आधा पौन सवा, डेढ़ा, साढे अढ़ाई

गुणा बोधक :- पूर्ण में गुणा जोड़ने से बनते हैं – दुगुणा, तिगुणा

निश्चित संख्या वाचक :- इकला, दोनों तिन्नो चारों आदि ।
कैष के रूप ओ लगाने से बनते हैं ।
पांचों छओं सातों

अनिश्चित संख्या वाचक :- ५० की नीचे की संख्याओं में इयों जोड़कर –
दसियों, बीसियों पच्चीसियों

किन्तु सौ के ऊपर की संख्याओं में ओं जोड़कर बनाया जाता है । सैकड़ों, हजारों, आदि ।

क्रिया

वचन

वचन के उचित प्रयोग पर ध्यान दिया जाता है । कभी ही एक वचन की क्रिया के साथ बहुवचन होता है । केवल समानार्थक शब्दों में ही प्रयुक्त होता है । कर्ता चाहे सर्वनाम ही क्यों ना हो किन्तु एक वचन के साथ एक वचन क्रिया ही आयेगी ।

धातु

क्रिया के रूप में न्ना और ना जोड़कर - क्रिया का धातु रूप बनता है। साधारणतया एकाक्षर धातुओं में न्ना तथा बहु अक्षरात्मक धातुओं में ना जोड़ा जाता है।

Imperfect Participles :— इसके तीन रूप हैं —

१. द्वित्व व्यंजन + ऊ
२. द्वित्व व्यंजन + ए
३. द्वित्व व्यंजन + ओ

काल रचना में भिन्न भिन्न रूप इस प्रकार बनते हैं —

१. प्रथम - उत्तम पु० में मैं ए०ब० में प्रयुक्त होता है।
मैं - देक्खूं हूं । मैं डाल्लूं हूं

२. द्वितीय - मध्यम पुरुष एकवचन में प्रयुक्त होता है। उत्तम पुरुष, अन्य पुरुष ,अन्य ए०बचन तथा बहु बचन में प्रयुक्त होता है —
हम देक्खे हैं ।

घ तृतीय - मध्यम पुरुष बहुवचन में प्रयुक्त होता है —
तुम देक्खो हो

Perfect Participles :-

व्यावहारिक रूप से सभी पुरुष तथा सभी बचन में आकारान्त होता है। किन्तु जब धातु एकाक्षर होती है और आकारान्त होती है तब आ के पूर्व य जोड़ा जाता है।

खाया, जलाया, आदि किन्तु यह नियम सदैव नहीं है।

Conjuctive Participles :—

धातु में कर ' और के लगाकर बनते हैं —
यथा - नया कर क , पा कर क भगह के

सहायक क्रिया —

होना (होन्ना)

सहायक क्रिया-होना (होन्ना)

Present Indicative		Past Indicative	
ए०ब०	ब०व०	ए०ब०	ब०व०
हूँ	हैं	था	थे
है	हौ	था	थे
है	हैं	था	थे

टिप्पणी —

१, स्त्रीलिंग रूप आ आ नो इ और ए में बदल देते हैं ।
२, हों रूप केवल मुरादाबाद की बोली में सुनाई पड़ता है ।
रामचन्दर आयौ है।

Present Conjuctive		Past Conjuctive		Imperative	
ए०ब०	ब०व०	ए०ब०	ब०व०	ए०व०	ब०व०
हौऊं	होवै	होता	होते	हौऊं	हों, होवै
होवै	हो, होन्ना	होता	होते	हो, होइयो	हो, होइयो
होवै	होवै	होता	हो ते	हो	हों

टिप्पणी —

व्यवहार रूप से आज्ञा का प्रयोग उत्तम पुरुष में नहीं के बराबर ही होता है ।

साधारण काल — देखना क्रिया

ए० व०	ब० व०
देक्खा	देक्ख्या

टिप्पणी — कभी कभी ओकारान्त भी हो जाते हैं — गिर् पड्यौ

२. कर्म के अनुसार लिंग बदल जाता है —

व > ी   दैखी

Future Indicative :-

ए०व०	ब०व०
दैक्खू दैखूँगा	दैखैंगे
दैक्खैगा	दैक्खैंगे

टिप्पणी

① मध्यम पुरुष एकवचन में कभी कभी — खावैगा ।

② स्त्रीलिंग होने पर गा के स्थान पर गी हो जाता है ।

Present Conjuctive :-

ए.व.	ब.व.
दैक्खू	दैक्खै
दैक्खै	दैक्खौ

Past Conjuctive :-

ए.व.	ब.व.
दैक्ता	दैक्ते

टिप्पणी —

स्त्रीलिंग के साथ प्रत्येक एक वचन में तथा अन्य पुरुष के बहुवचन में भी अन्तिम स्वर को "ई" में बदल देने से बनता है । मध्यम पुरुष के बहुवचन में ए में तथा उत्तम पुरुष के बहुवचन में अपरिवर्तित रहता है ।

Imperative :-

ए०व०	ब०व०
दैक्खू	दैक्खै
दैक्ख,	दैक्खै , दैक्खौ
	दैक्खियौ
दैक्खै	

(दैक्खियौ, दैक्खियै)

टिप्पणी :—

दैखियै तथा दैक्खियौ से भविष्य की ओर भी संकेत होता है ।

Periphrastive Tense :-

किसी प्रधान क्रिया के Present Participle तथा Past Participle वाले रूपों में सहायक क्रिया जोड़कर बनाये जाते हैं ।

Imperfect Indicative

ए०व०	ब०व०
दैक्खूं हूं	दैक्खै हैं
दैक्खै है	दैक्खौ हौ
दैक्खै है	दैक्खै हैं

Past Imperfect Indicative

ए०व०	ब०व०
दैक्खूं था	दैक्खूं थे
दैक्खै था	दैक्खौ थे
दैक्खै था	दैक्खै थे

(टिप्पणी - जावे है)

Present Imperfect Conjuctive

दैक्खूं हू	दैक्खै हैं
दैक्खै हैं	दैक्खौ हौ
दैक्खै है	दैक्खै हैं

Present Perfect Indicative

एक बचन एवं बहु बचन

दैक्खा है

दैक्खी है

Past Perfect Indicative

दैक्खा था

Past Perfect Conjuctive

दैक्खा हौ

Future Perfect Indicative

दैक्खा होगा

टिप्पणी

Past Perfect Conjuctive यही केवल एक रूप है जो सभी पुरुषों में सभी बचनों में सभी लिंगों में प्रयुक्त होता है।

टिप्पणी — साहित्यिक हिन्दी से भिन्न इस बोली में कुछ कालों के रूप नहीं हैं।

Present · Indicative :-

इसके बदले सदैव Present · Continuous का प्रयोग होता है। यदि कहीं यह प्रयुक्त भी होता है तो आश्चर्य स्वभाव ऐतिहासिकता प्रकट करने के लिये होता है।

२. Future · Imperfect Indicative :- यह कभी प्रयुक्त ही नहीं होगा

३. Past Perfect Conjuctive :-

इसका भी कोई निश्चित क्रियात्मक रूप नहीं है। इसके स्थान में साधारण Past · Tense का प्रयोग करेंगे -

जो मैं ले रई थी तो तुम ने क्यों मने किया ।

Infinitives :-

तीन प्रकार के प्रयुक्त होते हैं — प्रत्येक क्रिया के ये तीनों रूप हो सकते हैं

१. न और ण
२. ना
३. नै

Noun of Agerey :- मैं वाला लगा देने से

Passive & Causative :-

कर्म वाच्य वाला रूप व्यावहारिक रूप से नहीं प्रयुक्त होता है। प्रेरणार्थक का प्रयोग होता है। किन्तु double · Causative का प्रयोग नहीं होता है। साधारणतया आ लगाकर - यथा

पिला के पिटना

Compound · Verb :- उठ बैठना आदि

टिप्पणी — १. इस बोली में रह लगाकर भी Imperfect Indicative के रूप बनते हैं - खा ; रआ ऊँ-

२. आना जाना, खाना पीना आदि कुछ मुहावरे हैं। संयुक्त

क्रिया की रचना धातु में - जाखा, लेखा , देना, वेठ्या आदि रूप लगाने से बनते हैं ।

अव्यय (क्रिया-विशेषण)

क्रिया विशेषण का प्रयोग इस बोली में कम है । क्रिया में जोर लाने के लिए उनके और विधान हैं ।

यथा - जल्दी आ के लिइ अरे आज बाई

१. स्थानवाचक क्रियाविशेषण	यीं यां इदर उदर म्यहां मां जहां जिदर , विदर उन्है किधे सब तरफ,आगाडी परै
२. काल वाचक "	अबी, तबी, जब, रोज, तड़के, इतना
३. परिमाण वाचक "	बहोत ज्यादा बिता कित्ता घणां
४. कारण वाचक "	क्यूंकर, जैसे क्यूं
५. संख्या वाचक "	दच्चे और बार को रंगचा में जोडकर
६. रीति वाचक "	ऐसे वैसे, सभी , जभी तरा, तरिया
७. संयुक्त क्रिया विशेषण	इदर, उदर, यांकई

कर्ता- नै

अपादान मै कर्म - को कू से सेती

संबंध का के की करण - से

अधिकरण में,पे,में,उप्पर सम्प्रदान - को रूपान्तर

संबोधन - औरे, रे, अरे, अरी

विस्मयादि बोधक - हा हाय

वापरे गजब मरजा

खड़ी बोली

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में खड़ीबोली का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। यह भारत की प्रधान साहित्यिक भाषा एवं राष्ट्र भाषा का मूल रूप है खड़ीबोली के मूल स्रोत के सम्बन्ध में विद्वानों में बड़ी भ्रामक धारणायें रही हैं। सर जार्ज ग्रियर्सन द्वारा प्रतिपादित आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के मूल में किसी न किसी अपभ्रंश की मान्यता भी आज विवाद का विषय है। डा० तगारे के मतानुसार प्रत्येक आधुनिक भारतीय आर्य भाषा के मूल में अपभ्रंश का विचार कल्पनात्मक है जब तक लिखित साक्ष्यों के आधार पर इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। शौरसेनी अपभ्रंश से खड़ीबोली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में महापंडित राहुल सांकृत्यायन, डा० धीरेन्द्र वर्मा, पं० किशोरीदास वाजपेयी प्रभृति भाषाविदों का मत बिलकुल नकारात्मक है। उपर्युक्त विद्वानों के विचारों का अध्ययन करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि शौरसेनी अपभ्रंश से खड़ीबोली का विकास मानना अस्वाभाविक प्रतीत होता है। कारण कि शौरसेनी अपभ्रंश का क्षेत्र शूरसेन जनपद रहा है जबकि खड़ीबोली कुरुदेश में विकसित हुई। डा० हरिश्चन्द्र शर्मा ने खड़ी-बोली की उत्पत्ति के लिये कौरवी अपभ्रंश का सुझाव दिया है किन्तु जहाँ तक लिखित साक्ष्य का प्रश्न है इतिहास इस सम्बन्ध में मौन है यद्यपि यह सत्य है कि अनेक सभी बोलचाल की भाषायें रही होंगी जिनके अवशेष भी आज हमें प्राप्त नहीं। अतः कौरवी अपभ्रंश के अस्तित्व के सम्बन्ध में क्या कहा जाये। संस्कृत काल से लेकर तीसरी व चौथी शताब्दी तक भाषा संस्कृति तथा सभ्यता के क्षेत्र में कुरुदेश सम्पूर्ण आर्यावर्त का मार्ग दर्शक बना रहा किन्तु उसके बाद से १२ वीं शताब्दी तक राजनैतिक दृष्टि से यह प्रदेश उपेक्षित रहा। हो सकता है इस काल के बीच कुरुदेश की भाषा राज-सत्ता का आश्रय न पा सकने के कारण प्रकाश में न आ पायी और इतिहास उसकी ओर से उदासीन बना रहा।

तथ्य यह है कि बोलचाल की भाषा तो अनवरत रूप से प्रवहमान रहती

है । किसी भी साहित्यिक भाषा से बोलचाल की भाषा का विकास मानना सर्वथा असंगत है । बोली से ही भाषा का विकास होता है । साहित्यिक भाषा कृत्रिम तथा जन सामान्य के लिये दुर्वह एवं दुरूह बन जाती है किन्तु बोलचाल की भाषा अक्षुण्ण गति से आगे बढ़ती रहती है । ध्वनि पद शब्द अर्थ एवं प्रयोग की दृष्टि से बोलियाँ भी अप्रभावित नहीं रहतीं । समकालीन साहित्यिक भाषा से ये कुछ न कुछ ग्रहण करती रहती हैं । यह अंश आगे चल कर बोलियों में विकास और संबंध का निर्धारण करता है । भाषा विकास के द्वितीय काल में कुरु जनपद राजनैतिक दृष्टि से उपेक्षित रहा । बहुत सम्भव है इसी कारण वहाँ की जन भाषा साहित्य गौरव से वंचित रही और उसका उल्लेख कहीं भी नहीं मिलता । किन्तु जन सामान्य में बोलचाल की भाषा का विकास होता रहा और अद्यतन रूप खड़ी-बोली के रूप में सामने आया । कुछ विद्वान पश्चिमी हिन्दी बोलियों की उत्पत्ति (खड़ीबोली) नागर अपभ्रंश से मानते हैं जो शौरसेनी और महाराष्ट्री का मिश्र रूप है --'नागरत्तु महाराष्ट्री शौरसैन्योस्तु संकरात्'

ग्यारहवीं शताब्दी में अपभ्रंशों के साहित्य भाषा के पद से अपदस्थ होने के संकेत मिलने लगते हैं । यही वह समय था जब मुसलमानों के छुटपुट आक्रमण भारत पर निरन्तर होने लगे थे । ये अस्थायी आक्रमण न थे वरन भारत को अपने अधीन कर उस पर शासन करने का उनका दृढ संकल्प था । भारत के पश्चिमी भाग पर उनका कब्जा हो जाने से जो एक महत्वपूर्ण बात हुई वह भी शासन कार्य एवं दैनिक कार्य व्यापार के लिए स्थानीय बोली का ग्रहण ।

मुसलमान सुलतानों के दिल्ली पर आधिपत्य जमा लेने के बाद खड़ी-बोली को विकास का अच्छा अवसर प्राप्त हो गया । खड़ीबोली उनके दैनिक व्यवहार की भाषा बनी । हाँ उसमें अरबी फारसी शब्दों का छिड़काल तो अवश्य ही प्रारम्भ हो गया । डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल का कहना है कि 'मुसलमानों की विजय खड़ीबोली की विजय सिद्ध हुई । वे जहाँ जहाँ गये उर्दू के रूप में उसे साथ लेते गये ।' मुसलमानों के राज्य विस्तार के साथ खड़ीबोली का व्यापक प्रचार प्रसार हुआ और शनैः शनैः वह भारत के प्रधान नगरों एवं व्यापारिक केन्द्रों की भाषा बन गई । अरबी फारसी शब्दों के घालमेल से भाषा का जो प्रारम्भिक

स्वरूप सामने आया उसे रेख्ता कहा गया । मुहम्मद बिन तुगलक की सनक के कारण जब ~~देवगिरि~~ दौलताबाद राजधानी बना तो दिल्ली की समस्त जनता दौलताबाद जा बसी । दिल्ली की यही रेख्ता दक्षिण में पहुंचकर दक्खिनी कहलायी । एक बात यहाँ और कह देनी आवश्यक है कि खड़ीबोली के विकास में मुसलमानों के योगदान की जो अतिरंजना की जाती है तथ्य कुछ इससे भिन्न हैं । यद्यपि यह सत्य है कि खड़ीबोली को विकास का अवसर मुसलमानों के भारत आगमन के बाद ही मिला किन्तु मुसलमानों ने खड़ीबोली को जानबूझ कर नहीं उठाया यह तो उसकी सजीवता एवं जीवन्त शक्ति का प्रतीक था जो स्वत: अपना विकास करती जा रही थी । शासन कार्यों की भाषा उनके राज्यकाल के अन्त तक फारसी ही बनी रही । खड़ीबोली तो जन सामान्य के दैनिक कार्य व्यापार एवं व्यवहार की भाषा थी ।

डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने बोलियों की प्राचीनता के सम्बन्ध में दाक्षिण्याचार्य कृत कुवलय माला कथा (सन् ७७८ ई०) में वर्णित एक हाट में मध्य-देश से आये एक बनिये के मुंह से तेरे मेरे आ उन निकली भाषा से है ।

खड़ी बोली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों ने अधिकतर अनुमान एवं कल्पना से ही काम लिया । फलस्वरूप इसकी उत्पत्ति के प्रश्न पर अनेक भ्रामक एवं परस्पर विरोधी विचार प्रस्तुत किये गये । इसके प्रमुख कारणों में से तात्कालीन शासकों की भाषानीति का भी उत्तरदायित्व कम नहीं है । दिल्ली पर मुसलमान शासकों के आधिपत्य और इसमें अरबी फारसी शब्दों के घालमेल के कारण कुछ विद्वानों ने इसको उर्दू सापेक्ष बताया है । उर्दू से खड़ीबोली की उत्पत्ति बताते हुए प्रथम लेखक गार्सां द तासी (१८३९ ई०) थे । तासीं महोदय ने उक्त कथन के फलस्वरूप परवर्ती विद्वानों को कल्पना करने का अच्छा अवसर प्राप्त हो गया और उन्होंने खड़ीबोली की उत्पत्ति सीधे सीधे उर्दू से मान ली । इस वर्ग के विद्वानों में एफ० ई० के प्रोफेसर हक ,राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द 'जगन्नाथ दास रत्नाकर, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, लाला भगवान दी, आचार्य कामताप्रसाद गुरु आदि के नाम उल्लेखनीय है । खड़ीबोली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों में जो दूसरे प्रकार का भ्रम था वह यह कि उन्होंने

खड़ीबोली को या तो ब्रजभाषा से उत्पन्न बताया था या उसकी उत्पत्ति ब्रज-भाषा और पंजाबी अथवा ब्रजभाषा और उर्दू के मेल से बतायी है । इस प्रकार के भ्रम का कारण काव्य के क्षेत्र में ब्रजभाषा और खड़ीबोली का विवाद रहा है । ब्रजभाषा के कट्टर समर्थक काव्य में खड़ीबोली के प्रयोग को अवांछनीय एवं अनुपयुक्त बताते रहे और उसके विरोध में जो कुछ भी वह कह सकते थे कहा । दूसरे खड़ीबोली के विकास काल के पूर्व ब्रजभाषा में एक विशाल तथा समृद्ध साहित्य की सर्जना हो चुकी थी । लल्लूलाल जो कि खड़ीबोली गद्य के प्रथम लेखक माने जाते रहे ने अपने प्रेमसागर में भाषा का जो स्वरूप प्रस्तुत किया वह निश्चित रूप से ब्रजरंजित है । सम्भवतः इसलिये विद्वानों ने अनुमान लगाया कि खड़ीबोली ब्रज-भाषा से उत्पन्न एवं उसकी पुत्री है । इन विद्वानों में सर्वश्री मौलाना मुहम्मद हुसैन ,गोस्वामी गोचरण जगन्नाथदास रत्नाकर, बालमुकुन्द गुप्त पंडित शिव-रत्न शुक्ल सिरस आदि प्रमुख हैं । एक वर्ग ऐसा भी था जो खड़ीबोली को कृत्रिम तथा गढ़ी हुई भाषा मानता रहा । इस वर्ग के विद्वानों में प्रमुख अंग्रेज भाषाविदों — विशेषतया जार्ज ए० ग्रियर्सन और आर० डब्ल्यु० फ्रेजर को लिया जा सकता है । वस्तुतः यह काल ऐसा था जबकि अंग्रेज संपूर्ण भारत पर अपनी कूटनीति से शासन कर रहे थे । वे शासन में दोहरी नीति अपनाकर हिन्दू मुसलमानों के बीच सामा-जिक तनाव उत्पन्न कर खड़ीबोली के आविष्कार का श्रेय स्वयं लेना चाहते थे । उर्दू हिन्दी विवाद जो वर्षों से चला उसमें इन अंग्रेज कूटनीतिज्ञों का हाथ कम न था ।

किन्तु वैज्ञानिक आधार पर आज उपर्युक्त मतों का खण्डन किया जा चुका है । भाषाविज्ञानियों और उर्दू साहित्यकारों की मान्यता ठीक इसके विपरीत है उनका कथन है कि भारत में मुसलमानों के आगमन के पूर्व खड़ीबोली अस्तित्व में थी-भले ही इसका नामकरण बहुत बाद में हुआ हो । चिट्ठी पत्री व्यापार व्यव-हार आदि के रूप में खड़ीबोली का ही प्रचलन था । यही वह भाषा थी जो समूचे मध्यदेश में सरलतापूर्वक समझी जा सकती थी । विदेशी शब्दों से भाषा को एक नया रूप मिला और यही रूप कालान्तर में उर्दू नाम से अभिहित किया जाने लगा । मि० ओरविट्ज कहते हैं — "यह आश्चर्य की बात नहीं है कि हिन्दी अधि-

काधिक फारसीमय हो गयी । मुगलों ने हिन्दुओं पर विजय पायी पर हिन्दी की विजय उससे भी बड़ी थी । उसने असभ्य विजेताओं को जीत लिया । एक पीढ़ी के बाद हिन्दी जबान तैमूर के अनुयायियों के कैम्प में स्थापित हो गयी । उन्होंने आवश्यकता नुसार हिन्दी को नये साँचे में ढाल लिया और उसे उर्दू भाषा अर्थात् कैम्प की भाषा कहा । एस० डब्ल्यू फैलन ब्लाकमैन, हिन्दुस्तानी के अध्यक्ष जे०टेलर एवं परीक्षक जे० रोएबक , डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, डा० रामबाबू सक्सेना आदि विद्वानों ने उर्दू की तुलना में खड़ी बोली की प्राचीनता सिद्ध की है । तथ्य यह है कि खड़ीबोली का विकास स्वतंत्र रूप से हुआ । आधुनिक भारतीय आर्यभाषी बोलियों की तरह यह भी विकास की एक स्थिति है । १७ वीं शताब्दी के पूर्व उर्दू का अस्तित्व ही नहीं था जबकि ७ वीं ८ वीं शताब्दी में खड़ीबोली में रचे गये ग्रन्थों का उल्लेख किया जा चुका है । डा० शितिकंठ मिश्र के शब्दों में, — "उर्दू से हिन्दी का विकास कभी सम्भव नहीं बल्कि ऐसा मानना नितान्त अस्वाभाविक है । उर्दू स्वयं खड़ीबोली के आधार पर विकसित हुई । उसी में से हिन्दी संस्कृत के शब्दों का हटाकर अरबी फारी प्रयोग करने पर आज की उर्दू बनी है ।

दूसरे ब्रजभाषा से खड़ीबोली का विकास मानने का प्रमुख कारण ब्रजभाषा और खड़ीबोली का विवाद ही कहा जा सकता है । लेकिन यह युक्तिसंगत नहीं है क्योंकि खड़ीबोली का प्रचलन बहुत पहले से था जबकि ब्रजभाषा का नाम भी कोई नहीं जानता था । डा० चन्द्रबली पाण्डेय का कथन है कि " इन भाषाओं के विकास का जो मैंने अध्ययन किया है उससे मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि हिन्दुस्तानी खड़ी वह भाषा थी जिसका साहित्यिक भाषा के रूप में सबसे पहले विकास हुआ । दूसरी तरफ १६ वीं सदी से इपहले की ब्रजभाषा का इतिहास बहुत ही शंकास्पद है । डा० कपिलदेव सिंह का कहना है कि यदि खड़ीबोली की उत्पत्ति सीधे ब्रजभाषा से हुई होती तो आज मथुरा वृन्दावन जो ब्रजभाषा का केन्द्र है में हम खड़ीबोली का ही प्रचार पाते । परन्तु ब्रजभाषा का साम्राज्य अब भी अपने क्षेत्र में बना हुआ है और वह वहाँ की साधारण जनता की भाषा है । "वस्तुत: खड़ीबोली कुरु प्रदेश की अपभ्रंश का विकसित रूप है जिसका बोलचाल के रूप में काफी

........अर्से से प्रयोग होता चला आ रहा है ।

तीसरे खड़ी बोली को कृत्रिम तथा अंग्रेजों द्वारा आविष्कृत मानने का प्रमुख कारण अंग्रेज भाषाविदों की भाषा सम्बन्धी कूटनीति ही कहा जा सकता है । यद्यपि यह सत्य है कि लल्लूलाल जी से पूर्व किसी ने भी हिन्दुस्तानी को खड़ीबोली नहीं कहा पर उसमें रचनायें बहुत पहले से प्रचलित थीं ।

"अपभ्रंश काल (१० वीं से १४ वीं शती तक) जैन आचार्य बौद्ध सिद्धों नाथ पंथियों चारणकवियों आदि वीर रचनाओं को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनमें खड़ीबोली का अस्तित्व बीजरूप में उसी प्रकार पाया जाता है जिस प्रकार ब्रज अवधी पंजाबी आदि भाषाओं का । यह कहना एकदम निराधार है कि खड़ीबोली का आविष्कार लल्लूलाल जी ने गिलक्राइस्ट की प्रेरणा से किया क्योंकि १६ वीं शताब्दी में संत प्राणनाथ प्रणीत कुलजमस्वरूप नामक ग्रन्थ में मध्यकालीन खड़ीबोली हिन्दी या हिन्दुस्तानी का प्रयोग हुआ है । रामप्रसाद निरंजनी का योगवासिष्ठ (१७४१ ई०) परिष्कृत हिन्दी में जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का भी प्रयोग हुआ है तथा दौलतराम का "जैन पद्मप्रमाण (१७६१ ई०) जो अरबी फारसी के शब्दों से सर्वथा मुक्त है पहले से ही मौजूद थे जबकि अंग्रेजों का राज्य हिन्दी प्रदेश पर स्थापित भी नहीं हुआ था । रेख्ता के कवियों -- सादी बखशी अफजल, दर्वेस वली आदि की रचनाओं में खड़ीबोली के प्रचुर तत्त्व विद्यमान हैं ।

जहाँ तक खड़ीबोली में गद्य रचना का प्रश्न है लल्लूलाल जी से पूर्व संत प्राणनाथ तथा लालदास प्रणीत अनेक गद्य ग्रन्थ खड़ीबोली में हैं ।

साधु गुलाब सिंह (१८ वीं शताब्दी) का गद्य प्रेमसागर से अधिक पुष्ट है -" श्री रामराम में जो कुतर्क करते हैं सो नरक जायगे । श्री रामराम आमृत को धाम है । जौन मुरख निन्दा करते हैं सो महापापी हैं,सोई राखश महानीच हैं ।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि लल्लूलाल जी से पूर्व खड़ीबोली में बहुत कुछ लिखा जा चुका था । कारण भी स्पष्ट है कि अगर अंग्रेजों से पूर्व खड़ी-बोली का नामोनिशान तक न था तो लल्लूलाल को प्रेरणादेने वाले गिल-क्राइस्ट महोदय को ऐसी भाषा का इल्हाम कैसे हुआ । बाबू श्यामसुन्दर-दास ने तो स्पष्ट ही कह दिया है कि " यदि लल्लूलाल जी नयी भाषा गढ़ रहे थे तो क्या आवश्यकता थी कि उनकी गढ़ी हुई भाषा उन साहबों को पढ़ाई जाती जो उस समय केवल इसी अभिप्राय से हिन्दी पढ़ते थे कि इस देश की बोली सीखकर यहां के लोगों पर शासन करें । डा० ताराचन्द ने हिन्दु-स्तानी की व्याख्या करते हुए स्पष्ट लिखा है कि "हिन्दुस्तानी कोई मन-गढ़न्त भाषा नहीं है । यह वही खड़ीबोली है जिसे दिल्ली और मेरठ के आसपास के रहने वाले बहुत पुराने वक्तों से बोलते चले आ रहे हैं ।" पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी का कहना है कि " यह कहना कि खड़ीबोली में गद्य लिखने का प्रारम्भ लल्लूलाल जी आदि ने अंग्रेजों की प्रेरणा से किया एकदम निराधार तथा गलत है । बहुत पहले से खड़ीबोली में आज की हिन्दी के समान गद्य लिखा जाता था । वह व्यवहार की भाषा थी और विशुद्ध संस्कृत शैली में उसमें पत्र लिखे जाते थे ।

तथ्य यह है कि अंग्रेज जब भारत आये उस समय तक हिन्दुस्तानी खड़ी राजकीय और अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार की भाषा बन चुकी थी और सारे देश में व्यापक रूप से इसी भाषा में विचार विनिमय आदान-प्रदान एवं पत्र-व्यवहार का कार्य सम्पन्न होता था । समग्र भारत पर अपना आधिपत्य जमा लेने के बाद राजकार्य संचालन के लिये अंग्रेजों का भाषा की ओर ध्यान देना स्वाभा-विक था । उन्होंने इसी व्यापक महत्ता को स्वीकारा तथा शिक्षा एवं राज्य कार्य के लिये इसी भाषा को माध्यम बनाया ।

नामकरण प्रयोग एवं अर्थ

खड़ी बोली नाम वस्तुत: एक जटिल एवं विवादास्पद प्रश्न रहा है। अभी तक उपलब्ध सामग्री के आधार पर "खड़ीबोली" नाम का सर्वप्रथम प्रयोग लल्लूलाल जी के प्रेमसागर की भूमिका में मिलता है। बोली के अर्थ में इस नाम का उल्लेख १६ वीं शती के प्रारंभ में लल्लूलाल जी ने दो बार सदल मिश्र ने दो बार और गिलक्राइस्ट ने २ बार किया है। किसी भी भाषा के नामकरण का आधार उस भाषा विशेष का क्षेत्र होता है अथवा उसका गुण। वस्तुत: खड़ी शब्द बोली विशेष का गुणबोधक विशेषण ही है।

खड़ीबोली नाम के प्रयोग अर्थ एवं रूप के सम्बन्ध में विद्वानों में बड़ा मतभेद रहा है। लल्लूलाल जी तथा सदल मिश्र ने प्रेमसागर नासिकेतोपाख्यान एवं रामचरित में खड़ीबोली शब्द का ही प्रयोग किया है किन्तु प्रेमसागर के मुखपृष्ठ पर रोमन लिपि में "खरी" शब्द ही मुद्रित है। रोमन लिपि में ड़ र अभेद मूलक है। संभवत: खड़ी और खरी को समानार्थक समझने के भ्रम का आधार यही था। उर्दू से शुद्ध करके गढ़ी हुई कृत्रिम भाषाशैली होने का भ्रम सबसे पहले तासी महोदय ने शुरू किया। ई०बी० इस्विथ को भी कुछ ऐसा ही भ्रम हुआ और उन्होंने खड़ी को खरी मानकर उसका अर्थ दूजेनुइन और प्यार किया। केलॉग ने भी "खरी" के आधार पर उसे कहा। जान प्लैट्स ने इसे वल्गर बोली की संज्ञा प्रदान की। विदेशी विद्वानों के प्रभाव से पं० सुधाकर द्विवेदी तथा बदरी नारायण चौधरी प्रेमघन ने भी खड़ी को खड़ी का पर्याय समझ लिया। यद्यपि जान प्लैट्स के वलगर शब्द का अर्थ गंवारू नहीं था तथापि प्रोफेसर हक ने इसे गंवारी बोली कहा। फलत: सर सैयद अहमद खां और अन्य उर्दू समर्थक इसे काफी अर्से तक गंवारू ही कहते रहे। डा० टी० ग्राहम बेली ने खड़ी और खरी में स्पष्ट भेद किया और खड का अर्थ प्रचलित एवं सुस्थिर बताया। श्री माताबदल जायसवाल एवं या० शितिकंठ मिश्र बेली के मत से सहमत होते हुए भी क्रमश: परिष्कृत परिनिष्ठित तथा ओजपूर्ण, निर्मल अतिरिक्त अर्थ जोड़े हैं। डा० चन्द्रबली पाण्डेय ने इस्टविक द्वारा प्रयुक्त जेनुइन शब्द को ही

खड़ी बोली का वास्तविक पर्याय माना और `खरी` का खण्डन करके इसका अर्थ प्रकृत एवं ठेठ किया । व्रजभाषा समर्थकों ने व्रजभाषा में पाये जाने वाली कठोरवर्णता को लक्ष्य करके इसे कर्कश कटु नीरस और खटखटाहट वाली भाषा कहा और इस प्रकार खड़ी की सार्थकता सिद्ध की । लेकिन डा० धीरेन्द्रवर्मा ने हिन्दी भाषा का इतिहास के चतुर्थ संस्करण में व्रजभाषा की अपेक्षा वास्तव में यह बोली (खड़ीबोली) कुछ खड़ी खड़ी खलगती है । उद्धरण को पुस्तक में उड़ा दिया है । लगता है वे स्वयं अपने मत को अब ठीक नहीं समझते । डा० चटर्जी ने लिखा है - `इसे लोग खड़ी बोली कहने लगे थे जबकि व्रजभाषा अवधी आदि अन्य बोलियाँ पड़ी बोली कही जाने लगीं । बुन्देलखण्डी में खड़ी - बोली को `ढाढ़ बोली` (कामताप्रसाद गुरु ) तथा मारवाड़ी में ठाठ बोली (डा० बी०एस० पंडित) कहते हैं । किशोरीदास वाजपेयी ने खड़ी बोली में पायी जाने वाली `खड़ी पाई के आधार पर खड़ी शब्द की सार्थकता सिद्ध की है । वृपरल दास रेख्ता शैली को गिरि पड़ी मानकर उसी के विरोध स्वरूप इसे खड़ी मानते हैं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि `खड़ी ` शब्द को लेकर एक लम्बे अर्से तक विचार विमर्श होता रहा और इसके अनेक भ्रामक एवं परस्पर विरोधी अर्थ प्रस्तुत किये गये । सामान्यतया हम उपर्युक्त मत मतान्तरों की अर्थ के आधार पर अग्रलिखित रूप में रख सकते हैं –

१, उर्दू सापेक्ष (अर्थ - शुद्ध, प्रकृत, ठेठ, गंवारू)
२, व्रजभाषा सापेक्ष (कर्कश कटु नीरस तथा खड खड हरवाली
३, व्रज अवधी आदि ओ,औकारान्त पड़ी बोलियों के विरोध स्वरूप
४, रेख्ता (गिरी पड़ी) शैली के विरोध स्वरूप
५, प्राचीनता के आधार पर (अर्थ - शुद्ध सुस्थिर प्रचलित परिष्कृत परिपक्व ओजपूर्ण निर्मल)

उपर्युक्त विद्वानों के विचारों का मनोयोगपूर्वक अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि खड़ीबोली की निरुक्ति का प्रश्न लगभग अछूता ही रह गया है। उर्दू ब्रजभाषा के माधुर्य अथवा 'पड़ी' बोलियों के विरोध में खड़ीबोली नामकरण के सम्बन्ध में विद्वानों द्वारा बहुत कुछ टीका टिप्पणी की जा चुकी है। यहां उन सबके उल्लेख की आवश्यकता नहीं है। रही खड़ी शब्द के शुद्ध सुस्थिर प्रचलित, परिष्कृत परिपक्व ओजपूर्ण आदि अर्थों की बात। बहुत से विद्वान खड़ी शब्द को इतनी दूर तक घसीटते हैं के पक्ष में नहीं हैं। उनका कहना है कि खड़ी शब्द 'खड़ा' का स्त्री वाची रूप है और खड़ा अंग्रेजी पर्याय धातु है। से बनता है जिसका अर्थ है - मानक आदर्श। अतः प्रतीत होता है कि खड़ी शब्द अंग्रेजी का ही शब्दशः अनुवाद है। डा० सकुमार सेन ने इस सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करते हुए बताया है कि यह नाम सर्वप्रथम अंग्रेजों द्वारा फोर्ट विलियम कालेज में स्टैन्डर्ड कोलोकुअल लैंग्वेज के रूप में प्रयुक्त हुआ। डा० हरिश्चन्द्र शर्मा का मत है कि - यह (खड़ीबोली) नाम इस बोली के क्षेत्र में बाहर इसे कलकत्ते में दिया गया। यह नाम संभवतः 'स्टर्लिंग ढंग' या 'स्टैन्डर्ड ढंग' का शाब्दिक अनुवाद था जो लल्लूलाल, सदल मिश्र प्रभृति साहित्यकारों ने गिलक्राइस्ट महोदय के संकेत पर किया था।

खड़ीबोली का विकास

खड़ीबोली की व्युत्पत्ति --
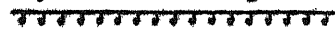
खड़ीबोली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों ने अधिकतर अनुमान एवं कल्पना से ही काम लिया है । फलस्वरूप उसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक भ्रामक एवं परस्पर विरोधी विचार प्रस्तुत किये गये हैं । भाषा विशेष के रूप में खड़ीबोली नाम व्रज अवधी, राजस्थानी आदि भाषाओं की अपेक्षा अर्वाचीन है । दिल्ली पर मुसलमान शासकों के आधिपत्य और इसमें अरबी फारसी शब्दों के घालमेल के कारण कुछ विद्वानों ने इसे उर्दू सापेक्ष बताया उर्दू से खड़ीबोली की उत्पत्ति बताने वाले प्रथम इतिहास लेखक गार्सां द तासी (१८६३ ई) थे[१]। तासी महोदय के उक्त कथन के फलस्वरूप परवर्ती विद्वानों को कल्पना करने का अच्छा अवसर प्राप्त हो गया और उन्होंने खड़ीबोली की उत्पत्ति उर्दू से मान ली । इस वर्ग के विद्वानों में एफ० ई०के० प्रोफेसर इक, राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द जगन्नाथदास रत्नाकर चंद्रधर शर्मा गुलेरी लाला भगवान दीन आचार्य कामताप्रसाद गुरु आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

पंडित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने कहा कि खड़ी या पक्की बोली का रेख्ता या वर्तमान गद्य पद्य को देखकर यह जान पड़ता है कि उर्दू रचना में फारसी अरबी तत्सम या तद्भवों को निकालकर संस्कृत या हिन्दी तत्सम और तद्भव रखने से हिन्दी बना ली गई । हिन्दी गद्य तथा पद्य खड़े रूप में मुसलमानी है विदेशी मुसलमानों ने आगरे, दिल्ली, सहारनपुर-मेरठ की पड़ी बोली को खड़ी बताकर लश्कर और स काज के लिये उपयोगी बनाया । लाला भगवान दीन के विचार से फारसी में ही कुछ व्रज कुछ बांगरू का टेक लगाकर बोली को खड़ा कर दिया गया और उसका नाम पड़ गया खड़ीबोली ।

प्रारम्भ में यह दिल्ली मेरठ तथा उसके आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती थी । देश में जब मुसलमानी साम्राज्य स्थापित हुआ और दिल्ली राजधानी घोषित कर दी गई तो फारसी भाषा विदेशियों का भारतीय जनता के साथ सम्पर्क बढ़ा । शनै: शनै: दिल्ली की स्थानीय बोली फारसी कोश से जीवन-दायिनी शव्द शक्ति संचित करने लगी । दोनों जातियों की सामाजिक एवं राजनीतिक मैत्री के साथ इसका प्रचार एवं प्रसार हुआ और स्थान भेद तथा प्रयोग भेद से इसके स्वरूप भेद भी होते गये । इस प्रकार साहित्य जगत में यह हिन्दी हिन्दवी हिन्दुई दक्खिनी, रेख्ता आदि आदि अनेक नामों से पहिचानी जाने लगी ।

इसके बोलचाल के रूप को हिन्दीस्थानी अथवा हिन्दुस्तानी अथवा सरल हिन्दी कहा गया ।

खड़ीबोली शव्द के अर्थ

जिस प्रकार नाम की नवीनता को देखकर कतिपय विद्वानों ने भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक धारणायें बना ली थीं उसी प्रकार नाम की विशिष्टता के आधार पर खड़ीबोली शव्द को भी विभिन्न अर्थ स्थिर करने क्ये यत्न किये गये । खड़ीबोली शव्द का प्रथम प्रयोग लल्लूलाल कृत प्रेमसागर तथा सदल मिश्र कृत नासिकोतोपाख्यान एवं गिल क्राइस्ट की हिन्दुस्तानी ग्रामर में प्रयुक्त हुआ । इष्ट इण्डिया कालेज हेलवरी के हिन्दुस्तानी अध्यक्ष ई०वी० इस्टवक ने खड़ा और खरा को समानार्थक मानकर प्रेमसागर के नवीन संस्करण के इटफ नोट कोटा में खड़ड़बोली के अर्थ इस प्रकार दिये हैं ।

डा० धीरेन्द्र वर्मा डा० श्यामसुन्दरदास , डा० सुनीतिकुमार चटर्जी प्रभृति भाषाविदों ने अनेक तर्कों एवं प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि शौरसेनी अपभ्रंश प्रसूत पश्चिमी हिन्दी के मेरठ, बिजनौर के निकट बोली जाने वाली रूप खड़ीबोली के वर्तमान साहित्यिक हिन्दी तथा उर्दू की उत्पत्ति हुई है ।

भारतवर्ष में आने पर बहुत दिनों तक मुसलमानों ने जनता से बातचीत और व्यवहार करने के लिये धीरे धीरे दिल्ली के अड़ोस पड़ोस की बोली सीखी । इस बोली में अपने विदेशी शब्द समूह को स्वतंत्रतापूर्वक मिला लेना इनके लिए स्वाभाविक था क्योंकि फारसी, अरबी शब्दों से मिश्रित किन्तु अपने देश की एक बोली में इन भिन्न भाषाभाषी विदेशियों से बातचीत करने में इन्हें सुविधा रहती होगी । उर्दू के आधार पर दिल्ली के निकट की बोली है । यह बोली आधुनिक साहित्यिक हिन्दी की भी मूलाधार है । अत: जन्म से उर्दू और आधुनिक साहित्यिक हिन्दी सगी बहने हैं । इसका नाम खड़ीबोली किस प्रकार पड़ा यह डा० सुनीति कुमार चटर्जी के शब्दों में है । हिन्दी , हिन्दुस्तानी या हिन्दुस्थानी और खड़ीबोली वगैरह भिन्न भिन्न नामों से कही जाने वाली केवल मूलभाषा है जो पश्चिमी देशों के अन्तर्गत एक बोली या भाषा या उपभाषा है । दिल्ली की बोली ' पास्तरत ' अर्थात राजधानी की बोली थी । मुसलमान राज्य शक्ति तथा उससे सम्बन्धित हिन्दुओं दारा व्यवहृत होने के कारण साहित्य की भाषा न होने पर भी बोलचाल की मुख्य अथवा प्रतिष्ठित भाषा होने से पीछे इसका नाम पड़ा खड़ीबोली ।

निष्कर्ष यही निकलता है कि खड़ी बोली विदेशियों की देन नहीं है न वह उर्दू से बनायी गयी है और न व्रजभाषा उसकी माता है । व्रजभाषा की तरह यह भी शौरसेनी अपभ्रंश या टक्क अपभ्रंश प्रसूत पश्चिमी हिन्दी की एक शाखा है ।

खड़ा - १ .

२ . खड़ा

खड़ीबोली

पादरीकेलाग ने भी खड़ीबोली को खरी बोली कहकर उसका अर्थ शुद्ध (किया है ।

पं० सुधाकर द्विवेदी और बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन ने सीधीबोली

की रामकहानी की भूमिका में कहा है कि हिन्दी और संस्कृत में र-उ-ल का अदल बदल हुआ करता है। इसलिये खरी बोली के स्थान पर खड़ी बोली हो गई। खरी खोटी बोलियों में से खरी खरी बोलियों को चुनकर खड़ीबोली बनी है। अपनी भाषा में भूल कर जो शब्द दूसरे आ गये हों उन्हें खोटे शब्द और उन्हें निकाल देने से खरे शब्दों की खरी बोली हो जाती है, इसी अर्थ मे ठेठ हिन्दी भी प्रचलित है। ठेठ हिन्दी का अथ है सूखी हिंदी जिसमें दूसरी भाषा के रस न हों। कामताप्रसाद गुरु ने हिन्दी के व्याकरण में लिखा है कि व्रजभाषा के ओकारान्त रूपों से मिलान करने पर हिन्दी के आकारान्त रूप खड़े जान पड़ते हैं। बुन्देलखण्ड में इस भाषा को ठाढ़ बोली तथा मारवाड़ी में ठाढ़ बोली (ग०वी०एम० पंडित) कहते हैं।

डा० धीरेन्द्र वर्मा ने भी कुछ ऐसी ही कल्पना की — "ब्रजभाषा की अपेक्षा यह बोली वास्तव में खड़ी बोली लगती है। कदाचित इसी कारण इसका नाम खड़ी बोली पड़ा।" किशोरीदसा वाजपेयी ने खड़ीबोली के सम्बन्ध में प्रकारान्तर से कामताप्रसाद गुरु की धारणा को ही दोहरा दिया। आप कहते हैं - मीठा जाता खाता आदि में जो खड़ी बोली पाई जाती है। आप अंत में देखते हैं कि वह दिल्ली के अतिरिक्त इसकी किसी भी दूसरी बोली में नहीं मिलेगी। व्रज में मीठो तथा अवधी में मीठ चलता है। मीठो जल, मीठ पानी। इसी तरह जात है, खात है आदि रूप होते हैं। इस प्रकार केवल कुलजन पद में ही नहीं यह खड़ी पाई आगे पंजाब तक चली गई है शिट्ठा पाणी नोवदा है सो इस खड़ी पाई के कारण इसका नाम खड़ी बोली बहुतही सार्थक है।

ब्रजरत्नदास ने खड़ी नाम तो पड़ी के वजन पर अवश्य आधारित माना किन्तु इन्होंने इस पड़ी को व्रज अवधी आदि भाषाओं का द्योतक न मानकर रेख्ता से सम्बन्ध बताया। उन्होंने लिखा कि मुसलमान गण ने जब हिन्दी का साहित्य रचना में उपयोग करना आरम्भ किया तो वे अपने छोड़े हुए देशों की भाषाओं के शब्द तथा भाव आदि का भी प्रयोग करने लगे और इसलिए इस मिश्रित भाषा का नाम रेख्ता रक्खा गया जिसका अर्थ मिली जुली या गिरी पड़ी है।

पंडित चन्द्रबली पाण्डेय ने खड़ीबोली की निरुक्ति शीर्षक लेख में अपने से पूर्व पूर्व स्थापित सभी मतों का तर्कपूर्ण खंडन करते हुए कहा कि खड़ी बोली का अर्थ है प्रकृत ठेठ या शुद्ध बोली । उनकी तर्क पद्धति इस प्रकार है -

खड़ा — १. बिना पका असिद्ध कच्चा आदि जैसे खड़ा चावल
२. समूचा पूरा जैसे खड़ा चना चबाना

पाण्डेय जी को पं० सुधाकर द्विवेदी या खड़ीबोली के लिये सीधी बोली शब्द प्रयोग तो मान्य है किन्तु ग्राहम बेली द्वारा प्रस्तुत टकसाली अथवा प्रचलित अर्थ से वे बिलकुल सहमत नहीं हुए ।

श्री मातावदल जायसवाल जी ने चन्द्रबली पाण्डेय के असिद्ध कच्चा बिना पका अर्थ का विरोध किया और खड़ीबोली को प्रचलित मानक हिन्दी बोली ( ) माना इसके प्रमाण में उन्होंने मोल्सवर्थ के मराठी शब्दकोश से खड़ी चाकरी, खड़ी किमत ,खड़ीतालीम आदि प्रयोग उद्धृत किये हैं । डा० शितिकंठ मिश्र जी ने भी कहा कि मौलिक प्रयोगों से इसका जो प्रचलित अर्थ निकलता है उसका रहस्य इसकी सर्वजन सुबोधता और सरलता ही है । अत: ग्राहम बेली के प्रचलित अर्थ को मान लेने में किसी प्रकार की आपत्ति न होनी चाहिये ।

वास्तव में खड़ीबोली शब्द ब्रजभाषा सापेक्ष नहीं है वह उर्दू या रेख्ता सापेक्ष है ।

—

१४ वीं शती तक खड़ी बोली का विकास
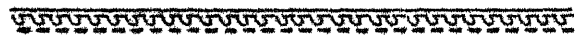
खड़ीबोली से तात्पर्य उस बोली से है जिसका परिनिष्ठित या मानक रूप हिन्दी प्रदेश में आज शिष्ट साहित्यिक भाषा के रूप में प्रयुक्त होता है। परिनिष्ठित हिन्दी का एक सरल रूप ही भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में व्यवहृत होता है। उस परिनिष्ठित हिन्दी का एक प्रादेशिक रूप है। यह प्रादेशिक रूप ही कई राज्यों की राज्य भाषा तथा संस्कृति भाषा है। हिन्दी प्रदेश में उत्तर प्रदेश बिहार मध्यप्रदेश हिमाचल प्रदेश, हरियाना राजस्थान और दिल्ली राज्य आते हैं इस मानक परिनिष्ठित बोली का मूलाधार खड़ीबोली है। इसलिये कभी कभी भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इसे खड़ी-बोली कहते हैं।

खड़ीबोली की व्युत्पत्ति —
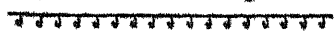
खड़ी बोली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों ने अधिकतर अनुमान तथा कल्पना से काम लिया है। फलस्वरूप इसकी उत्पत्ति के प्रश्न पर अनेक भ्रामक एवं विरोधी विचार प्रस्तुत किये गये हैं। भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से खड़ीबोली की उत्पत्ति ब्रजभूमि तथा उसके आस पास के भू भाग अर्थात् सूरसेन में बोली जाने वाली प्राकृत भाषा से मानी जाती है। शौरसेनी प्राकृत ही क्रमश: अपभ्रष्ट होती हुई विक्रम की ९वीं १० वीं शताब्दी में शौरसेनी अपभ्रंश के स्तर तक पहुंची और फिर उसका विकास ब्रजभाषा खड़ीबोली आदि के नामों से स्वतंत्र रूपों में हुआ। इस प्रकार यह अनुमान किया जाता है कि व्यवहार तथा बोलचाल की भाषा के रूप में खड़ी बोली ने मेरठ मुरादाबाद बिजनौर ,सहारनपुर और कुछ आस पास के जिलों में ग्यारहवीं बारहवीं शताब्दी में ही अपना स्थान बना लिया होगा यद्यपि यह भी बात ठीक है कि इसके साथ साथ अपभ्रंश भाषायें भी

समानान्तर रूप से लगभग चौदहवीं शताब्दी तक चलती रही ।[१] मुसलमान शासकों का अधिपत्य अधिक समय तक भारत में था । मुसलमानों की भाषा उर्दू तथा उससे मिली जुली अरबी फारसी थी इसलिये कुछ विद्वानों ने खड़ीबोली की उत्पत्ति उर्दू से स्वीकार की है ।

उर्दू से खड़ी बोली की उत्पत्ति बताने वाले प्रथम इतिहास लेखक गार्सां द तासी हैं ।[२] इनके कथनानुसार खड़ीबोली का विकास सीधे उर्दू से हुआ जिसके फलस्वरूप इनके परवर्ती विद्वानों को कल्पना करने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ ।

पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का कथन है कि यह खड़ीबोली या पक्की बोली या रेख्ता बोली या वर्तमान गद्यमय को देखकर यह जान पड़ता है कि उर्दू रचना में फारसी अरबी तत्सम या तद्भवों को निकाल कर संस्कृत या तत्सम और तद्भव से हिन्दी मान ली गई हिन्दी गद्य भाषा लल्लू जी के समय से प्रारम्भ होती है । पुरानी हिन्दी गद्य तथा पद्य खड़े रूप में मुसलमानी है विदेशी मुसलमानों ने आगरे दिल्ली सहारनपुरमेरठ पड़ी को खड़ी बोली बनाकर लश्कर तथा समाज के लिये उपयोगी बनाया ।[७]

----

१. खड़ीबोली का उद्भव तथा विकास प्रो० आनन्द नारायण शर्मा, पृष्ठ ३६ (गद्य साहित्य का उद्भव तथा विकास में किया हुआ यह लेख डा० शम्भूनाथ पाण्डेय, पृष्ठ से १६५२)

२. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास-सातवां संस्करण, पृ० ३२८

३. शिवप्रसाद हिन्दी सलेक्शन भाग २ १२६७ ,डा० आशागुप्ता , खड़ीबोली काव्य में अभिव्यंजना । १६६१ पृ० ३

४. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी पुरानी हिन्दी , पृ० १०७
   या० शीतकंठ मिश्र खड़ीबोली का आन्दोलन ,सं० २०१३ पृ० ६

५. भगवान दीन- हिन्दुस्तानी (पत्रिका) १६४६ ई०, पृ० २५१

६. कामताप्रसाद गुरु- हिन्दी व्याकरण, पृ० में २५

७. भगवान दीन हिन्दुस्तानी पत्रिका, १६४६,पृ० २५१

ब्रज तथा बांगरू का टेक लगाकर बोली को खड़ा किया गया है और उसी का नाम पड़ गया खड़ीबोली[1]। भारतीयों पर मुसलमानों का आधिपत्य बहुत दिनों तक रहा तथा इसका केन्द्र दिल्ली रहा । अत: अरबी फारसी तुर्की बोलने वाले मुसलमानों ने जनता से बातचीत करके तथा व्यवहार करने के लिए धीरे धीरे दिल्ली के आस पास की बोली सीखी । इस सीखी हुई बोली में अपने विदेशी शब्द समूह को स्वतंत्रता पूर्वक मिला लेना इनके लिये स्वाभाविक था क्योंकि इन्हें भिन्न भिन्न भाषा भाषियों से बात चीत करने में सुविधा रहती होगी । उर्दू भाषा का मूलाधार दिल्ली तथा दिल्ली के निकट की बोली है । यह बोली आधुनिक साहित्यिक हिन्दी का मूलाधार है । अतन जन्म से उर्दू तथा हिन्दी का अटूट संबंध है । इसका नाम खड़ीबोली पड़ता तथा किस प्रकार पड़ा यह डा० सुनीतिकुमार चटर्जी के मत से स्पष्ट हो जाता है । हिन्दी हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्थानी तथा खड़ीबोली आदि भिन्न भिन्न नामों से कही जाने वाली केवल मूलभाषा जो परिचय की श्रेणी के अन्तर्गत एक बोली या भाषा या उपभाषा मात्र है । दिल्ली की बोली पाएतात अर्थात् राजधानी की बोली थी । मुसलमान राज्यशक्ति तथा उससे संबंधित हिन्दुओं द्वारा व्यवहृत होने के कारण साहित्य की भाषा न होने पर भी बोलचालको मुख्य अथवा प्रतिष्ठित भाषा होने से इसका नाम खड़ीबोली पड़ा ।[2]

डा० धीरेन्द्र वर्मा डा० श्यामसुंदरदास, डा० धीरेन्द्र वर्मा डा० श्यामसुंदरदास, डा० सुनीति कुमार चटर्जी प्रभृति विद्वानों ने अपने तर्कों से सिद्ध कर दिया है कि खड़ी बोली शौरसेनी अपभ्रंश प्रसूत पश्चिमी हिन्दी के मेरठ विजनौर के निकट बोलेजाने वाले एक रूप खड़ी बोली से साहित्यिक हिंदी की उत्पत्ति हुई । उपर्युक्त तर्कों को आधार बना कर निष्कर्ष यही निकाला जा सकता है कि खड़ीबोली की उत्पत्ति विदेशी भाषा से नहीं हुई और न इसके उत्पादक उर्दू तथा ब्रजभाषा है । बल्कि शौरसेनी अपभ्रंश या टक्क अपभ्रंश प्रसूल पश्चिमी की एक शाखा है । प्रारम्भ में यह दिल्ली मेरठ तथा उसके आस पास बोली जाती थी । जब देश में मुसलमानी राज्य हुआ तथा दिल्ली राजधानी घोषित की गई तो विदेशियों का सम्पर्क भारतीय जनता से हुआ । धीरे धीरे दोनों भाषायें मिश्रित होने लगी जैसा कि स्वाभाविक है कि विदेशी भारतीय भाषा बोलने

में विदेशी शब्द उर्दू फारसी का प्रयोग कर ही देगा और भारतीय लोग भी विदेशी भाषा बोलने का प्रयास करेंगे । दोनों जातियों का सामाजिक राजनीतिक आदि मैत्री भाव बढ़ासाथ ही साथ इसका प्रसार और प्रचार हुआ । फलस्वरूप स्थानभेद तथा प्रयोग भेद से स्वरूप भेद होते गये । इस साहित्य जगत में यह हिन्दी हिन्दवी दक्खिनी रेख्ता उर्दू आदि अनेक नामों से पहचानी जाने लगी । इसके बोलचाल के रूप को हिन्दुस्थानी अथवा हिन्दुस्तानी अथवा सरल हिन्दी भी कहा जाता है ।

खड़ीबोली किस अर्थ का घोतक है ?

खड़ी बोली किस अर्थ का घोतक है अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है फिर भी निम्नलिखित विद्वानों ने खड़ीबोली का अर्थ इस प्रकार दिया है --

१२ वीं शताब्दी के अन्ततक तो हिन्दू लोगों ने दरबारी भाषा की ओर ध्यान देना आरम्भ कर दिया था । इसे लोग खड़ी बोली कहने लगे थे । जबकि व्रजभाषा अवधी आदि अन्य बोलियाँ पड़ी बोली (गिरी हुई बोली) कही जाने लगी थीं । [१]

म्लेच्छ भाषा खड़ी बोली उर्दू से बनायी गई है । [२]

अर्थात् हिन्दी मुसलमानी भाषा है । हिन्दुओं की रची हुई जो पुरानी कविता मिलती है । [२] अर्थात् पड़ी बोली में पायी जाती है । अम्बिका-प्रसाद वाजपेयी का कथन है कि खड़ीबोली या पक्की बोली या रेख्ता या वर्तमान हिन्दी के आरम्भ काल का गद्य तथा पद्य को देखकर यही लगता है कि उर्दू रचना में से फारसी अरबी में से तत्सम तद्भवों को निकालकर संस्कृत या हिन्दी तत्सम और तद्भव रखने से हिन्दी बना ली गई है । [३]

---

१. भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी १९५७, पृ० २१६

२. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी - पुरानी हिन्दी सं० २०५, पृ० १०७-८

३. वही

फारसी में कुछ व्रज और कुछ बांगरू तत्व लगाकर बोली को खड़ा कर दिया गया और उसका नाम पड़ गया खड़ीबोली ।[१]

व्रजभाषा की अपेक्षा यह बोली खड़ी सी लगती है । कदाचित उसका नाम खड़ीबोली पड़ा ।[२]

सर्वप्रथम खड़ी-खरी बोली का प्रयोग सदल मिश्र का ही है -- खड़ी बोली भारतवर्ष की निराली बोली में है ।[३]

ईस्ट इंडिया कालेज के हिन्दुस्तानी अध्यक्ष ई० पी० इस्टविक ने खड़ा और खरा को समानार्थक मानकर प्रेमसागर के नवीन संस्करण (१८५१) के हर्ट-फार्डकोश में खड़ीबोली का अर्थ इस प्रकार किया है[४] --

खड़ा - अ

खरा - ब खरा

खड़ीबोली -

कैलाग - शुद्ध बोली के अर्थ में प्रयोग किया है --

वास्तव में खड़ीबोली इधर की ग्रामीणों की शुद्ध सम्पूर्ण बोली है जिसे खड़ीबोली की अपेक्षा खरीबोली कहना अधिक उपयुक्त होगा ।[५]

खड़ा --

बिना पक्का, असिद्ध, कच्चा जैसे खड़ा चना । आगरे जिले में ऐसी बोली

१, भगवान दीन हिन्दुस्तानी पत्रिका - १९४६ - डा०आशा गुप्ता के लेख से उद्धृत

२, हिन्दी भाषा का इतिहास- १९४९, पृ० ६४
हिन्दी गद्य का उद्गम और विकास - शम्भुनाथ पाण्डेय, डा० श्रीमती सरोजनी शुक्ला ।

३ हिन्दी गद्य के प्रथम चार आचार्य नामक निबंध, पृ० ५४

४, इस्टविक (१८५९ प्रेमसागर शव्दकोश

५, कृष्णचन्द्र शर्मा - कौरवी तथा राष्ट्रभाषा-हिन्दी राजर्षि अभिनन्दन ग्रन्थ

को जो तू तेरे आदि भद्दे कर्कस तथा कठोर व्यवहार के कारण अखरे ठाड़ी बोली कहते हैं ।[१] बुन्देलखण्ड में भी खड़ीबोली को ठाढ़ीबोली या तुकी कहते हैं । मारवाड़ी में इसे ठाठबोली कहते हैं ।

श्री मातावदल जायसवाल ने खड़ीबोली का सार्थक और समीचीन अर्थ प्रचलित बोली को ही सिद्ध करते हैं ।[२]

डा० विश्वनाथ ने खड़ीबोली को भाषा सिद्ध करने के लिये इस प्रकार का तर्क प्रस्तुत किया है —

यह ठीक है कि आगरा ब्रजभाषा क्षेत्र में है । यहां उस समय ब्रजभाषा बोली जाती थी । और अब भी बोली जाती है । पर साथ ही यह भी ठीक है कि आगरा बहुत पहले से ही उस भाषा का केन्द्र बन चुका था जो दिल्ली की प्रचलित भाषा से बहुत दूर नहीं थी और एक ही साथ जन साधारण शिष्ट समाज के व्यावहारिक जीवन में प्रयुक्त होने के कारण शनैः शनैः एक स्टैण्डर्ड रूप ग्रहण करती जा रही थी । अंग्रेजी के शब्द की व्युत्पत्ति के मूल में भी धातु है - जिसका अर्थ है खड़ा होना ।[३]

इस प्रकार लल्लूलाल जी ने खड़ीबोली का जो थोड़ा सा वर्णन किया है उससे और उसके प्रयोग से संकेतित होता है कि उनकी दृष्टि में —

(अ) खड़ीबोली ब्रजभाषा और रेखता दोनों से ही भिन्न एक बोलचाल की भाषा है ।

(ब) वह गंवारी भाषा नहीं वरन् एक व्यावहारिक तथा परिनिष्ठित भाषा है जिसमें साहित्यिक ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं ।

----

१. डा० विश्वनाथ प्रसाद आगरे की खड़ीबोली - भारतीय साहित्यिकी पृष्ठभूमि, पृ० ४८७

२. खड़ीबोली नाम का इतिहास - हिन्दी अनुशीलन , वर्ष ७ अंक १

३. डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र - खड़ीबोली भारतीय साहित्य , सं० १९५६, पृ० ५४

(स) उसमें घामनी भाषा के शब्दों को जोड़ से रेखता का रूप हो जाता है और छोड़ देने से हिन्दवी का ।

(द) वह दिल्ली तथा आगरे की भाषा है ।

डा० शैलाशचन्द्र भाटिया ने खड़ीबोली को दिल्ली आगरे तक सीमित नहीं रखा बल्कि साहित्यिक भाषा के रूप में उसका प्रसार आगरा तक सिद्ध किया है ।[१]

विभिन्न विद्वानों ने खड़ीबोली शब्द को लेकर कई कल्पनायें कर डालीहैं । इनको हम ५ वर्गों में विभाजित कर सकते हैं - जिन्होंने खड़ीबोली का विभिन्न नाम दिया है -

१. प्रथम वर्ग - खड़ी तथा पड़ी नाम इन विद्वानों ने दिया है - पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, अम्बिका प्रसाद वाजपेयी, जगन्नाथदास रत्नाकार, डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, भगवानदीन, डा० धीरेन्द्र वर्मा आदि विद्वानों ने खड़ी बोली खड़ी तथा पड़ी नाम दिया है ।

२. द्वितीय वर्ग खड़ी- खरी (विशुद्ध)

इस्टविक, कैलाग, कृष्णाचन्द्र शर्मा, चन्द्रबली पाण्डेय, आदि विद्वानों ने खड़ीबोली को खड़ी तथा खरी के तरह संकेत किया है ।

३. तृतीय वर्ग - खड़ी - गंवारी बोली

डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, आगरा गजेटियर

४. चतुर्थ वर्ग - प्रचलित भाषा

ग्राहम वैली तथा श्री मालाबदल जायसवाद जी ने खड़ीबोली को गंवारी आदि भाषा न मानकर प्रचलित भाषा सिद्ध किया है ।

५. पांचवां वर्ग - खड़ी बोली भाषा

गि

गिल क्राइस्ट डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र आदि विद्वानों ने खड़ीबोली को भाषा का रूप दिया है ।

हिन्दी साहित्य में खड़ीबोली की परंपरा —

हिन्दी साहित्य के प्राचीनतम गद्य की परम्परा के मूल स्रोत हमें संस्कृत और प्राकृत की रचनाओं में मिलते हैं । संस्कृत में गद्य वैदिक संस्कृत के साहित्य से ही मिलने लगता है । वैदिक काल में गद्य की रचनायें हुई और उसका महत्व-पूर्ण स्थान भी था । लौकिक संस्कृत में गद्य की प्रगति नहीं मिलती । रामायण महाभारत में भी पद्य की प्रधानता है परन्तु इसके बाद के साहित्य में गद्य का रूप ही देखने को मिलता है । इसे बाद प्राकृत तथा पालि में हमें खड़ी बोली का आभास जैन तथा बौद्ध धर्म की रचनाओं से होने लगता है । प्राकृत अप-भ्रंश की रचनायें तो हिन्दी साहित्य के प्राचीनतम खड़ी बोली रचनाओं की जन्म-दात्री कही जा सकती है ।

अपभ्रंश की नवी शताब्दी में रचित कुवलयमाला ग्रन्थ में हमें खड़ीबोली के छोटे छोटे वाक्य देखने को मिलते हैं । कुवलयामाला में कथासार (७७८३) में वर्णित मध्यदेश से आये हुए एक बनिये के मुख से " तेरे मेरे आऊं " यह गढ़ा हुआ वाक्यांश नहीं है यह हो सकता है कि लेखक के लिये यह केवल ध्वनि हो । फिर इस ध्वनि से हिन्दी के दो सर्वनाम तेरे मेरे एक क्रियापद आऊं का सुनायी देना इस बात की तरफ संकेत दे रहा है कि उस समय मध्यप्रदेश में हिन्दी बोली जाती थी ।[१] कुवलयमाला के कुछ उदाहरण डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य के आदिकाल में उद्धृत किये हैं । वे लिखते हैं कि —

---

१. डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, मकरन्द, प्र०सं० पृ० ३

"नवीं शताब्दी की कुवलयमाला कथा में कुछ ऐसे प्रसंग हैं जिनमें बोलचाल की तत्कालीन प्रचलित भाषा के सुन्दर नमूना गये हैं।"[1]

खड़ीबोली की अनाशक्त प्रवृत्ति के उदाहरण वीरगाथा काल के साहित्य में भी मिलते हैं। विक्रम की १२ वीं शताब्दी के जैन आचार्य हेमचन्द्र का व्याकरण में उद्धृत अपभ्रंश के निम्नलिखित दोहे में यह प्रवृत्ति स्पष्टत: देखी जा सकती है --

भल्ला हुआ जु मारिया व हिजि म्हार रु
लज्जे अंतु वयंसि भउ जर भग्गा घर स्सु।।

इसमें भल्ला हुआ मारिया म्हारा भग्गा आदि शब्द खड़ी बोली का पूर्वाभास कराते हैं। तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के नरपति नाल्ह कवि बीसलदेव रासों नामक ग्रन्थ में भी भी खड़ी बोली के अस्तित्व के प्रमान हैं।

१. मोती का भाषा विया
२. दीधाताजी उतिम ठाइं
३. चित्त फाटया मन उपत्या

इसके अतिरिक्त हिन्दी के कुछ प्राचीन ग्रन्थों का भी उल्लेख मिलता है - जैसे पुष्प कवि ने ७१५ ई० अलंकार की सादा दोहरों में, अब्दुल्ला ऐराकीने ८७०ई के लगभग कुरान का तर्जुमा हिन्दी में "मसउदसादसलमा" ने लगभग ६७० ई० के हिन्दी का एक दीवन और कालिंजर के रामचन्द ने १०३३ ई० में सुलतान महमूद की प्रशंसा में एक हिन्दी शैर लिखा था।[2]

किन्तु अब यह उपर्युक्त सभी रचनायें उपलब्ध नहीं हैं। हिन्दी साहित्य में खड़ी बोली का निश्चित प्रयोग नाथों द्वारा प्रारंभ होता है। नाथों का

---

१. हिन्दी साहित्य का आदिकाल, आचार्य द्विवेदी, पृ० १६
२. गद्य साहित्य का उद्गम तथा विकास से हिन्दी का प्रारम्भिक गद्य साहित्य नामक निबंध - बा० गुलाबराय, पृ० २२

धार्मिक केन्द्र जालंधर आकारान्त खड़ी बोली अथवा पूर्वी पंजाबी में पड़ता था इसलिये धर्म प्रचार हेतु सर्वप्रथम गोरखनाथ के अनुयायी नाथों ने इस भाषा का प्रयोग किया है । जिसका मूलाधार दिल्ली और मेरठ-बिजनौर की खड़ी बोली थी और जिससे पूर्वी पंजाबी हरियाना राजस्थानी राजस्थानी क्रम के रूप भी चित्रित हैं ।

गोरखनाथ चौरंगीनाथ चन्दवर नाथ आदि अन्य नाथों के पदों में आदिकालीन खड़ीबोली के नमूने मिलते हैं ।

परन्तु खड़ीबोली का जैसा व्यापक तथा व्यावहारिक रूप अमीर खुसरो बिउन की चौदहवीं शताब्दी के कवि है । उन्होंने ब्रजभाषा के साथ साथ खालिस खड़ीबोली में साहित्य सृजन किया है ।

खुसरों की भाषा में खड़ीबोली का साफ सुथरा रूप मिलता है । यथा-

एक कहानी मैं रहूं तु सुनने मेरे पूत

बिन परे वह उड़ गया बांध गले में सूत

डा० जगन्नाथ शर्मा के शब्दों में कहा जा सकता है कि खुसरों ने आधुनिक खड़ी बोली बोली की जड़ जमायी है ।

अध्याय --२

कबीर के पूर्व खड़ीबोली के कवि एवं काव्य

गोरखनाथ

विक्रम संवत की दसवीं शताब्दी में भारतवर्ष के महान सन्त गुरु गोरखनाथ का जन्म हुआ । शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमामण्डित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ । भारतवर्ष के कोने कोने में उनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं । भक्ति आंदोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ का योग मार्ग ही था । भारतवर्ष की ऐसी कोई भी भाषा नहीं है जिनमें गोरखनाथ सम्बन्धी कहानियां न पाई जाती हों । इन कहानियों में परस्पर ऐतिहासिक विरोध बहुत अधिक है किन्तु फिर भी इससे एक बात अत्यन्त स्पष्ट हो जाती है कि गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े नेता थे । उन्होंने जिस धातु को छुआ वही सोना हो गया । दुर्भाग्यवश इस महान धर्मगुरु के विषय में ऐतिहासिक कही जाने वाली बातें बहुत कम रह गई । दन्त कथाएं केवल उनके और उनके द्वारा प्रवर्तित योग मार्ग के महत्व प्रचार के अतिरिक्त कोई विशेष प्रकाश नहीं देतीं ।

उनके जन्म स्थान का कोई निश्चित पता नहीं चलता । परम्परायें अनेक प्रकार के अनुमान को उत्तेजना देती हैं और इसलिये भिन्न-भिन्न अन्वेषकों ने अपनी रुचि के अनुसार भिन्न भिन्न स्थानों को उनका जन्मस्थान मान लिया है । योगि सम्प्रदाया विष्कृति में उन्हें गोदावरी तीर के किसी चंद्रगिरि में उत्पन्न बताया गया है । नेपाल दरबार लाइब्रेरी में एक परवर्ती बाल का गोरक्ष सहस्त्र नाम स्तोत्र नामक छोटा सा ग्रन्थ है । उसमें एक श्लोक इस आशय का है कि दक्षिण दिशा में कोई बडव नामक देश है वहीं महामंत्र के प्रभाव से महाबुद्धिशाली गोरक्षनाथ प्रादुर्भूत हुये थे । संभवत: इस श्लोक में उसी परंपरा की ओर इशारा है जो योगि सम्प्रदाय विष्कृति में पाई जाती है । श्लोक में का बड़व शायद गोदावरी तीर के प्रदेश का व्याचक हो सकता है । क्रुक्स ने एक परम्परा का उल्लेख किया है जिसे ग्रियर्सन ने भी उद्धृत किया है । जिसमें कहा गया है कि गोरक्षनाथ सत्ययुग में पंजाब के पेशावर में त्रेता में गोरखपुर में द्वापर में द्वारका के

भी आगे कुरमूज में और कलिकाल में काठियावाड़ की गोरखमढ़ी में प्रादुर्भूत हुए थे। बंगाल में यह विश्वास किया जाता है कि गोरक्षनाथ उसी प्रदेश में उत्पन्न हुए थे। नेपाली परंपराओं से अनुमान होता है कि वे पंजाब से चलकर नेपाल गये थे। गोरखपुर के महन्तने ब्रिग्स साहब को बताया था कि गुरु गोरखनाथ टिला (झेलम पंजाब) से गोरखपुर आए थे। नासिक के योगियों का विश्वास है कि वे पहले नेपाल से पंजाब आए थे और बाद में नासिक की ओर गये थे। टिला का प्राधान्य देखकर ब्रिग्स ने अन्दाज लगाया है कि वे संभवत: पंजाब के निवासी रहे होंगे। कच्छ में प्रसिद्ध है कि गोरक्षनाथ के शिष्य धर्मनाथ पेशावर से कच्छ गये थे। ग्रियर्सनने इन्हें गोरखनाथ का सतीर्थ कहा है। ग्रियर्सन ने अंदाज लगाया है कि गोरक्षनाथ संभवत: पश्चिमी हिमालय के रहने वाले थे। इन्होंने नेपाल को आर्य अवलोकितेश्वर के प्रभाव से निकालकर शैव बनाया था। ब्रिग्स का अनुमान है कि गोरखनाथ पहले वज्रयानी साधक थे बाद में शैव हुए थे। तिब्बती परम्परायें बहुत परवर्ती हैं और विकृतरूप में उपलब्ध हैं। उनको बहुत अधिक निर्भर योग्य समझना भूल है। गोरखनाथ निश्चित रूप से ब्राह्मण जाति में उत्पन्न हुए थे और ब्राह्मण,वातावरण में बढ़े हुए थे। उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ भी शायद ही कभी बौद्ध साधक रहे हों।

वस्तुत: गोरक्षनामी साधना का मूल सुर है जिसकी चर्चा इसी प्रसंग में आगे करने जा रहे हैं।

गोरक्षनाथ के नाम पर बहुत ग्रन्थ चलते हैं। जिनमें अनेक तो निश्चित रूप से परवर्ती तथा संदेहास्पद हैं। सब मिलाकर केवल इतना ही कहा जा सकता है गोरक्षनाथ की कुछ पुस्तकें नाना भाव से परिवर्तित परिवर्धित और विकृत होती हुई आज तक चली आ रही है। उनमें कुछ न कुछ गोरखनाथ की वाणी जरूर रह गई है। पर सभी की सभी प्रकाशित नहीं हैं। इन पुस्तकों पर से कई विद्वानों ने गोरक्षनाथ का स्थान और कालनिर्णय करने का प्रयत्न किया है। वे सभी प्रयत्न निष्फल सिद्ध हुए हैं। कबीरदास के साथ गोरखनाथ की बातचीत हुई थी और उस

बात चीत का विवरण बताने वाली पुस्तक उपलब्ध है इन पर एकबार ग्रियर्सन तक ने अनुमान किया था कि गोरखनाथ चौदहवीं शताब्दी के हैं। गुरु नानक के साथ भी उनकी बातचीत का विवरण मिल जाता है। सत्रहवीं शताब्दी के जैन दिगंबर सन्त बनारसीदास के साथ शास्त्रीय शास्त्रार्थ होने का प्रसंग भी सुना जाता है। टैसिटरी ने बनारसीदास जैन की एक पुस्तक गोरख की ? वचन का भी उल्लेख किया है। इन बात चीतों का ऐतिहासिक मूल्य बहुत कम है। ज्यादा से ज्यादा इनकी व्याख्या सांप्रदायिक महत्व प्रतिपादन के रूप में ही की जाती है। या फिर आध्यात्मिक रूप में इनकी व्याख्या यों की जा सकती है कि परिवर्ती सन्त ने ध्यान बल से पूर्ववर्ती सन्त के उपदिष्ट मार्ग से अपने अनुभवों की तुलना की है। परन्तु उन पर से गोरखनाथ का समय निकालना निष्फल प्रयास है। कबीरदास के साथ तो मुहम्मद साहब की बातचीत का व्यौरा भी उपलब्ध है तो क्या इस पर से यह अनुमान किया जा सकता है कि कबीरदास और हजरत मुहम्मद समकालीन थे। वस्तुत: गोरखनाथ को दसवीं शताब्दी का परवर्ती नहीं माना जा सकता है।

गोरक्षनाथ तथा उनके द्वारा प्रभावित योग मार्गीय ग्रन्थों के अवलोकन से स्पष्ट रूप से यह पता चलता है कि गोरक्ष नाथ ने योग मार्ग को एक बहुत ही व्यवस्थित रूप दिया है। उन्होंने शैव प्रत्यभिज्ञादर्शन के सिद्धान्तों के आधार पर बहुधाविस्त्रास्त कायायोग के साधनों को व्यवस्थित किया है, आत्मानुभूति तथा शैव परंपरा सामंजस्य से चक्रों की संख्या नियत की उन दिनों अत्यन्त प्रचलित वज्रयानी साधना के पारिभाषिक शब्दों के सांस्कृतिक अर्थ को बलपूर्वक पारमार्थिक अर्थ दिया और आब्राह्मण उद्गम से उद्भूत और संपूर्ण ब्राह्मण विरोधी साधन मार्ग को इस प्रकार संस्कृत किया कि उसका रूढ़ि विरोधी रूप ज्यों का त्यों बना रहे परन्तु उसकी अशिक्षा जन्म प्रमादपूर्ण कड़ियां परिष्कृत हो गईं। उन्होंने लोक भाषा को भी अपने उपदेशों का माध्यम बनाया। यद्यपि उपलब्ध सामग्री से यह निर्णय करना बड़ा कठिन है कि उनके नाम पर चलने वाली लोक भाषा की पुस्तकों में कौन सी प्रामाणिक हैं और उनकी भाषा का विशुद्ध रूप क्या है।

तथापि इसमें संदेह नहीं कि उन्होंने अपने उपदेश लोकभाषा में प्रचारित किये हैं कभी कभी इन पुस्तकों की भाषा पर से भी उनके काल का निर्णय करने का प्रयास किया गया है। गोरखनाथ की लिखी हुई कही जाने वाली निम्न संस्कृत पुस्तकें मिलती हैं। भिन्न भिन्न ग्रन्थ सूचियों और आलोचनात्मक अध्ययनों से संग्रह भर कर लिया है।

आमनस्क

एक प्रति बड़ौदा लाइब्रेरी में है। गो०सि०स० में बहुत से वचन उद्धृत हैं।

अमरौधशासनम—

श्री मन्महामाहेश्वराचार्य की सिद्ध गोरखनाथ विरचितम। यह पुस्तक काश्मीर संस्कृत ग्रन्थावली में प्रकाशित हुई है। महामहोपाध्याय पं० मुकुन्दराम शास्त्री ने इसका संपादन किया है। यद्यपि यह पुस्तक सन् १९१८ ई० में ही छप गई थी परन्तु आश्चर्य यह है कि गोरक्षनामी साहित्य के अध्ययन करने वालों ने इनकी कोई चर्चा नहीं की है। यह पुस्तक बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसमें गोरक्षनाथ के सिद्धान्तों का सूत्ररूप में संकलन है। यह पुस्तक हठयोग की साधना शैवागमों में संबंध और जोड़ती है। आगे इसके प्रतिपदित सिद्धान्तों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

३. अवधूत गीता - गो०सि०स० पृ० ७५ में गोरक्षकृत कही गई है।
४. गोरक्षकल्प (फर्कुहर) ब्रिग्स
५. गोरक्ष कौमुदी ,,
६. गोरक्ष गीता - (फर्कुहर)
७. गोरक्ष चिकित्सा (आफ्रेस्ट)
८. गोरक्षपन्चय (ब्रिग्स)

९. गोरक्ष पद्धति —

दो सौ संस्कृत श्लोकों का संग्रह है। बंबई से महीधर शर्मा की हिन्दी टीका सहित छपी है। इसका प्रथम शतक गोरक्ष शतक नाम से कई बार छप चुका है। इसी का नाम गोरक्षज्ञान भी है।

गोरक्ष शतक –

इसकी एक प्रति पूना से छपी मिली है। ब्रिग्स ने अपनी पुस्तक में इसको रोमन लिपि में छापा है और उसका अंग्रेजी अनुवाद भी किया है। इनके मत से यह पुस्तक गोरक्षनाथ की सच्ची रचना जान पड़ती है। डाक्टर प्रबोध चंद्र बागची ने कौलावलि निर्णय की भूमिका में नेपाल दरबार लाइब्रेरी के एक हस्त-लिखित ग्रन्थ का ब्यौरा दिया है। नेपाल वाली पुस्तक छपी हुई पुस्तकों से भिन्न नहीं है।

इस पर दो टीकायें हुई हैं। एक शंकर पंडित की दूसरी मथुरानाथ शुक्ल की। दूसरी टीका का नाम टिप्पणा है।(ब्रिग्स) इसी पुस्तक के दो नाम और भी प्रच-लित हैं। १. ज्ञान प्रकाश २. ज्ञानप्रकाश शतक (आफ्रेक्ट)

गोरक्ष शास्त्र

गोरक्ष संहिता –

प्राय: सभी सूचियों में इस पुस्तक का नाम पुस्तक को सं० १८६७ में छपाया था। परन्तु अब यह पुस्तक खोजे नहीं मिलती है। डा० बागची ने कौलावलि निर्णय की भूमिका में नेपाल दरबार लाइब्रेरी में पाई गई प्रति में से कुछ अंश उद्धृत किया है। पुस्तक के कितने ही श्लोक हूबहू मत्स्येन्द्र नाथ के अकुल वीर तंत्र नामक ग्रन्थ में मिल जाते हैं। और दोनों का प्रतिपादन भी एक ही है। इस प्रकार यह पुस्तक काफी महत्वपूर्ण है।

चतुरशीत्यासना

(आफ्रेक्ट)

ज्ञानप्रकाश शतक

ज्ञान शतक

ज्ञानामृत योग (आफ्रेक्ट)

१७. नाडी ज्ञानप्रदीपिका (आफ्रेक्ट)

१८ महार्थ मंजरी

यह पुस्तक काश्मीर संस्कृत ग्रन्थावलि (१०११) में छपी है। यह किसी महश्वरानंद नाम की लिखी हुई है। काश्मीरी परम्परा के अनुसार ये गोरक्षनाथ ही हैं। पुस्तक म०म०प० मुकुन्दराम शास्त्री ने संपादित की है। इस पर भी लिखा है - "गोरक्षापर पर्याय श्री मन्महेश्वरानंदायामि विरचिता" पुस्तक की भाषा काश्मीरी अपभ्रंश है परन्तु ग्रन्थकार ने स्वयं परिमल नामक टीका लिखी है। विषय ३६ तत्वों की व्याख्या है। नाना दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।

(१९) योगचिन्तामणि (आफ्रेक्ट)

(२०) योगमार्तण्ड ,,

(२१) योगबीज गो०सि०स० में अनेक वचन उद्धृत हैं।

(२२) योगशास्त्र

(२३) योगसिद्धासन पद्धति :- (आफ्रेक्ट)

(२४) विवेक मार्तण्ड — इस पुस्तक के कुछ वचन गोरक्षसिद्धान्त संग्रह में हैं उसके श्लोक गोरक्ष शतक में पाये जाते हैं। इसीलिए यद्यपि इसे रामेश्वर भट्ट का बताया गया है तो भी आफ्रेक्ट के अनुसार इसे गोरक्षकृत ही मानना उचित है।

(२५) श्रीनाथ सूत्र गो०मि०सं०में कुछ वचन हैं

(२६) सिद्ध सिद्धान्त पद्धति - ब्रिग्स ने नित्यानन्द रचित कहा है पर अन्य सबने गोरखनाथ रचित बताया है। गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह में भी इसे नित्यनाथ विरचिता कहा गया है।

(२७) हठयोग (आफ्रेक्ट)

(२८) हठ संहिता ,,

इन पुस्तकों में अधिकांश के कर्ता स्वयं गोरखनाथ नहीं थे। साधारणत: उनके उपदेशों को नये नये रूप में वचनबद्ध किया गया है। सिद्ध सिद्धान्त पद्धति को संक्षिप्त करके काशी के बलभद्र पंडित ने एक छोटी सी पुस्तक लिखी थी जिसका नाम है "सिद्ध सिद्धांत संग्रह" इसमें तथा गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह में सिद्ध सिद्धान्त पद्धति

के अनेक श्लोक उद्धृत हैं । इन सबके आधार पर गोरक्षनाथ के मत का प्रतिपादन किया जा सकता है । इस विषय में गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह बहुत ही उपयोगी पुस्तक है ।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त हिन्दी में भी गोरक्षनाथ की कई पुस्तकें पाई जाती हैं । इनका संपादन बड़े परिश्रम और बड़ी योग्यता के साथ स्वर्गीय डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने किया है । यह ग्रन्थ गोरखबानी नाम से हिन्दी साहित्य सम्मेलन में प्रकाशित हुआ है । दूसरा भाग अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ और अत्यन्त दुख की बात है कि उसके प्रकाशित होने के पूर्व ही मेधावी ग्रन्थकार ने इहलोक त्याग दिया । डा० बड़थ्वाल की खोज से निम्नलिखित चालीस पुस्तकों का पता चला है जिन्हें गोरखनाथ रचित बताया जाता है ।

१. सबदी
२. पद
३. सिष्या दरसन
४. प्राण संकली
५. नरवै बोध
७. आत्मबोध
८. अभैमात्रा जोग
६. पंद्रह तिथि
१०. सप्तवार
११. मछीन्द्र गोरखबोध
१२. रोमावली
१३. ग्यान तिलक
१४. ग्यान चौंतीसा
१५. पंचमात्रा
१६. गोरख गणेशगोष्ठी
१७. गोरखदत गोष्ठी
(ग्यान दीप बोध)
१८. महादेव गोरख गुष्टि
१६. सिद्ध पुराण
२०. दया बोध
२१ जाती भौंरावली
(छंद गोरख)

२२. नवग्रह
२३. नवरात्र
२४. अष्ट पारछ्या
२५. रहरास
२६. ग्यान माला
२७. आत्माबोध
२८. व्रत
२९. निरंजन पुराण
३०. गोरख बचन
३१. इन्द्री देवता
३२. मूल गर्भावली
३३. खाली वाणी
३४. गोरखसत
३५. अष्टमुद्रा
३६. चौबीस सिधि
३७. षडक्षरी
३८. पंच अग्नि
३९. अष्ट चक्र
४० अवलि सिलूक
४१. काफिर बोध

डा० बड़थ्वाल ने अनेक प्रतियों की जांच करके इनमें से प्रथम चौदह को तो निस्संदिग्ध रूप से प्राचीन माना है क्योंकि इनका उल्लेख प्राय: सब में मिला है। ग्यान चौंतीसा समय पर न मिल सकने के कारण इस संग्रह में प्रकाशित नहीं कराया जा सका परन्तु बाकी तेरह गोरखनाथ की बानी समझकर पुस्तक में संग्रहीत हुए हैं। १५ से १९ तक की प्रतियों को एक प्रति में सेवादास निरंजनी की रचना माना गया है। इसलिये संदेहास्पद समझकर संपादक ने उन्हें परिशिष्ट 'क' में छापा है। बाकी में कुछ गोरखनाथ की स्तुति है। कुछ अन्य ग्रन्थकारों के नाम की हैं। काफिर बोध कबीरदास के नाम भी हैं इसलिये डा० बड़थ्वाल ने इस संग्रह में उन्हें स्थान नहीं दिया है। केवल परिशिष्ट ख में सप्तवार नवग्रह, व्रत, पंचअग्नि, अष्टभुज, चौबीस सिद्धी, बत्तीस लच्छन अष्ट चक्र रहरासि को स्थान दिया है। अवलि सिलूक तथा काफिर बोध रतननाथ के लिखे हुए हैं। डा० बड़थ्वाल का इन प्रतियों की आलोचना करने के बाद इस नतीजे पर पहुंचना कि सबदी गोरख की सबसे प्रामाणिक रचना जान पड़ती है। परन्तु वह उतनी परिचित नहीं जितनी गोरखबोध की सबसे पहले छपी हुई एक खण्डित प्रति कामाईकेल लाइब्रेरी काशी में है जो सन् १९११ में बांस फाटक

बनारस से छपी थी । बाद में इसे जयपुर पुस्तकालय में संग्रह करके डा० मोहनसिंह ने अंग्रेजी अनुवाद के साथ अपनी पुस्तक में प्रकाशित की है । डा० मोहन सिंह इस पुस्तक में प्रतिपादित सिद्धान्तों को बहुत प्रभावित मानते हैं । परन्तु मत्स्येन्द्र - नाथ के उपलब्ध ग्रन्थों के आलोक में डा० मोहन सिंह का मत बहुत ग्रहणीय नहीं लगता । डा० बड़थ्वाल ने इन पुस्तकों के रचयिता के बारे में विशेषरूप से लिखने का वाद किया था पर महाकाल ने उसे पूरा नहीं होने दिया । परन्तु अपने भावी मत का आभास उन्होंने निम्नलिखित शब्दों में दे रक्खा है । नाथ परंपरा में इनके कर्ता प्रसिद्ध गोरखनाथ से भिन्न नहीं समझते ।

"अधिक संभव है कि गोरखनाथ विक्रम की ११ वीं शती में हुए । यह रचनायें जैसी हमें उपलब्ध हो रही हैं ठीक वैसी ही उस समय की हैं यह नहीं रहा जा सकता । परन्तु इसमें भी प्राचीनता के प्रमाण विद्यमान हैं । जिससे कहा जा सकता है कि संभवत: इसका मूलोदभव ग्यारहवीं शती में हुआ है ।"

नामदेव -

नामदेव महाराष्ट्र साहित्य में एक प्रसिद्ध सन्त माने गये हैं। जिनके अभंग सामान्य जनता में से गाये जाते हैं। उन्होंने हिन्दी में भी कविता लिखी। इस भांति वे हिन्दी साहित्य के इतिहास में भी कवि तथा सन्त के रूप में मान्य हैं। इनका जन्म नरमी वमनी (सतारा) में सन् १२७० ई० में हुआ। इनके आविर्भाव काल के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। डाक्टर भण्डारकर का मत है कि इनकी मराठी कविता सन्त ज्ञानेश्वर की कविता से अधिक परिष्कृत तथा परिवर्ती है। अत: इनका आविर्भाव काल ईसा की तेरहवीं शताब्दी में ना होकर बाद में होना चाहिये। उनका कथन है कि चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मुसलमानों ने अपना राज्य दक्षिण में स्थापित किया। नामदेव ने अपने एक अभंग में (सं० ३६४) में तुर्कों के द्वारा मूर्त्ति तोड़े जाने की बात कही है। अत: नामदेव ईसा की चौदहवीं शताब्दी के ही लगभग या उसके अन्त में हुए होंगे। वैष्णविज्म ,शैविज्म एण्ड माइनर रिलीजस सिस्टम। भण्डारकर पृ०९२) किन्तु प्रो० रानाडे का मत है कि नामदेव ज्ञानेश्वर के समकालीन ही थे। नामदेव की भाषा के परिष्करण के सम्बन्ध में उनका कथन है कि नामदेव का काव्य शताब्दियों तक मौखिक रूप में रहा है अत: उसमें समय समय पर संशोधन होता रहा। यही कारण है कि जनता की श्रद्धा और काव्य पाठ के सार्वजनिक प्रचार ने भाषा को आधुनिकता का रूप दे दिया। मूर्ति तोड़ने के उल्लेख के सम्बन्ध में प्रो० रानाडे का कथन है कि अलाउद्दीन खिलजी ने दक्षिण पर सन् १३०६ ई० में आक्रमण किया था। उसने मलिक काफूर के सेना नायकत्व में एक विशाल सेना देवगिरि पर आक्रमण करने के लिये भेजी। मलिक काफूर ने क्रमश: देवगिरी वारंगल होजमल और पांड्य शकों को जीता। उसने इन स्थानों पर स्वर्ण तथा रत्नों के असंख्य मंदिर सुने थे। उसने अनेक स्वर्ण मूर्तियां तथा पूजा की अनेक मूल्यवान सामग्रियां तोड़ीं तथा अमित धन प्राप्त किया। इसी आधार पर प्रो० रानाडे नामदेव का आविर्भाव काल सन् १२७० ई० के लगभग मानते हैं।

नामदेव दमशेती नामक दर्जी के पुत्र थे। इसलिये ये छीपा जाति से प्रसिद्ध हैं। इनका विवाह राजाबाई से हुआ था। जिनमें इनके चार पुत्र हुए

नारायण, महादेव, गोविन्द तथा विट्ठल । इनकी मृत्यु ८० वर्ष की अवस्था में सन् १३८० ई० में हुई । इनकी समाधि पंढरपुर में बनायी गई ।

नामदेव निर्गुण संप्रदाय के एक बड़े सन्त हुए । कबीर के पहले होने के कारण इन्हें सन्त संप्रदाय की पृष्ठभूमि उपस्थित होने का श्रेय है । नामदेव ने विट्ठल की उपासना की । इसमें नाम स्मरण का अत्यधिक महत्व है । यह विट्ठल संप्रदाय सन् १२०६ ई० के लगभग दक्षिण में पंढरपुर नामक स्थान में प्रचारित हुआ । इसके प्रचारक कन्नड़ सन्त पुंडलीक हैं । विट्ठल सम्प्रदाय वैष्णव सम्प्रदाय और शैव सम्प्रदाय का मिश्रण है । इस सम्प्रदाय में विष्णु तथा शिव में कोई अंतर नहीं है । पंढरपुर में शिवलिंग को शीश पर चढ़ाये हुए विष्णु की मूर्ति है । इसी मूर्ति का नाम विट्ठल है । यही विट्ठल एक सर्वव्यापी ब्रह्म के प्रतीक बनकर समस्त महाराष्ट्र के आराध्य हैं । आठवीं शताब्दी के शैवधर्म से ग्यारहवीं शताब्दी के वैष्णव धर्म का समझौता विट्ठल सम्प्रदाय के रूप में हुआ । और इसके सबसे बड़े सन्त नामदेव हुए । ज्ञानेश्वर महाराज और सन्त नामदेव के साथ साथ समस्त उत्तर भारत की यात्रा की और अपने इस व्यापक धर्म का प्रचार किया । इस विट्ठल सम्प्रदाय के अन्तर्गत बहुत से संत हुए जिनमें गोरा कुम्हार, चोखा मेला जनाबाई कान्हो यात्रा, वेश्या पुत्री आदि के नाम लिए जा सकते हैं । विट्ठल सम्प्रदाय में नाम स्मरण से ही भक्ति होती है तथा भक्ति से आत्मज्ञान । जब एक बार आत्मज्ञान हो गया तो मूर्तिपूजा तथा कर्मकाण्ड की विशेषता आवश्यक नहीं रह जाती । यह बात दूसरी है कि विट्ठल का नामस्मरण करने के लिये विट्ठल की मूर्ति भक्त अपने समक्ष रखते हैं । आत्मज्ञानी भक्त ही सच्चे संत हैं । संत ज्ञानेश्वर ने भी कहा है -- "आत्मज्ञानी चोखण्डी सन्त है माझे रूपड़ी ।" अत: यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि इस विचारधारा में विट्ठल को ब्रह्म का प्रतीक मानकर उसके प्रेम की पवित्र धारा में जाति और वर्ग का सारा द्वंद्व बह जाता है और नाम का संस्कार हृदय में स्थिर हो जाता है । भक्ति का यह ऐसा उन्मेष था कि इसमें दरजी कुम्हार माली , भंगी जासी और वैश्यापुत्री समान रूप से भक्ति में लीन हो सकते हैं । उन्होंने जहां अनाहत नाद के अलौकिक माधुर्य में परमात्मा की अनुभूति प्राप्त की । वहां प्रेम के दिव्य आलोक में उन्होंने आत्मज्ञान का अनुभव प्राप्त किया और परमात्मा

की विभूति देखी । महाराष्ट्र में इस भक्ति का संस्कार दो बातों पर निर्भर है । पहली कर्मकाण्ड की अपेक्षा हृदय की पवित्रता तथा शुद्धता में है और दूसरी व्यक्तिगत और जातिगत संस्कारों से उठकर जीवन मुक्ति के धरातल तक पहुंचने में है । इन्हीं से उस साधक की संज्ञा सन्त हो जाती है ।

माधवराव अप्पा जी मुले ने नामदेव के काव्य के संबंध में लिखा है -- " उसमें सत्व, विश्वास तथा भक्ति का और प्रेम में आत्म समर्पण प्रकाश तथा लोकोत्तर आनन्द का आलोक है । वह हृदय के प्रति हृदय का गीत है ।" नामदेव के काव्य में सरसता और सुबोधता दोनों का ही अद्भुत मिश्रण है । उन्होंने ऐसे अभंगों और गीतों की रचना की कि उनके जीवन काल में ही उनका यश समस्त भारत में फैल गया ।

नामदेव की कविता उनके जीवनकाल की दृष्टि से तीन भागों में विभक्त की जा सकती है -

१. प्रथम उन्मेष की रचनायें - जब वे मूर्तिपूजक थे
२. मध्यकालीन रचनायें - जब वे परम्परा से रहित हो रहे थे
३. उत्तरकालीन रचनायें - जब वे ईश्वर का व्यापक रूप सर्वत्र देखने लगे थे ।

यही उत्तरकालीन रचनाये उनके निर्गुण मार्ग की संयोजिका है । वे समान रूप से मराठी तथा हिन्दी में कविता लिख सकते थे --" गजेन्द्र गणिकेची राखिली तुवालाज उद्धरिला दिज आमिल ।। मराठी

" तारिले गनिका बिनरूप कुब्जा
बिआध अंजामिलु तारि आले ।" हिन्दी

नामदेव का समय -

जिस समय नामदेव का महाराष्ट्र में प्रादुर्भाव हुआ । उत्तर भारत में खिलजियों के शासक सैनिक अभियान की महत्वाकांक्षा पूर्ण योजना बनाने में संलग्न थे । उत्तर भारत में तीन सौ वर्ष से मुसलमानों का शासन भारतीय जीवन में उथल पुथल मचाये हुए था । परन्तु विंध्य और नर्मदा की उपत्यका को लांघने का उनमें साहस एकत्र नहीं हो पाया था । अलाउद्दीन खिलजी के कानों में देवगिरी के यादव राजा के वैभव की कथायें नित्य पड़ा करती थीं और वह दक्षिण के द्वार पर रह रह कर दस्तक दे रहा था । विदेशी आक्रमण की संभावना से यादव राजा सशंक अवश्य थे परन्तु जनता का सामान्य सामाजिक जीवन क्रम अखंडित था - जाति पांति की जंजीरों में जकड़ा हुआ था । रोटी बेटी व्यवहार निर्बन्ध नहीं थे । वर्ण व्यवस्था का इतना आतंक था कि संतों तक ने हृदय से उसकी अस्वाभाविकता अनुभव करते हुए भी उसे विधि का विधान मानकर स्वीकार कर लिया था । देवगिरी के यादव राजा के मंत्री हेमाड़ पंत (हेमाद्रि) ने चतुर्वर्ग, चिंतामणि , नामक ग्रन्थ की रचना कर इस प्रथा को और भी दृढ़ करने का उपक्रम किया । इस ग्रन्थ में उन्होंने वर्ष भर में दो हजार व्रतों और अनुष्ठानों की व्यवस्था दी है । इसका तात्कालीन जनता पर जो प्रभाव पड़ा वह आज तक अनुभव किया जाता है । महाराष्ट्र के प्राय: प्रत्यके धार्मिक पंथ में व्रतों का विधान है ।

नामदेव के समय में नाथ और महानुभाव पंथ प्रचलित थे । नाथ मत स्पष्ट रूप से अलख निरंजन की योगपरक साधना का समर्थक और बाह्याडंबरों का विरोधी था । महानुभाव पंथ में भी बहुदेवोपासना और वैदिक कर्मकाण्ड का विरोध निहित था परन्तु कृष्णोपासक होने के नाते मूर्तिपूजा का बड़ा निषेध नहीं था । सामान्य जनता पंढरपुर के विट्ठल को अपना प्रधान उपास्य देव बनाये हुए थी । प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में स्त्री पुरुष आषाढी और कार्तिकी एकादशी को पैदल चलकर वहां जाते थे । यह यात्रा पंढर पुर की बारी कहलाती थी और आज भी कहलाती है । जनता के मन को पंढरपुर के देवता से हटाने से नाथ पंथियों ने कम उद्योग नहीं किया । ब्रह्म किसी मंदिर में नहीं सब जगह है ।

यह बात नाथपंथी `बिसौवा खेचर` ने विशेष रूप से प्रचारित की और नामदेव को जो पंढरपुर के विठोवा के बड़े भक्त थे अपने मत में मिला लिया । खेचर के उपदेशों से नामदेव तथा उनके समसामयिक तथा परवर्ती संतों ने विट्ठल की व्यापकता को अवश्य अनुभव किया परन्तु सामान्य जनता की पंढरपुर की वारी जारी रही । यद्यपि नामदेव के पूर्व तक महाराष्ट्र मुसलमानों से पद-दलित नहीं हो पाया तो भी उनके एकेश्वर वाद के उपदेश नाथों द्वारा वहां भारतीय दर्शन में संचरित हो चुके थे । अत: मुसलमानों का संसर्ग होने पर भी उसे उनके धार्मिक मत में ऐसी कोई नवीनता नहीं दिखलाई दी जिसमें उसके प्रति उनका बरबस आकर्षण बढ़ता ।

हिन्दू धर्म में ही जो विष्णु और शिव का संघर्ष था उसे किसी ने बड़ी चतुराई से पंढरपुर की विट्ठल की मूर्ति के मस्तक पर शिव चिह्न अंकित करके दूर कर दिया ।

संक्षेप में नामदेव के समय में वर्ण व्यवस्था की तीव्रता थी । जाति हीनों को मंदिर प्रवेश निषिद्ध था । यहां तक कि पुरोहितों ने मंदिर के द्वार पर नामदेव को भी कीर्तन करने की अनुमति नहीं दी ।

यादव राजा के शासन में जनता का जीवन सुखी था । साहित्य और कला को प्रोत्साहन प्राप्त होता था । इसी युग में ज्ञानेश्वर जैसे संत ने ज्ञानेश्वरी और आनंदानुभव के समान प्रौढ़ साहित्य रचना कर मराठी में स्वर्ण युग को जन्मदिया --

नामदेव का जीवन चरित --

नामदेव ने दर्जी जाति के परिवार में ११६२ प्रथम संवत्सर कार्तिक शुक्ल ११ रविवार को सूर्योदय के समय नरसी ब्राह्मणी ग्राम में जन्म धारण किया उनके पिता का नाम `दमा शेट` तथा माता का नाम गोणाई था । नामदेव की

एक बहिन भी थी जिसका नाम आऊबाई था । नामदेव का विवाह उनकी ६ वर्ष की अवस्था से ही होगया था । उनके चार पुत्र तथा चार पुत्रियाँ हुई । उनका वंशवृक्ष इस प्रकार है --
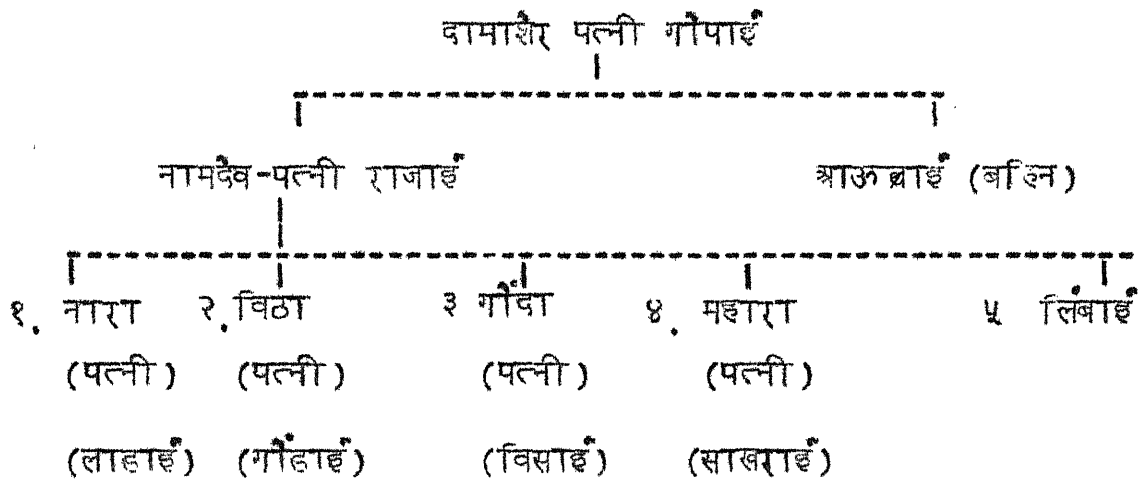
नामदेव के पिता विट्ठल भक्त थे । प्रतिवर्ष वे पंढरपुर की वारी करते थे । अतएव बचपन से ही 'नामा' के मन में विट्ठल भक्ति का उदय हो गया था । वे जब आठ वर्ष के थे तब उनकी माँ ने विट्ठलल मंदिर में दूध का द नैवेद्य चढ़ाने को उन्हें भेजा । किंवदंती है कि मूर्ति ने उनके आग्रह को मानकर उनके कटोरे का दूध पी लिया था । इस चमत्कारिक घटना का उल्लेख उनके एक आत्म व्यक्तात्मक घटना का उल्लेख उनके एक आत्म कथात्मक पद में है --

'दूध कटोरे गडवै जानी.......

नामदेव का मन गृहस्थी में नहीं लगा । अतएव वे पंढरपुर में जाकर ही विट्ठल की सेवा में रहने लगे । वहीं उनकी ज्ञानेश्वर तथा उनके भाई बहनों से भेंट हुई और उनके संसर्ग से उन्होंने विसोबा खेचर से दीक्षा ली । अब उनकी प्रेमपूर्ण भक्ति में ज्ञान का भी समावेश हो गया । उन्होंने ज्ञानेश्वर के साथ उत्तर भारत की यात्रा की और कहा जाता है कि उस यात्रा में उन्होंने कई चामत्कारिक बातें कीं । मारवाड़ में जब यह दोनों संत पहुंचे तब बीकानेर के

के पास "कौलाद जी" नामक ग्राम के निकट उन्हें बड़ी प्यास लगी । खोजते खोजते उन्हें एक गहरा कुंआ दिखाई दिया । ज्ञानेश्वर योगी होने के कारण सूक्ष्मदेह धारण कर सहज ही कुएं में उतर गये और पानी पी आये और नामदेव से कहने लगे कि "कहो तो तुम्हारे लिये भी पानी ले आऊं ।" नामदेव ने उत्तर दिया कि कहीं पानी भी मांग कर पिया जाता है । वे ध्यानस्थ हो गये और विट्ठल विट्ठल की रट लगाने लगे कुछ ही क्षणों में ज्ञानेश्वर ने देखा कि कुएं का पानी ऊपर उठकर सतह पर लहरा रहा है । उन्होंने नमदेव की समाधि भंग कर यह दृश्य दिखाया और उनकी भक्ति के प्रति श्रद्धा व्यक्त की । कहा जाता है कि वह कुआं आज भी कौलाद जी में है और नामदेव का कुआं कहलाता है । उत्तर भारत की यात्रा से लौटकर ज्ञानेश्वर ने आलंदी से समाधि ले ली । उस समय नामदेव भी उन्हीं के पास थे । उन्होंने ज्ञानदेव के वियोग का बड़ा ही हृदय स्पर्शी चित्र अपने अभंगों से खींचा है । अपने प्रिय मित्र के समाधिस्थ हो जाने के बाद उनका मन पंढरपुर से उचट गया । वे महाराष्ट्र से बाहर उत्तर पंजाब की ओर चले गये । पंजाब के घोमान नामक स्थान पर आज भी नामदेव का मंदिर विद्यमान है । यह स्थान गुरुदासपुर जिले में है । इस गांव में नामदेव सम्प्रदायी लोगों की ही बस्ती है । धोमान के स्मारक को गुरुद्वारा बाबा नामदेव जी कहा जाता है । उनके पंजाबी शिष्यों में विष्णुस्वामी बहारेदास लालतो सुनार लध्धा खत्री और केशी कलाधार मुख्य हैं । उन्होंने ८० वर्ष की आयु में सन् १३५० में पंढरपुर के विट्ठल मंदिर में महाद्वार पर समाधि ले ली । उनके शिष्य परिसा भागवत का इसी प्रसंग का एक अभंग है –

> "आषाढ़ शुक्ल एकादशी ।
> नामा विनवी विट्ठ लामी
> आइग व्हावी हो मजसी
> समाधि विश्रान्ति लागी ।"

(नामदेव ने आषाढ़ शुक्ला एकादशी को विट्ठल से प्रार्थना की कि मुझे चिर विश्रान्ति के लिये समाधि लेने की आज्ञा दी ।)

सन्तों के चरित्रों से अनेक चमत्कारिक घटनाओं का समावेश होता है । नामदेव का चरित्र भी उनके शून्य नहीं है । सुल्तान की आज्ञा से मरी हुई गाय को जिलाना आवंढ्या नागनाथ मंदिर के सामने जब ब्राह्मण पुजारी ने कीर्तन नहीं करने दिया तब उनके पश्चिम की ओर जाकर कीर्तन करना और स्वयं मंदिर के दरवाजे का पश्चिमाभिमुख हो जाना आदि घटनायें उनके जीवन के साथ सम्बद्ध हैं और उनका उल्लेख उनके पदों में भी है ।

ज्ञानेश्वर कालीन नामदेव के अतिरिक्त महाराष्ट्र में पांच नामदेव संत और हो गये हैं । पुणों के श्री भ ावटे ने (संकट संत गाथा । में नामदेव के २५०० अभंग दिये हैं । उनमें नामदेव नाम के साथ ५००-६०० से अधिक नहीं है । शेष `विष्णुदास नामा` के नाम से हैं । प्रश्न यह है कि क्या विष्णुदास नामा और नामदेव दो भिन्न व्यक्ति हैं अथवा एक ही हैं । विष्णु के दास होने में हो सकता है नामदेव ने कभी अपने नाम के साथ विष्णुदास को लगाया हो । इस संबंध में महाराष्ट्र के प्रसिद्ध इतिहासकार वि०का० राजवाड़े का कथन ध्यान देने योग्य है । वे लिखते हैं कि नामा शिंपी का काल शके ११६२ से १२६२ से १२७२ तक है । विष्णुदास नामा जो भिन्न व्यक्ति हैं शके १५१७ में जीवित था इसका प्रमाण आवटे की `गाथा` में विष्णुदास नामा का शुकाख्यान (पृष्ठ ५४४-५५७) है । अतएव विष्णुदास नामा के अभंगों को नामदेव के साथ छापना उचित नहीं है ।

नामदेव की गाथा में ऐसे अभंग हैं जिनमें मीरा, कबीर नरसी मेहता आदि का उल्लेख है जो निश्चय ही नामदेव के न तो पूर्ववर्ती हैं और न समकालीन ही । वे निश्चित ही नामदेव के बाद पैदा हुए हैं नामदेव ने किसी भी अपने अभंग में इनका उल्लेख नहीं किया ।

प्रोफेसर रानाडे ने भी अपने ग्रन्थ में राजवाड़े के मत का समर्थन किया है। श्री राजवाड़े ने विष्णुदास नामा की एक बावन अक्षरी प्रकाशित की है

जिसमें "नामदेव राय" की वचना है । इसमें भी यह सिद्ध होता है कि ये दोनों व्यक्ति मित्र हैं और भिन्न समय में हुए हैं । श्री चांदोरकर ने एक महानुभावी नामदेव को भी खींच तानकर नामदेव शिंपी के साथ जोड़ दिया है । इस नेमदेव का महानुभावों के लीलाचरित्र के "विट्ठल वीरु कथन" प्रकरण के उल्लेख हैं कि जिसे कोली जाति का कहा गया है । इसने महानुभाव मार्ग में दीक्षा ग्रहण की थी । परन्तु वास्तव में इस नेमदेव का वारकरी नामदेव से तनिक भी सम्बन्ध नहीं है । नामदेव कालीन एक महानुभावमार्गी नामदेव और हैं । वह भी अपने को विष्णुदास नामा कहता है । इसने महाभारत पर श्रेणी बद्ध ग्रन्थ लिखा है । कर्ण पर्व हरिभाऊ आपटे सभापर्व देशपांडे और आदि पर्व एवं भीष्मपर्व के कुछ पृष्ठ स्वयं पांगारकर ने पंढर पुर में देखे हैं । पांगारकर कहते हैं कि यदि यह नामा महानुभावी होता तो उसके ग्रन्थ के पृष्ठ पंढरपुर की पुरानी पोथियों में ना मिलते पर डा० देशपांडे "महानुभावी मराठी वाङ्मय" में लिखते हैं कि विष्णु नामा को जिसने भागवत पर ओवी लिखी है और जिनके महानुभावी लिपी में भी ग्रन्थ हैं शके ११९२ में महानुभाव दामोदय पंडित ने उपदेश दिया । इन्होंने भारत पर भी ओवीबद्ध काव्य लिखा है । अन्त में वे इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि इस महानुभावी विष्णुदास का ज्ञानेश्वर के साथी संत नामदेव राय से कोई सम्बन्ध नहीं है ।

नामदेव सम्बन्धी एक और विवाद है । पंजाब के गुरु ग्रन्थ साहब में नामदेव के बहुत से पद संगृहीत हैं । उन पदों के लेखक संत नामदेव कहे गये हैं । महाराष्ट्र के कुछ विवेचकों का मत है कि गुरु ग्रन्थ साहब के पद रचयिता नामदेव का महाराष्ट्र के ज्ञानदेव कालीन नामदेव से कोई सम्बन्ध नहीं है । वह नामदेव की पंजाबयात्रा के समय उनका कोई शिष्य रहा होगा । जिसने बाद में अपने गुरु का नाम धारण कर हिन्दी में पद रचे होंगे । पर यह मत निम्नलिखित कारणों से निराधार सिद्ध होता है —

१. नामदेव सम्बन्धी मराठी आभंगों में दो प्रमुख जीवन घटनायें वर्णित हैं प्राय: वे ही ग्रन्थ साहब के हिन्दी पद्यों में भी आई हैं । नामदेव ने

अपने आभंगों में आत्मकथा लिखी है । (यह मराठी साहब में प्रथम आत्मकथा कही जाती है ।) इसमें वे शिंपीआचे कुली जन्म झाला (दर्जी के वंश में मेरा जन्म हुआ) लिखते हैं हिन्दी के पदों में भी वे अपनी जाति यही बताते हैं पर उसे धीमे शब्द से परिचित कराते हैं --

'छीपे के धरि जनमु देला गुरु उपदेसु भेला'

मराठी में दर्जी को शिंपी कहते हैं । उत्तर भारत में उन्होंने अपने को शिंपी कहा होगा । लोगों ने शिंपी को छिपी- छीपा समझा होगा और नामदेव ने उसी शब्द को उत्तर भारतीयों का समझाने की दृष्टि से ग्रहण कर लिया होगा । उत्तरभारत में छीपा छींट छापने वाले को कहते हैं । यही रंगरेज भी कहलाता है । नामदेव ने छीप का प्रयोग दर्जी के अर्थ में नि:संदेह किया है । क्योंकि वे जब पदों में रूपक बांधते हैं तब अपने को दर्जी मानकर ही चलते हैं --

मन मेरो गजु जिह्वा मेरी काती
झपि झपि काटउ जम की धांमी '

शिंपी तथा छीपा के शब्द भिन्नत्व को लेकर पंजाब प्रवासी नामदेव और महाराष्ट्रीय नामदेव को दो भिन्न व्यक्ति मानते का कोई दृढ़ आधार नहीं है ।

२. मराठी तथा हिन्दी पदों में विट्ठल शब्द का समान प्रयोग हुआ है । साथ ही हरिगोविंद शंभु केशव माधव राम आदि भी समान रूप से प्रयुक्त हुए हैं ।

३. मराठी तथा हिन्दी पदों की भावधारा में भी समानता है ।

४. भगवान की सर्व व्यापकता तीर्थ आदि बाह्याचरों की व्यर्थता नाम और गुरु की महिमा के भाव दोनों भाषाओं के अभंगों और पदों में समान रूप से विद्यमान हैं ।

५. दोनों भाषाओं के पदों में प्रह्लाद ध्रुव अजामिल गणिका ,पूतना अहिल्या, द्रौपदी आदि के नाम और उनके कथाप्रसंग पाये जाते हैं ।

अत: इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि पंजाब तथा महाराष्ट्र के ज्ञानेश्वरकालीन नामदेव अभिन्न हैं ।

नामदेव के विशिष्ट शब्द प्रयोग

नामदेव ने कुछ ऐसे पारिभाषिक शब्दों को प्रयुक्त किया है जो प्राय: सभी निर्गुणियों की कृतियों में पाये जाते हैं । यथा खसम , भतार-निरंजन बिठुला, नाद अनहत तथा सुन्न ।

खसम भरतार तथा निरंजन शब्द हमें सातवीं शताब्दी में सिद्धों की रचनाओं में भी मिलते हैं ।

खसम –

अरबी खस्म से बना है जिसके अर्थ १. शत्रु दुश्मन , २. + स्वामी मालिक , (३) पति ,शौहर होते हैं । इसकी विवेचना डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपनी कबीर नामक पुस्तक में की है । उन्होंने ख- आकाश, सम-समान अर्थ लेकर यह प्रतिपादित किया है कि मन की अवस्था जो सगुण तथा निर्गुण से परे हो ।

सिद्ध सरहपाद ने आठवीं शताब्दी में खसम का प्रयोग संभवत: उसी अर्थ में किया है जिसकी ओर डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी का संकेत है । उनकी पंक्तियां हैं –

सव्वरु तहि खसम करिज्जै
खसम कहावे मणवि धरिज्जै

साहपद बौद्ध सिद्ध थे । उन्होंने महायान दार्शनिकों की परिभाषा में ही संभवत: ल का व्यवहार किया है । पर नामदेव तथा कबीर आदि संतों ने भी सभी स्थलों पर इस अर्थ में प्रयोग किया है यह कहना कठिन है ।

भगति करउं हरि को गुन गावउ
आठ पहर अपना खसमु धिआवहु

यहां स्पष्ट है नामदेव ने खसम का प्रयोग स्वामी अथवा मालिक के अर्थ में किया है जो समस्त जगत का स्वामी है उसका आठों पहर ध्यान करने का उपदेश है । भरतार का प्रयोग भी साहपाद में मिलता है । इसका प्रयोग पति के अर्थ में हुआ है । नामदेव में भी इसी अर्थ में यह प्रयुक्त हुआ है ।

निरंजन

नाथ पंथियों में बहुत प्रचलित शव्द है जिसका भिन्न भिन्न अर्थों में प्रयोग हुआ है । गोरखनाथ ब्रह्म के अर्थ में आरती गाते हैं । कबीर ने ब्रह्म तथा विशिष्ट प्रकार के जोगियों के लिये इस शब्द का प्रयोग किया है ।

नामदेव निरंजन को अपने गोपाल राई का विशेषण बनाते हैं । गोपाल राई थी जिनका कोई कुल नहीं है और जो अंजन रहित हैं अर्थात् निराकार हैं सेवा करनी चाहिये । निरंजन शव्द का नामदेव से हिन्दी पदों में एक बार ही निराकार ब्रह्म के लिये प्रयोग किया है ।

विठुला, विट्ठल

का हिन्दी पदों में संभवत: नामदेव द्वारा ही सर्वप्रथम प्रयोग हुआ है । उत्तर भारत में विष्णु का विट्ठल नाम उन्हीं के द्वारा प्रचलित हुआ है । नामदेव ने विट्ठल शव्द पंढरपुर की विट्ठल प्रतिमा और व्यापक ब्रह्म दोनों अर्थों में प्रयुक्त किया है । परन्तु इस सम्बन्ध में यह ध्यान देने योग्य बात है कि विट्ठल प्राय: सर्वव्यापी ब्रह्म के अर्थ में प्रयुक्त हैं । इसका कारण यह प्रतीत होता है कि विसोवा खेचर से दीक्षित होने के पूर्व नामदेव की भक्ति पंढरपुर के मंदिर में स्थित विठोवा की मूर्ति में ही केन्द्रित थी । अतएव मराठी अभंगों में विट्ठल की मूर्ति के चरणों में बार-बार जन्म लेकर समर्पित होने की उत्कट भावना है । परन्तु खेचर के जगाने के उपरांत उनकी यह भावना व्यापक होगई

चारों ओर उन्हें विट्ठल के दर्शन होने लगे —

ईं भइ बीठल ऊगइ बीठल, बीठल बिन संसारु नाहीं

उत्तर भारत की यात्रा के समय नामदेव खेपर से दीक्षित हो चुके थे। अतएव उस समय रचित हिन्दी पदों में स्वभावत: बीठलु व्यापक ब्रह्म के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। नामदेव के पद उत्तर भारत में इतने अधिक प्रचलित हो गये थे कि उनके भावों की प्रतिध्वनि हमें उनके परवर्ती संत कवियों में बार बार सुनाई पड़ती है। उत्तर भारतीयों को सर्वप्रथम निर्गुण भक्ति का मधुर रसपान कराने का श्रेय इसी महाराष्ट्री संत कवि को है। सिद्धों तथा नाथों ने तो भक्ति विरहित निर्गुणमत का ही प्रचार किया था।

कुण्डलिनी, अनहतनाद, सुन्न

कुण्डलिनी के सम्बन्ध में गोरखनाथ शतक में चर्चा है —

कुण्ड अर्थात् रीढ़ के निम्न भागस्थित स्वयंभू लिंग के ऊपर कुण्डलिनी शक्ति आठ तह का कुण्डल बनाकर अपने मख से ब्रह्मद्वार को नित्य ढांप पड़ी रहती है। इडा (बाईं नाडी) और पिंगला (दाईं नाडी) का जब सुषुम्ना (रीढ़ के मध्य स्थित नाड़ी) से बहने वाली प्राणवायु के साथ प्राणमात्र आदि द्वारा मेल होता है तब कुण्डलिनी जाग्रत होती है और उसकी ऊर्ध्व गति होती है। यह षट यंत्रों को बेधती हुई सहस्त्राधार अथवा ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करती है जहां अमृत झरता है तथा जीवात्मा उसका पान करती है। इसी अवस्था में अनहत नाद सुनाई पड़ता है, प्रकाश दिखाई देता है। आत्मा ज्योति परमात्मा ज्योति से एकाकार हो जाती है। यहीं पहुंचने पर समाधि की अवस्था सिद्ध होती है। इसी को कुणलिनी योग अथवा लय योग कहते हैं। नामदेव कहते हैं —

अखण्डु मण्डलु निराकार महि अनहत बेनु बजाऊंगो।
इडा पिंगला अउरु सुखमना पउनै बांधि रहाउंगो।।
चंड सुरज दुइ सम करि राखउ ब्रह्म ज्योति मिली पाउंगा।

इड़ा तथा पिंगला नाड़ियों को ही चन्द्र और सूर्य नाडी कहा जाता है । नाथ मत में कुण्डलिनी योग साधन का बड़ा महत्व है । ब्रह्मरन्ध्र को गगन मण्डल सुन्न मण्डल और सुन्न महल भी कहा गया है

योगी विसोबा खेचर से दीक्षा लेने के उपरान्त प्रतीत होता है नामदेव कुण्डलिनी योग साधना में प्रवृत्त हुए और तभी से उनके पदों तथा अभंगों में उनका उल्लेख आने लगा ।

जन अनहद सूर उजारा तह दीपक जलैं छंछारा
गुरु परसादी जानिआ जनु नामा सहम सकानिया

नामदेव की भाषा —

अध्ययन की समस्या :—

नामदेव के पदों की मूल पाण्डुलिपि अप्राप्य है । उनके बहुत से हिन्दी पद सिक्खों के 'गुरु ग्रन्थ साहिब' और थोड़े से आवटे द्वारा संकलित 'सकल संत गाथा' तथा यत्र तत्र मठों की पोथियों में मिलते हैं । गुरु ग्रन्थ साहिब का संकलन सन् १६०६ ई० के आस पास नामदेव के समाधिस्थ होने के लगभग ढाई सौ वर्ष बाद हुआ है । इस अवधि में मूल पदों में थोड़ा बहुत अंतर स्वभावत: आ गया होगा । यों जनता संतों की वाणी में दैवी शक्ति को मानकर उनका शुद्ध पाठ रखने का प्रयत्न करती है । फिर भी लेखन त्रुटि तथा श्रवण भ्रान्ति के कारण यहां वहां अक्षरों तथा शब्दों में भेद पड़ जाता है । आवटे की गाथा पदों में भी मूल की रक्षा संदिग्ध है । मुद्रण कला के आविष्कार के बाद तो दोषों की संख्या की कोई सीमा ही नहीं रह गई है । पहले तो जब ग्रन्थ हाथ से लिखे जाते थे तब लिपिक की थोड़ी बहुत रुचि मूल पुस्तक का प्रक प्राय: एक ही लिपिक होने से भाषा की एकरूपता भी रक्षित रह जाती थी । परन्तु

मुद्रणालय में तो एक पुस्तक को कम्पोज करने वाले अनेक व्यक्ति होते हैं जो न तो विषय का ज्ञान रखते हैं और न भाषा पर अधिकार ही । वे मक्षिका स्थाने मक्षिका रख कर अपनी मजूरी पूरी करते हैं यदि कोई अन्वेषक ही मुद्रणालय में सावधानी से बैठकर किसी ग्रन्थ को मुद्रित कराये तो संभव है कि मूल भाषा की रक्षा हो सके । श्री आवटे का शोधक स्वभाव भले ही रहा हो पर वे आधुनिक ढंग के अन्वेषक नहीं रहे हैं । जो भाषा के रूप की रक्षा में अत्यधिक सावधान रहते हैं । मराठी पदों की भाषा संभवत: थोड़ी बहुत वे ठीक रख भी सके हों पर हिंदी पदों के प्रति वे भाषाधिकार के अभाव में उतनी ही सतर्कता रख सके होंगे इसमें संदेह है । ऐसी स्थिति में हम नामदेव के पदों की सूक्ष्म वैज्ञानिक परीक्षा करने में असमर्थ हैं । हम उसके प्राप्य रूप से कतिपय स्थूल निष्कर्ष ही निकाल सकते हैं ।

नामदेव की भाषा की सामान्य विशेषताएं

वर्णमाला तथा वर्ण प्रक्रिया आदि –

पदों की भाषा में प्राय: संस्कृत वर्णमाला के सभी स्वर तथा व्यंजन विद्यमान हैं । अपवाद हैं ऋ, लृ, ,श , ष, क्ष और ज्ञ । ऋ के स्थान पर रि, श के स्थान पर स तथा ष के स्थान पर ख क्ष के स्थान पर ख तथा ज्ञ के स्थान पर गिया का प्रयोग मिलता है ।

कहीं कहीं ओ के स्थान पर उ तथा ए के स्थान पर इव मिलता है । यथा –

'राम को जपउ दिनराता

अ का उ में परिवर्तन

शब्दान्त की अ ध्वनि प्राय: उ में परिवर्तित पाई जाती है – विष्णु, संसारु गोविन्दु, वृतु, वेदु, पुराणु आदि संस्कृत तत्सम

शब्दों के दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व और ह्रस्व के स्थान पर दीर्घ रूपों की प्रचुरता है । कहीं शब्दान्त अ का इ में भी आदेश हुआ है —

खड़ीबोली रूप	नामदेवी रूप
झिलमिल	झिलमिलि
बाहर	बाहरि

ब के स्थान पर म का आदेश

सब	सम

ल के स्थान पर ग का आदेश

सकल	सगल
भक्ति	भगति

न के स्थान पर ण का आदेश तथा ण के स्थान पर न का आदेश

कौन	क्वणु
तृष्णा	त्रिस्ना

य के स्थान पर ज का आदेश

यम	जम

कतिपय वर्णों का भी आगम हुआ है

शब्द में वर्ग के तृतीय वर्ण के बाद औ और ना के आने पर उनके मध्य य का आगम —

जाना	ज्याना
जौ	ज्यौ
लाना	ल्याना

संयुक्त स के पूर्व इ का आगम

स्नान	इस्नान

विभक्ति वैशिष्ट्य

सप्तमी के लिये इ और ए और भी प्रयुक्त ~~का~~ प्रत्यय पाये जाते हैं --

मनि	(मनमें)
आकासि	(आकास में)
दारि	(द्वारपर)
गगन मंडल मी	(गगनमंडल में)

कहीं कहीं संबंध कारक में च का प्रयोग --

तुमचे पारसु हमचे लोहा

क्रिया प्रत्यय

भूतकालिक 'इल' प्रत्यय नामदेव के पदों में अधिक पाया जाता है । यथा --

आनीले, भराइले, भेला, लाइले

यह मराठी में ही नहीं पूर्वी हिन्दी में भी प्रयुक्त होता है । सातवीं शताब्दी के साहपाद और धर्मपाद में भी इस भूतकालिक प्रत्यय का प्रयोग मिलता है ।

"नामदेव की भाषा में किसी कृत्रिम एकरूपता की अपेक्षा नहीं की जा सकती है । वे संत थे । उन्हें अपनी बात कहनी थी । भाषा का रूप प्रदर्शन उनका ध्येय न था । अतएव भाषा में कबीर के समान थोड़ी विविधता भी है । जिन प्रान्तों के व्यक्तियों से उनका संपर्क हुआ उनकी भाषा उन्होंने ग्रहण की । अतः उसमें खड़ी बोली के साथ व्रज पूर्वी हिन्दी और पंजाबी का

भी समावेश हो गया है । उनके काल तक मुसलमानों का शासन फैल चुका था । अत: विदेशी (भाषा- अरबी-फारसी) शब्द स्वभावत: उनकी रचना में समा गये । परन्तु एक बात ध विशेष रूप में दर्शनीय है कि उनके प्रत्येक पद में विदेशी शब्द नहीं आए हैं । गुरु ग्रन्थ साहिब में संकलित पदों में ही थोड़े बहुत अरबी फारसीके शब्द हैं । उदाहरणार्थं आमदवुना, खुशखबरी, यारा, आलम, मस्कीन, दाना, बखसंद बिसमिल, खुंदकार, कलंदर आदि । शेष पद्य इनसे सर्वदा अछूते हैं ।

इस प्रकार नामदेव ने अपने सारे पदों में भाषा की विदेशी खिचड़ी नहीं पकाई है । यद्यपि नामदेव के समय में मुसलमानों का संसर्ग दक्षिणापथ में प्रारंभ हुआ था तो भी उनका इतना प्रभाव नहीं बढ़ पाया था कि जनता की भाषा के परम्परागत रूप में विशेष परिवर्तन आ गया हो । उत्तरभारत में परिवर्तन की क्रिया प्रारंभ हो चुकी थी जिसकी छाया नामदेव के चार पांच पदों में ही दिखाई देती है । उन पदों की रचना उनके पंजाब में रहने के काल में होनी चाहिये । उनकी भाषा से खड़ीबोली के उस रूप का आभास मिलता है जो उनके समय में मध्यदेश और पंजाब में विकसित हो रही थीं ।

बाबा फरीद (शैख फरीद) शकर गंज

मुसलमान सूफी संत जिनके नाम से देशी भाषा की कुछ रचनायें हमें प्राप्त हैं, बाबाफरीद शकरगंज या शैख फरीदुद्दीन शकरगंज (११७३ - १२६५ ई०- १२३० - १३२२ वि०) हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार फरिश्ता के अनुसार (१७ वीं- ११ शती) तैमूर लंग मे आक्रमण (१३१२ से १३७५ वि०) के समय पंजाब के अजो- धनवां पाकपत्तन की गद्दी पर प्रसिद्ध फकीर बाबा फरीद का पौता शाहुद्दीन गद्दी पर वर्तमान था। इस गद्दी के संस्थापक बाबा फरीद ही थे। इनका जन्म (११७३ ई० - २१३० वि०) में कोठीवाल गांव में हुआ था। ये प्रसिद्ध शैख मुही- नुद्दीन चिश्ती के शिष्य कहे जाते हैं। कहा जाता है कि अजोधन गांव जिला मांट- गोमरी (पाकिस्तान पंजाब) में इन्होंने १२ वर्ष तक तप किया। इस कारण उस गांव का नाम पाकपत्तन पड़ गया। बाबा फरीद ने देहली, मुलतान आदि नगरों की यात्रा करके सूफी संप्रदाय का प्रचार किया और पंजाबी मिश्रित हिन्दी में अनेक कवितायें लिखीं। कभी कभी उन्हें लहंदी पंजाबी हिन्दी काव्य का जनक कह दिया जाता है।

सिक्खों के उपास्य ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहब में शैख फरीद के नाम से ४पद (राग आसा तथा सूही में) और १३० श्लोक दिये गये हैं। नानक की जनमसाखियों में उन्हें शैख इब्राहीम नाम से भी संबोधित किया गया है। सिक्खधर्म के प्रसिद्ध इतिहास लेखक मैकालिफ आदि ग्रन्थ में संगृहित उक्त पदों तथा सलोकों को जिन शैख फरीद की रचना मानते हैं उनका वास्तविक नाम शैख ~~फरीद~~ इब्राहीम था। और उपाधि नाम शैख फरीद था और जो प्रसिद्ध बाबा फरीद गंजशकर के वंशज थे। फरीद सानी, सलीस फरीद, शैख फरीद, ब्रम्वल, वलराज, शाह ब्रह्म आदि इन्हीं की पदवियां कही जाती हैं। ये शैख फरीद गुरु नानक के सम सामयिक कहे जाते थे। इनका जन्म भी दीपालपुर के निकट कोठीवाल नामक गांव

में माना जाता है । इनकी समाधि अभी तक सरहिंद में वर्तमान है । बाबा फरीद शकरगंज ,शैख फरीद और शैख इब्राहीम- इन तीनों नामों का संबंध अब भी विवादास्पद है । कुछ लोग इन्हें एक ही व्यक्ति के और कुछ दो व्यक्तियों के नाम बताते हैं । प्रामाणिकतथा सुसंपादित रचना के अभाव के कारण भाषा के आधार पर भी किसी निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकता । अब्दुलहक ने बाबा फरीद की जो बानी उद्धृत की है उसमें पंजाबी मिश्रित हिन्दवीपन अधिक है । कुछ फारसी शब्दों का भी मिश्रण है । गुरु ग्रन्थ साहब में संग्रहित पदों तथा श्लोकों की भाषा लहंदी पंजाबी मिश्रित हिन्दवी है । कुछ भी बाबा फरीद और शैख फरीद की बानियोंमें आदिकालिक हिन्दवी भाषा साहित्य की आवश्यक कड़ी है ।

शैखफरीदुद्दीन गंजशकर - जीवन परिचय

जन्म तथा प्रारंभिक जीवन —

बाबा फरीद का पूरा नाम शैख फरीदुद्दीन मसूद गंजशकर था । परन्तु उन्हें शैख फरीद गंजशकर के नाम से ही प्रसिद्धि प्राप्त है । फरीद का अभिप्राय'अनुपम' और गंजशकर मधुरता के संग्रह को कहते हैं । बाबा फरीद की वाणी की मधुरता तथा व्यावहारिक सरलता के कारण ही उन्हें गंजशकर की उपाधि मिली होगी इसमें संदेह नहीं फिर भी उनके मुरीदों और शिष्यों द्वारा इस विषय में कही गई विभिन्न रवायतों का उल्लेख उनकी लोकप्रियता और प्रभाव को समझने में सहायक होगा ।

पहली रवायत के अनुसार जिन दिनों बाबा शैख फरीद शि अपने मुरशिद (गुरु) ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी के पास शिक्षा पा रहे थे उन्होंने एक बार लगातार रोजे रखे । एक दिन रोजा खोलने के लिए वह अपने हुजरे (कुठिया) से ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी के हुजर की ओर जा रहे थे । रास्ते में उनका पैर कीचड़ में फंस गया और वह गिर पड़े । गिरने पर कुछ मिट्टी उनके मुंह में चली गई जो ईश्वर की कृपा से शक्कर में बदल गई । जब

इस घटना के विषय में मुरशिद बख्तियार काकी को पता लगा तो उन्हों शेख फरीद को गंजशकर की उपाधि देते हुए कहा -" यदि मिट्टी तुम्हारे मुंह में पड़कर कशर शकर बन गई तो अल्लाह तुम्हारे वुजूद को शकर बना देगा और तुम सदैव मीठे ही रहोगे । इस रवायत का उल्लेख सीसल औलिया में मिलता है ।

दूसरी रवायत जो कि सीसल किताब में मिलती है उसके अनुसार शेख फरीद ने एक बार दिनों में रोजा खोलने के लिए कुछ न पाकर थोड़ी सी बालू मुंह में डालकर रोजा खोलना चाहा परन्तु वह बालू मुंह में पड़ते ही शकर बन गई । इस घटना को सुनकर मुरशिद ने गंजशकर की उपाधि दे दी ।

तीसरी रवायत खजीनतुल सूफिया के लेखक ने तजकियल आशिकीन के हवाले से दी । इसमें वह लिखते हैं कि एक व्यापारी ऊंटो पर शक्कर लादकर मुल्तान से दिल्ली जा रहा था । जब वह शेख फरीद के निवास स्थान अजोधन के पास से होकर निकल रहा था उस समय शेख फरीद ने उस व्यापारी से पूंछा कि ऊंटों पर क्या लदा हुआ है । व्यापारी ने चिढ़कर उत्तर दिया नमक है । शेख फरीद ने कहा बेहतर है नमक ही होगा । व्यापारी अपने ठिकाने पर पहुंच कर जब ... बोरे खोलता है तो उनमें नमक ही नमक नजर आता है । व्यापारी यह करिश्मा देखकर बहुत घबराता है और उलटे पांव अजोधन ब लौटा और बाबा शेख फरीद के पैरो पर गिर पड़ा तथा अपनी गलती के लिए क्षमा मांगी । शेख फरीद ने उसकी बात सुनकर कहा अगर शकर थी तो शकर हो जायेगी व्यापारी जब वापस आया तो उसमें नमक को शकर में बदला हुआ पाया । इस घटना का वर्णन अबुर्रहीम खानखाना के पिता बैरम खां ने इस प्रकार किया है -- समुद्रों और धरती पर शयन करने वाले महानसंत बाबा फरीद नमक तथा शक्कर दोनों की खान हैं । क्योंकि वह नमक को शकर तथा शकर को नमक में बदल सकते हैं । चौथी रवायत के अनुसार शेख फरीद एक बार जंगल में रियाजत (साधना) कर रहे थे । एक दिन जब उन्हें बहुत प्यास अनुभव हुई तो वह जंगल में एक कुएं पर गये । परन्तु कुएं पर डोर तथा छत्र न पाकर बहुत निराश हुए । तभी

देखते क्या है कि हिरन का एक जोड़ा कुलाचे मारता हुआ कुएं के पास आया और कुएं का पानी ऊपर आ गया । हिरनों ने पानी पिया तथा उछलते कूदते जंगल में भाग गये । बाबा शेख फरीद मंत्र मुग्ध से इस घटना को देखते रहे । हिरनों के ओझल होते ही उन्होंने स्वयं भी कुएं के पानी को पीना चाहा परन्तु उनके पानी की ओर हाथ बढ़ाते ही पानी नीचे चला गया । इस चमत्कार को देखकर वे बहुत चकित हुए और परमेश्वर से प्रार्थना की कि या खुदा इसका क्या रहस्य है । परमात्मा की ओर से एक रहस्यात्मक स्वर सुनाई पड़ा उन हिरनों ने मुझ पर भरोसा किया तूने डोर तथा घड़े पर । शेख फरीद को यह सुनकर बहुत ही आत्मग्लानि हुई । उन्होंने आत्मशुद्धि तथा प्रायश्चित के उद्देश्य से ४० दिन का चिल्ला (सूफी इबादत की एक विधि) प्रारम्भ कर दिया । इस अवधि में उन्होंने कुछ भी नहीं खाया पिया । चिल्ला समाप्त होने पर मिट्टी की एक डली मुंह में डालकर रोजा को अफ्तार किया । मिट्टी की डली मुंह में पड़ते ही शकर बन गई और परमात्मा की ओर आवाज आई - ए फरीद तेरे चिल्ले को मैंने स्वीकार किया और तुझे अपने लिये चुन लिया और मृदुभाषियों के गिरोह में तुझको गंजशकर बनाया ।

उपर्युक्त रवायतों के अतिरिक्त एक और रवायत प्रचलित है जो अधिक स्वाभाविक रोचक तथा सत्य के नजदीक जान पड़ती है । कहा जाता है कि जब शेख फरीद बालक थे तब उनकी मां बीबी कुरसुम खातून उनमें नमाज की आदत डालने के लिए प्रत्येक नमाज पर कुछ शकर दिया करती थीं जिसमें कि शकर की लालच में बालक फरीद नमाज रुचि से पढ़े तो उनकी मां मुसल्ले (नमाज की चटाई) पर किनारे कुछ शकर रख देती थीं। एक दिन वह ऐसा करना भूल गई परन्तु जब नमाज समाप्त हुई तो मां ने बेटे को शकर खाता पाया । उनको जब यह स्मरण हुआ कि मैंने तो शकर आज रखी ही न थी तो उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ । वह चूंकि विदुषि तथा धर्मपरायण महिला थीं तथा बालक फरीद के जन्म के समय से ही कुछ विलक्षण बातें उनके समक्ष आती रही थीं इसलिये उन्होंने

इसे बालक फरीद का एक और चमत्कार समझा और प्यार से कहा तू तो गंजशकर अर्थात् शकर की खान है ।

इस प्रकार शेख फरीद की उपाधि गंजशकर के विषय में उल्लिखित विभिन्न रवायतों में परस्पर भिन्नता होने के कारण उनकी प्रामाणिकता में संदेह होना स्वाभाविक है । ऐसा लगता है कि बाबा शेख फरीद की वाणी की मधुरता उनकी सादगी संसार त्याग की भावना इंद्रिय संयम की पराकाष्ठा साधना की ऊंचाई तथा व्यवहार की कोमलता के ऊपर व्यापक प्रकाश डालने के लिये इन रवायतों का प्रचलन हुआ है तथा गंजशकर की उपाधि रूपात्मक अभिव्यक्ति है जो उनकी मृदु स्वभाव हेतु उनके मुरशिद ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी ने दी होगी । बाबा साहब ने एक जीवन चरित लेखक अमीर खुर्द ने उनको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कविभनाई की पंक्तियाँ उद्धृत की हैं जिनका अभिप्राय है पाषाण तुम्हारे हाथों के स्पर्श से रत्न बन जाता है और विष तुम्हारे हाथों में पड़कर अमृत (शकर) हो गया है ।

जन्म :-

बाबा फरीद शेख फरीदुद्दीन गंजशकर की माँ बीबी का कुरसूम खातून विदुषी महिला थी । वह धर्म परायण तथा ईश्वर भक्त थीं उनके गर्भ से बाबा साहब का जन्म हिजरी सन् की पूर्वार्द्ध की शाबान माह की शर्त ता० को हुआ था जो ईस्वी सन के अनुसार ११७३ हई है । बचपन में उनका नाम फरदुद्दीन मसूद था जो कि संभवत: सूफी दार्शनिक और भतिक उत तैरे (पक्षियों का सम्मेलन) के लेखक फरीदुद्दीन अत्तार के नाम पर रखा गया था बीबी कुरसूम खातून तथा हजरत जमालुद्दीन शेख फरीदुद्दीन मसूद के अतिरिक्त इनके तीन संतानें दो पुत्र तथा एक पुत्री पैदा हुई थी । पुत्रों में हजरत अलीजुद्दीन और शेख नजीबुद्दीन मतवक्कल थे । बहन का नाम बीबी हाजरा उर्फ जमीला था । बीबी हाजरा महान सूफी संत मख इन अलाउद्दीन अली अहमद सरोवर कलियर की माँ थी

शेख फरीद जन्मजात वली थे । इस बात का समर्थन दो चमत्कारों से होता है । पहला चमत्कार उनके जन्म से पूर्व तथा दूसरा जन्म के उपरान्त घटित हुआ । कहा जाता है कि जब शेख फरीद मां के गर्भ में थे एक दिन मां को अनार खाने की इच्छा हुई । उन्होंने पड़ोसी के पेड़ से फल बिना पूछे तोड़ना चाहा । परन्तु उसी समय उनके पेट में इतना तेज दर्द पैदा हुआ कि वह अनार तोड़ना भूल गई । बाबा फरीद के जन्म के कुछ दिनों बाद एक दिन मां ने प्यार से कहा बेटा जब तुम मेरे गर्भ में थो तो मैंने कोई भी ऐसी चीज जो हराम (निषद्ध) हो नहीं खाया था । इस पर बालक फरीदुद्दीन मसूद ने मुस्कुराते हुए कहा परन्तु मां तुम पड़ोसी के पेड़ से कुछ अनार तोड़ना चाहती थीं जबकि मैंने तुम्हारे पेट में जोर का दर्द पैदा किया और तुम ऐसा न कर सकीं । इतना कह कर वे हंसते हुए चले गए तथा मां आश्चर्यचकित सी खड़ी रह गई ।

मौलाना तालिब हाशिमी शेख -उल-शैयूख-ए-आलम से लिखते हैं कि बाबा फरीद का जन्म जिस दिन होना था उस दिन शाबान की उन्तीस तारीख थी और रमजान माह का चांद दिखाई देने वाला था । बादलों के कारण चन्द्र दर्शन न हो सका । विवाद बढ़ने पर एक दरवेश ने कहा क्यों परेशान होते हो शेख जमालुद्दीन के घर एक बालक जन्म लेने वाला है जो अपने युग का आध्यात्मिक शासक होगा । यदि वह बालक पैदा होकर अपनी मां का दूध नहीं पीता तो चांद दिखा हुआ मानकर रोजे प्रारंभ कर देना । लोगों ने इस बात पर विश्वास कर लिया । सुबह के नाश्ते के समय (सेहरी) लोगों ने पता किया तो ज्ञात हुआ कि शेख जमालुद्दीन के घर सचमुच एक बच्चा पैदा हुआ है । नवजात शिशु ने मां के स्तन को हाथ नहीं लगाया इस बात को सुनकर लोग बहुत आश्चर्यचकित हुए और रोजे रखे । कहा जाता है कि पूरे रमजान माह तक बालक फरीद ने दिन के समय दूध नहीं पिया । शाम को रोजा आफतार के समय एक स्तन से और सुबह सेहरी के समय दूसरे स्तन से दूध पीते थे ।

प्रारंभिक-शिक्षा -

शेख फरीद जब बहुत ही छोटी आयु के थे तभी उनके पिता शेख

जमलुद्दीन की मृत्यु हो गई । इसलिए उनकी शिक्षा दीक्षा का भार माता कुर-सूम के कंधों पर पड़ा । विदुषी मां ने पुत्र को पिता का अभाव नहीं अनुभव होने दिया । उन्होंने पुत्र को फरीद को इस्लामी धर्म की प्रारंभिक शिक्षा देने का सुन्दर प्रबंध किया । मां की देख रेख में जब बालक फरीद ने कुरान का प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त किया तब उनको विधिवत शिक्षा यापन हेतु इस्लामी धर्म तथा दर्शन के केन्द्र मुल्तान भेजा । मुल्तान में बालक फरीद मो मौलाना मिन हाजुद्दीन से कुरान हदीश तर्क और दर्शन का उच्च ज्ञान प्रदान किया । मुल्तान में इरान तथा तुर्की से समय समय पर विद्वान लोग आते रहते थे । कभी कभी वे आकर वहीं बस जाते थे और कभी कभी भ्रमण के उद्देश्य से ही आते थे । मुल्तान में बालक फरीद के चचेरे भाई शेख वहाउद्दीन सुहरावर्दी का परिवार रहता था । इस कारण से उनको अपनी शिक्षा अवधि में किसी प्रकार की असु-विधा नहीं हुई । मुल्तान में ही एक दिन जिस मस्जिद में बालक फरीद शिक्षा यापन कर रहे थे ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी जो ख्वाजा मुइनुद्दीन चश्ती के शिष्य तथा महान विद्वानसूफी संत से नमाज पढ़ने आये थे । उन्होंने जब बालक फरीद को देखा तो उन्हें बालक फरीद के भीतर छिपी भावी प्रतिभा का पूर्वाभास हो गया । उन्होंने बालक फरीद के गुणों से प्रभावित होकर उन्हें अपना मुरीद (शिष्य) बना लिया । बाबा फरीद अपने नये मुरशिद के व्यक्तित्व से इतने प्रभावित हुए कि वह नित्यप्रति उनके पास जाते और उनके ज्ञान तथा अनुभव प्राप्त करते । धीरे धीरे गुरु शिष्य में परस्पर प्रेम तथा भक्ति का ऐसा प्रगाढ़ भाव उत्पन्न हो गया कि जब ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी दिल्ली वापस जाने लगे तो बाबा फरीद भी उनके साथ जाने को तैयार हो गये । परन्तु जब ख्वाजा बख्तियार काकी ने उन्हें मुल्तान में रहकर अपना अध्ययन पूराकरने और उसके बाद मुस्लिम देशों का भ्रमण कर वहां के संतों तथा विद्वानों से संपर्क कर इनसे और अनुभव प्राप्त करने की अनुमति दी । बाबा फरीद अपने मुरशिद की सलाह को मानकर मुल्तान में ही रुके रहे । साथ ही अपना अध्ययन पूरा कर विदेश भ्रमण करने को निकल पड़े । मध्य एशिया के मुस्लिम देशों पर इस समय मंगोलों तथा तातारों के बर्बर आक्रमण हो रहे थे । लूटपाथ तथा हिंसा का वातावरण बना हुआ था फिर भी इन देशों में सूफीसंत तथा दर-

वैश घूम घूम कर लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान तथा चिंतन की ओर उन्मुख कर रहे थे। ख्वाजा फरीदुद्दीन अत्तार शैख शिहाबुद्दीन उमर सुहरावर्दी मौलाना जलालुद्दीन सभी मुहक्किल रूमी शैख शादी, शीराजी, शैख मुईनुद्दीन इने अरबी ख्वाजा, अजल सन्जारी, शैख याकूब हासवी, शैख शैफुद्दीन, शैख अहादुद्दीन किरमानी, शैख-तकीउद्दीन जिकैया, शैख अब्दुल वाहिद बदख्शानी, हजरत समरुद्दीन खानवी शैख अब्दुल लतीफ बगदादी शैख भालू यूसुफ चिस्ती उस युग की महान विभूतियां थीं जो बर्बर सम्राटों के अत्याचारों का विरोध अहिंसक ढंग से प्रतिरोध द्वारा कर रही थीं। ५६३ हि० से ६।। हिजरी तक १२ वर्ष बाबा फरीद गजनी, बगदाद रविस्ता, बदख्शां यरुसलम मक्का मदीना आदि भ्रमण करते रहे।

अजोधन (पाकपाटन) में स्थाई निवास

विदेशों का भ्रमण करके जब शैख बाबाफरीद भारत वापस आये तो कुछ दिन अपनी मां के पास खोतवल गांव में रहने के बाद दिल्ली चले गये। वहां से लाहौर और फिर अजोधन गये और वहां स्थाई रूप से बस गये। अजोधन उस युग में सतलज नदी के किनारे एक छोटा कस्बा था जिसमें विभिन्न जातियों के लोग रहा करते थे। यह जातियां अर्द्ध सभ्य ही कही जा सकती थीं। वहां आस पास के क्षेत्र रेतीले थे और अंग्रेजों समय तक यहां नाम मात्र के क्षेत्र रेतीले थे उनपर खेती हुआ करती थी। अब यह इलाका पाकिस्तान में है और इसे पाक पाटन (पवित्र नगर) कहा जाता है। कहते हैं जब ताजुद्दीन महमूद यहां के दीवान थे तब बादशाह अकबर अजोधन आये थे और इसका नाम पाक पाटन रखा था। बाबा फरीद के समय तक अजोधन क्षेत्र में मुसलमान आबाद हो चुके थे। १०७६ ई० में सुल्तान इब्राहीम ने अजोधन क्षेत्र को विजित किया था और तब से लगातार कई वर्षों तक वहां गजनी और लाहौर के मुस्लिम शासकों का शासन रहा। जब बाबा फरीद अजोधन आये तब वहां पर मुस्लिम मुल्ला मौलवी और मस्जिदें वर्तमान थीं। बाबा फरीद के आ जाने से इस नगर की

बहुत ही तेजी से उन्नति हुई और यह इस्लामी शिक्षा का केन्द्र बन गया। परन्तु यहां एक आवश्यक प्रश्न यह है कि भारत में अनेक बड़े नगरों मनोरम घाटियों तथा भयानक जंगलों के होते हुए भी बाबा फरीद ने अजोधन को ही अपना निवास स्थान तथा कर्मस्थान क्यों बनाया। इस प्रश्न का उत्तर विद्वानों ने भिन्न भिन्न दिया है। एक रवायत के अनुसार बाबा फरीद एक दिन मुरअबे (ध्यानावस्था) में थे तो उनके मुरशिद ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी ने दर्शन देकर उन्हें मानवता के हित के लिये अजोधन में निवास करने को कहा। एक दूसरी रवायत के अनुसार जब बाबा साहब इबादत कर रहे थे तो उन्हें एक देवी स्वर सुनाई पड़ा जिसमें कहा गया कि जो फरीद तुम लोगों को प्रकाश दिखाने और सत्य मार्ग पर ले जाने के लिये नियत किये गये हैं। तुम्हें भीड़ से नहीं छिपना चाहिये। ईश्वर की राह में बंदे को हर कुछ सहन करने के लिए तैयार रहना चाहिये और बाधाओं को हंसते हुए झेलना चाहिये। इस घटना के बाद से बाबा फरीद पश्चिम अजोधन में प्रकट रूप से रहने लगे तथा लोगों को दरश देने लगे।

उपरोक्त रवायतों की सत्यता पर अविश्वास न करते हुए भी लगता यही है कि बाबा फरीद के अजोधन में निवास का कारण व्यावहारिक सुविधा का होना था। अजोधन बड़े नगर से दूर होने के कारण राजनीतिक दांव पेंच तथा उथल पुथल से दूर था। संभव है बाबा फरीद इबादत और रियाजत दोनों ही दृष्टियों से एक शांत तथा एकान्त स्थान होने के कारण अजोधन को पसंद किये हों। यद्यपि कुछ महात्माओं ने अपनी साधना के लिये नितांत अनुपयुक्त स्थानों का भी चयन किया है। जो भी हो यह निर्विवाद है कि अजोधन राजनैतिक उथल पुथल से दूर पंजाब के आंतरिक आंचल में अशिक्षित तथा गंवार वासिन्दों का कस्बा था जहां पर ज्ञान और प्रेम का प्रवेश पहुंचाने वाले एक महात्मा की आवश्यकता थी। बाबा फरीद ने अजोधन को अपना कर्मस्थान बनाकर इस आवश्यकता की पूर्ति ही नहीं की प्रत्युत उस छोटे से कस्बे को मुस्लिम शिक्षा का

केन्द्र और पीड़ित मानवता का तीर्थस्थल बना दिया । बाबा फरीद की दरगाह (समाधि) पाकपाटन (अजोधन) में ही है । यह स्थान सिख शासनकाल में भलीभांति रक्षित रहा और ब्रिटिश युग में इसकी सुरक्षा तथा इस क्षेत्र की प्रगति का सराहनीय प्रयास किया गया । पाक पाटन को मांट गोमरी जिले की तहसील भी अंग्रेजी शासन काल में बना दिया गया था । अब भी बाबा फरीद के वंश के सज्जन दानशील पाक पाटन में हैं और उस क्षेत्र में प्रभावशाली माने जाते हैं । दरगाह शरीफ पर आने वाले तीर्थ यात्रियों द्वारा प्राप्त खैरात तथा जकात उनकी आय का अच्छा स्रोत है । जिससे वे अरब तथा अपने परिवार की लगर (नि:शुल्क भोजनालय) और खानकाह (मुसाफिर खाना) की परम्परा का निर्वाह करते आ रहे हैं ।

जिस समय बाबा फरीद अजोधन में आये उस समय वह वह उनके साथी बहुत ही फटे हाल अवस्था में थे । उनके वस्त्र फटे हुए तथा बाल धूल से अटे हुए थे । यात्रा की थकान का चिह्न उनके चेहरों से स्पष्ट झलक रहा था । इन लोगों ने अजोधन गांव में जाकर एक नीम के पेड़ के नीचे विश्राम किया । पास ही एक कुंआ था । कुंए पर एक व्यक्ति जिसका नाम कालू था और जो जाति का नाई था पानी भरने आया । इसी समय बाबा साहिब भी वजू करने के उद्देश्य से कुंए पर गये कालू नाई ने एक दरवेश को फटेहाल देखकर आश्चर्य व्यक्त किया । उसने बाबा फरीद के बाल संवारने तथा उनके वजू के लिये पानी खींचने की अनुमति चाही । बाबा साहब ने उसकी भक्ति तथा प्रेम देखकर बहुत ही प्रसन्नता व्यक्त की । वह आजीवन कालू नाई के परिवार पर कृपालु रहे और उसे अपना मुरीद भी बनाया । एक रवायत के अनुसार उन्होंने कालू को एक प्रमाण पत्र भी दिया था जिसमें लिखा था कालू नाई इस दरवेश को बहुत ही प्रिय है । जिस व्यक्ति का भी कुछ सम्बन्ध मुझसे है वह और उसके उत्तराधिकारी सदैव कालू तथा उसके परिवार की सेवाओं को, दूसरों की तुलना में प्राथमिकता दें ।

बाबा फरीद के अजोधन में आकर बसने का परिणाम यह हुआ कि अनेक सूफी दरवेश मुस्लिम धर्मशास्त्री तथा महात्मा लोग आकर वहाँ बसने लगे जिससे अजोधन ज्ञानियों, मौलवियों और दरवेशों का नगर सा बन गया। दूर दूर के स्थानों से साधारण जनता चली पाक लोक के पाटन में गाती हुई बाबा फरीद के दर्शन तथा दरश पाने के लिए उमड़ पड़ी। उनकी ख्याति हवा की तरह चारों तरफ फैलने लगी। देश के अन्य विद्वान सूफी तो आपकी ओर आकर्षित हुए ही विदेशों के महान संतों का भी अजोधन में आगमन होने लगा। कहा जाता है कि बाबा फरीद के मुलतान में निवास के समय शेख जलालुदीन तबरेजी सुहरावदी वहाँ आये थे। बाबा फरीद की ख्याति सुनकर वह वहाँ आये और भेंट स्वरूप एक अनार दिया। बाबा फरीद उस समय रोजा रक्खे हुए थे इसलिये उसके दानों को उपस्थित लोगों में बांट दिया। उस समय बाबा साहब का पाजामा बुरी तरह फट चुका था परन्तु उनकी सांसारिक उदासीनता का यह आलम था कि वे जो भी धन या सामग्री उन्हें प्राप्त होती उसे अपने ऊपर न खर्च कर गरीबों को बांट दिया करते थे। शेख जलालुदीन तबरेजी ने इस अवसर पर अपनी आप बीती सुनाते हुए बाबा साहब के संतोष की प्रशंसा की। उन्होंने बताया कि बोखारा के दरवेश (जलालुद्दीन तबरेजी) का पाजामा फटने पर उन्होंने ७ वर्ष तक दूसरा पाजामा बनवाने का अवसर तथा साधन नहीं पाया। इस लम्बी अवधि में वह कमीज के दामन से ही अपनी लज्जा ढकते रहे। हजरत जलालुदीन के लौटने के उपरान्त बाबा फरीद की दृष्टि अनार के एक दाने पर पड़ी जो भूमि पर पड़ा हुआ था। उन्होंने उसे उठाकर मुंह में डाल कर रोजा समाप्त किया। इस दाने को खाते ही उन्हें आध्यात्मिक जगत का व्यापक ज्ञान होने लगा। इस चमत्कार को देखकर बाबा फरीद को समूचे अनार के न खा पाने का दुख हुआ। जब उन्होंने इस घटना की सूचना अपने पीरो मुरशिद ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार तकी को मुल्तान आने पर दी तो वह बोले कि अनार के केवल उसी एक दाने में दैवी रहस्य समाहित था।

बाबा शैख फरीद का देहावसना -

मृत्यु एक दैवी नियम है। संसार के महान ज्ञानी संत महात्मा सम्राट और अधिपति सभी को एक न एक दिन इस संसार से अलग होना ही पड़ता है। परन्तु संसार के मोहपाश में बंधे हुए प्राणियों के लिये मृत्यु जितनी भयप्रद तथा कष्ट कारक होती है, सांसारिक सुख की लिप्सा से विरक्त मनीषी महात्माओं के लिए उतनी आह्लादकारी। सूफी संतों के लिए तो मृत्यु एक वरदान है कि जिसके द्वारा बंदा अपने खुदा से मिलता है। बाबा शैख फरीद ने अपने जीवन में ९२ वर्ष उसी मानवता की सेवा में व्यतीत कर सन् १२६५ ई० (६६४ हि०) में मुहर्रम माह की ५ वीं तारीख को अपने महबूब (खुदा) के अस्तित्व में समाहित हो गये। मृत्यु के लगभग दो माह पहले बाबा साहब ने अपने मुरीद हजरत निजामुद्दीन औलिया से भेंट कर उन्हें आशीर्वाद दिया और उन्हें अपनी निकट मृत्यु के विषय में स्पष्ट संकेत दिया तथा उनको चिश्तिया संप्रदाय का उत्तराधिकारी नियुक्त कर उन्हें लतीफा पद के संबंध में आवश्यक निर्देश दिये।

मुहर्रम की ५ वीं तारीख को शाम के समय बाबा साहब की दशा गंभीर हो गई। इशा की नमाज के बाद वह बेहोश हो गये। कुछ देर के बाद होश में आने पर फिर वजू किया और नमाज पढ़ने लगे। जिस समय वह सिपदे में थे उनकी जबाने मुबारक पर पवित्र कुरान की वह आयत थी -

या ध्यायें या क्ययूम (ईश्वर शाश्वत है) और इन्हीं शब्दों के साथ उनकी आत्मा परमात्मा के शाश्वत अस्तित्व में विलीन हो गई और दरों दीवर के एक स्वर गूंजा- दोस्त वा दोस्त वेवस्ते (दोस्त अपने दोस्त में गया)

बाबा फरीद के इस शास्वत मिलने ने उनको जितना आनंद दिया उसी अनुपात में उनके वियोग जन्म दुख से उनके मुरीदों प्रशंसकों तथा मस्तो के हृदय को आच्छादित कर दिया। आग की लपटों की भांति देहावसान का समाचार कुछ क्षणों में अजोधन तथा उसके आस पास फैल कर समस्त समुदाय शोकाग्नि की

ज्वाला में तड़प उठा । हजारों की संख्या में हिन्दू मुसलमान अपने प्रिय संत के अंतिम दर्शन और उसे श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये उमड़ पड़े ।

अंतिम संस्कार –

बाबा फरीद के शव को कफन पहनाने के लिए उनकी एक मुरीद वृद्धा महिला ने अपने हाथ के कते हुए सूत से बना हुआ कपड़ा भेंट करते हुए कहा मैंने इस कपड़े का एक सूत भी बिना वजू किये हुए नहीं करता है । मैंने इसे अपने कफन के लिये तैयार किया था परन्तु यदि इसे बाबा साहब के कफन के लिए तैयार किया था परन्तु यदि इसे बाबा साहब के कफन के लिये स्वीकार कर लिया जाता है तो मुझे विश्वास है कि परमेश्वर मेरे गुनाहों को माफ कर देगा और मुझको नजात देगा । बाबा फरीद के प्रिय पुत्र ने वृद्धा के प्रेम को देखकर उसका यह उपहार स्वीकार कर लिया और उसी कफन में बाबा फरीद का शव लपेटा गया । चूंकि बाबा फरीद साहब के देहावसना के समय उनके उत्तराधिकारी हजरत निजामुद्दीन औलिया अजोधन में उपस्थित नहीं थे इसलिये उनके शव को अस्थाई रूप में दफना दिया गया । जब हजरत निजामुद्दीन औलिया बाबा की मृत्यु का समाचार पाकर दिल्ली से अजोधन पहुंचे तब बाबा साहब के शव को निकाल कर उनके हुजरे (कुटिया) में स्थायी रूप में दफनाया गया । इस प्रकार जिस जगह पर बाबा फरीद ने जीवन भर खुदा की इबादत की थी और जहां हजारों बार कुरान पाक की आयतों की आयद की तिलावत हुई थी वहीं पर बाबा की स्थाई समाधि बना दी गई । यह स्थल अब पाकपाटन (पाकिस्तान) में है । और ने उर्स के अवसर पर वहां अनगिनत लोग प्रतिवर्ष अपने श्रद्धापुष्प चढ़ाने जाते हैं ।

—

अध्याय — ३

ध्वनि ग्रामिक अनुशीलन

अध्याय — ३

ध्वनि ग्रामिक अनुशीलन

ध्वनिशास्त्र के अन्तर्गत हम अध्ययन के लिये स्वीकार की गई भाषा की उन ध्वनियों का अध्ययन करते हैं जो उस विशेष भाषा के अन्तर्गत प्रयुक्त होती हैं। साधारणत: अध्ययन का विषय उस भाषा की ध्वनियाँ जैसे - स्वर, अर्द्धस्वर व्यंजन, सुर, तान, सुराघात एवं बलाघात का अध्ययन किया जाता है।

ध्वनिशास्त्र का एक मुख्य अंग ध्वनिग्राम शास्त्र है। ध्वनिशास्त्र के अध्ययन की दृष्टि से जो ध्वनियाँ प्राप्त होती हैं, उनके ध्वनिग्राम बनाये जाते हैं। Bloom Field — के शब्दों में — ध्वनिग्राम को A minimum Unit of distinctive features कह सकते हैं।

कबीर के पूर्व प्राप्त विभिन्न साहित्य का वर्णग्रामिक विश्लेषण एवं ध्वनि, तुक मात्रा पद वाक्य गठन आदि का अध्ययन करने के पश्चात यह कह सकते हैं कि कबीर पूर्व खड़ीबोली में ४० ध्वनिग्रामों की स्थापना की जा सकती है। इनमें से ३९ खंडीय (Segmental Phoneme) तथा १ खंडेतर ध्वनिग्राम (Supra Segmental Phoneme) हैं। खंडीय ध्वनिग्रामों के अंदर १० स्वर एवं २९ व्यंजन ध्वनिग्राम हैं।

मूल स्वर- अ, आ, इ, (इ̥) ई, उ (उ̥) ऊ

ए(ए̥) ऐ (अए, अइ) ओ (ओ̥)(

संयुक्त स्वर - औ (अओ, अउ)

उपर्युक्त ध्वनिग्राम जब रूप रचना के उद्देश्य से एक दूसरे के निकट आते हैं तो परस्पर

प्रभावित होते हैं। इसी प्रभाव से इनमें परस्पर परिवेशगत ध्वन्यात्मक विशेषताएं उत्पन्न होती हैं और ये सम्ध्वनि कहलाती हैं।

कबीर से पूर्व खड़ीबोली साहित्य केवल लिखित रूप में ही प्राप्य है। इसलिए उपर्युक्त ध्वनिग्रामों के संध्वनियों (Allophones) की ध्वन्यात्मक (Phonetic-Nature) प्रकृति उच्चारण स्थान, उच्चारण प्रयत्न, श्रौतीय प्रभाव (Acoustic effect) के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है ध्वनिग्रामिक वितरण (Phonemics-Distribution) के फलस्वरूप यह अनुमान किया जा सकता है कि उपर्युक्त स्वर हिन्दी समताओं में आधुनिक मानक हिन्दी (Standard Hindi) के समान हैं। अतएव आधुनिक मानक हिन्दी के सन्दर्भ में कबीर पूर्व खड़ीबोली काव्य में प्राप्य स्वरों को मान-चित्र में निम्नरूप में स्थापित कर सकते हैं।
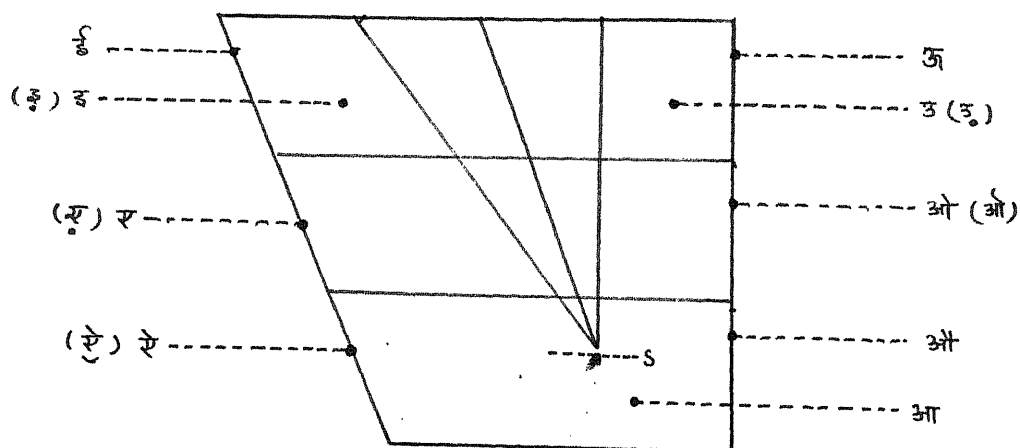
समान ध्वन्यात्मक परिवेश में घटित होने के कारण तथा स्वल्पान्तर युग्म में अर्थभेदकता के गुण से समन्वित होने के कारण उपर्युक्त स्वरों की ध्वनिग्रामिक (Phonemics) स्थिति आधुनिक मानक हिन्दी में सहज ही सिद्ध हो जाती है । अन्य आ०भा०आ० भाषाओं में भी इनकी यही स्थिति है । अतएव कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में स्वल्पान्तर युग्मों के दृष्टान्त देकर इनकी ध्वनिग्रामिक स्थापना की विशेष आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है ।

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में अनुस्वार गौण ध्वनिग्राम के रूप में पाए जाते हैं । इनकी स्थापना स्वल्पान्तर युग्मों के आधार पर सिद्ध होती है ।

<u>व्यंजन ध्वनिग्राम</u>

" व्यंजन वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में वाह्यवर्ग के उच्चारण अवयवों द्वारा श्वास के मार्ग में पूर्ण या अपूर्ण बाधा उपस्थित की जाती है ।"[१]

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में स्वल्पान्तर युग्म (Minimum Pairs) के आधार पर २६ व्यंजन ध्वनिग्रामों की स्थापना की जा सकती है । श्वास निकलने की रीति सम्बन्धी प्रयत्न के आधार पर व्यंजन ध्वनियों का विवरण निम्नलिखित है --

स्पर्श --

क् ख् ग् घ्
ट् ठ् ड् ढ्
त् थ् द् ध्
प् फ् ब् भ

---

१. जयकुमार ...

स्पर्श संघर्षी	च् छ् ज् झ
अनुनासिक	(ङ०) (ञ) ण् न् (न्ह) म् (म्ह)
पार्श्विक	ल् (ल्ह)
लुंठित	र्
उत्क्षिप्त	(ड़) (ढ़)
संघर्षी	श् (ष्) स् ह्
अर्द्धस्वर	य् व्

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में अधिकांशतः या पूर्णतः समस्त वही व्यंजन प्राप्त हुए हैं जो ,कबीर पूर्व संस्कृत पाली, प्राकृत अपभ्रंश में वर्तमान थे। कबीर पूर्व खड़ीबोली काव्य में स्पर्श व्यंजन घ् तथा स्पर्शसंघर्षी व्यंजन झ के पश्चात् आने वाले क्रमशः ङ० तथा ञ ध्वनियों की ध्वनिग्रामिक स्थिति स्पष्ट नहीं है। अधिकांश रूप में इन वर्णग्रामों के स्थान पर अनुस्वार प्रयुक्त हुआ है। परन्तु फिर भी उस काल काल में यह ध्वनियां संस्वन के रूप में अपना स्थान बनाये हुए हैं। क वर्ग के पूर्व न् (ङ०) तथा च वर्ग के पूर्व न (ञ) संस्वन के रूप में सुनाई पड़ता है। [illegible] उपर्युक्त उदाहरणों को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि यह दोनों संस्वन ध्वनियां केवल माध्यमिक स्थिति में ही प्रयुक्त हुई हैं — आरंभिक तथा अंतिम स्थिति में इनका कोई स्थान नहीं है।

उदाहरणार्थ —

अंगुल	अङ०गुल	गो०बा०म० १।७
अंजन	अंजन	गो०बा०म० २३०

इसी प्रकार स्वल्पान्तर युग्म में व्यतिरेकात्मक रूप से ण की स्थिति एक ध्वनि के रूप में है। परन्तु कहीं कहीं ण तथा न मुक्त परिवर्तन (free-Variation) की स्थिति में है।

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में अर्द्धस्वर 'य' की स्थिति अत्यन्त ही विस्मयजनक है। कहीं कहीं तो यह आरंभिक माध्यमक तथा अंतिम तीनों ही

स्थितियों में समान रूप से प्राप्त होता है । परन्तु कुछेक स्थानों पर "इआ" तथा "उ" स्वर का प्रयोग किया गया है और वह भी केवल माध्यमिक तथा अन्तिम स्थिति में ही ।

तालव्य श तथा मूर्धन्य ष ध्वनिग्राम की स्थिति पाली, प्राकृत तथा अपभ्रंश में ही लुप्त हो चुकी थी ।[१] अतएव इसे स लिपिग्राम का सहलिपिग्राम ~~निश्चर स के एक स्वन~~ मान कर स के एक संस्वन का बोधक स्वीकार करना चाहिये । क्योंकि "स" ध्वनि तालव्य ध्वनियों के पूर्व श तथा मूर्धन्य ध्वनियों के पूर्व ष ध्वनि स्वत: ही सुनाई पड़ती है ।

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में महाप्राण ध्वनियों के कुछ नये रूप विकसित हो गये थे । अर्थात् न, म, ल के महा प्राण रूप क्रमश: न्ह, म्ह, ल्ह, नह ध्वनि ग्रामों के रूप में विकसित हो गये थे जहाँ तक न्ह, संस्वन का प्रश्न है यह आरंभिक माध्यमिक तथा अंतिम तीनों ही स्थितियों में प्रयुक्त होता था । अत: हम कह सकते हैं कि न्ह एक निश्चित ध्वनिग्राम के रूप में प्रयुक्त होता था । लेकिन इसके विपरीत न्ह, म्ह की ध्वनिग्रामिक स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है ।

इस प्रकार कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में पाये जाने वाले २६ व्यंजनों को आधुनिक मानक हिन्दी के संदर्भ में पूर्ण रूप से व्यक्त करने के लिये निम्नलिखित तालिका उपयुक्त हो सकती है —

नामदेव तथा गोरखबाणी में श, तथा ष ध्वनियों की स्थिति नहीं मिलती है । संभवत: मुद्रण दोष के कारण यह ध्वनियाँ छूप गयी थीं ।

	औष्ठ्य	दन्त्य	वर्त्स्य	मूर्धन्य	तालव्य	कंठ्य	तालव्य
स्पर्श	प् ब फ भ्	त् द् थ् ध्		ट् ड् ठ ढ		क् ग् ख् घ्	
स्पर्श संघर्षी				च	प् ण ह् स		
नासिक्य	म् (म्ह)		न् (न्ह)	ण्		(ङ०)	
पार्श्विक			ल्(ल्ह)				
लुंठित			र्				
उत्क्षिप्त				(ड़)(ढ़)			
संघर्षी			स्			ह्	
अर्द्धस्वर	व्				य्		

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में अनुस्वार की स्थिति अत्यंत ही विवादास्पद है। अनुस्वार उस युग में गौण ध्वनिग्राम के रूप में प्रयुक्त हुआ है। गौण ध्वनिग्राम का प्रयोग मुख्य या संयुक्त ध्वनिग्रामों की तरह स्वतंत्र रूप से नहीं होता अपितु जब दो या अधिक ध्वनिग्राम मिलकर अपेक्षाकृत लम्बे रूप जैसे शब्द या वाक्य निर्मित करते हैं तब ये सुनाई देते हैं। कभी कभी एक ध्वनि-ग्राम के साथ भी इन्हें सुना जा सकता है।

इसी कथन के अनुसार, कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में अनुस्वार जहाँ एक ही ध्वन्यात्मक परिवेश में आने पर व्यतिरेकात्मक होकर अर्थभेदक होते हैं वहीं उन्हें एक ध्वनिग्राम की संज्ञा दी जायगी अन्यथा नहीं। यही कारण है कि कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य का यह गौण ध्वनिग्राम कहा जा सकता है, क्योंकि यह कभी कभी ध्वनिग्राम होता है कभी नहीं।

सासु गो०ला० पद ५६
सांस गो०बा०स० ५२

उपर्युक्त उदाहरण में आरम्भिक स्थिति में ही अनुस्वार के कारण अर्थभेद हो गया है अत: यहाँ हम इसे ध्वनिग्राम मान सकते हैं।

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में निम्नलिखित ६ संस्वन मिलते हैं।

(ङ०) सङ्ग्ण- गो०बा०स० २४६
पूङ्ग्ण ना० २२६

((ञ) निरञ्जन - गो०बा० म० ४४

(ण) मुण्ड गो०बा०स० २५१
ब्रह्मण्ड गो०बा० पद १६

(न) सन्यासी गो०बा०स० ६४
नान्हाँ गो०बा०स० २०६
सुन्दरी गो०बा०स० २४०

(म) अविलम्ब — अविलम्बि - ना० २०५
अम्बर — गो०बा०पद २६

(—̐) यह शुद्ध अनुनासिकता है जो उपर्युक्त ध्वन्यात्मक परिवेश के अतिरिक्त घटित होती है —

संसा	गो०बा०म० २३५
पंच	गो०बा०म० २३७
संसार	गो०बा०म० ६०

संक्रामक अनुनासिकता - परवर्ती न् म् के प्रभाव से उनके पूर्व की ध्वनि अनुनासिक हो जाती है —

असगैंन	गो०बा०स० २५८
नन्हाँ	गो०बा०म० २०६
काँचली	ना० २१६

स्वर ध्वनिग्राम वितरण

	आरम्भिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
अ	आम- गो०बा०स० १	अनर्षिवर- गो०बा०ग्या०ति०२१	अन्तगो०बा १
	अणावार्य - गो०बा०१५६	ललिमहु-फ०रा०पु०१।७	कुटुम्ब-गो०बा०स०१७६
	अघटन ना० १२०	संतन्ह ना० १५१	चक्र- ना० ४३
अं	अंजन- गो०बा०स० २३०	असंख-ना० २१२	आकासं-गो०बा०सि०द०
	अंगुल-गो०बा०स०११६	पाखंडी-गो०बा०स०४६	देवं-गो०बा०स०३१
आ	आन- ना० ११६	गंवाया ना० १२०	कीआ - ना० २१६
	आसन फ०० आभा महला १०	कहार-गो०बा०म० २३७	गुणापंता गो०बा०म०१

	आरम्भिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
आं			
	आंखिन- गौ०बा०स० १३५	गांठि - गौ०बा०स० २३६	गुणावंता-गौ०बा०स१
		सांचा- गौ०बा०स० १०६	विधातौ०प०१०७
इ			
	इला-गौ०बा०प०१६	मरिये गौ०बा०स० १४६	आनि-गौ०बा०स० ३१
	इहै - ना० ६	नहआ-ना० २०३	जाइ-ना० ११८
		गाइत्री ना० २०८	उरमति = था० १०
इं			भीनं गौ०बा०स० १४६
			बाघलीं-गौ०बा०पद ४८
			जननीं-गौ०बा०पद ४६
य इ		डौड़गी-गौ०बा०स०१०८	दीइ - गौ०बा०पद ३८
		फिरि फिरि -गौ०बा०२०३	बाइ-गौ०बा०स१४५
		गाइबा- गौ०बा०म० ६	कौइ -गौ०बा०स०१८१
			सौइ - गौ०बा०स० १८६
			मुइ- ना० १८
ई	ईस्वर-गौ०बा०स०१४४	गंभीर गौ०बा०स० २३१	गाईं-गौ०बा०प०२०
	ईंग - गौ०बा०म० ६४	फरीदै- क०आसा०५	तैरी फ०आभाम० ५
उ			जौउ - गौ०बा०पद १६
उ	उभर -फ०श्लोक ८४	सुत - ना० ६०	लिखउ - ना० २१७
	उतरै- ना० ४	बीठुला- ना० २१८	बनु - ना० १४६
	उपला-गौ०बा०पद ५६	अकुय- गौ०बा०स० २३३	नांउ-गौ०बा०स० १७६

ओं			मूधलौं-गो०बा०पद २६
औ	औगुन -गो०बा०स०२६०	ब्यौपार-गो०बा०पद १०	कूवौ-क०श्लोक ६२
	औधूता-गो०बा०पद ६२	गौतम-ना० १६०	एकौ-गो०बा०स० २४२
	औघट ग०१२०	गौतम-ना० १६०	माधौ - ना० ६६
औं		दोह-गो०बा०पद २७	
		कोह-गो०बा०स० १८१	
ऋ		मृतलोक-गो०बा०प० ४६	रातृ-गो०बा०प्रा०त०४

व्यंजन ध्वनिग्राम वितरण

	आरंभिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
क	कला-ना० १३७	सकल ना० १३८	तिकल ना०१४२
	नाङ्ग गो०बा०स० १५।२	पुकारे-गो०बा०स० २६२	इश्क-क०आभा०मल्ला १
	कीजै-गो०बा० पद ३४	बिकल्ता-गो०बा०स० २६१	उदिक-गो०बा०स०२५६
ख	खंदकारा-ना० १५७	बरखसंद-ना० १५७	सुख-ना० १६२
	खुदाई-क०आ०म० २	गोरखनाथ-गो०बा०स०२२१	सुख-क०आभा०म० १
	खटपट-गो०बा०म० १४८	मुखियारा-गो०बा०स० १४२ रूख-गो०बा०स०१७०	
ग	गरबत्ना० १४०	उपगारीग०१४३	दोजग-ना० ५१
	गौर-क०आभा०म० ६	पुरिषा गर्ता-गो०बा०स० २५६	दोग-गो०बा०स०१४८
	गहिर्ला-गो०बा० पद ३४	गगन-गो०बा०प० १७६	अष्टांग-गो०बा०म० ७३३

ब अबती बलबल गो०बा०द १३६ सब गो०ब०प० २
सब गो०बा०स० १३७

भ भा- गो०बा०सा० ६६ सभा -गो०बा०सा० १२१ आरंभ गो०बा०प० १३६
भभिता-गो०बा०प० ११७ निरंभ-गो०बा०प० १०२ निरालंभ गो०बा०प०१६८

म महिं गो०बा०प० १
महिये- गो०बा०प० १४६

स्वर ग्राम क्रम (स्वर संयोग या स्वर गुच्छ)

जब दो या दो से अधिक स्वर एक ही क्रम में इस प्रकार से प्रयुक्त होते हैं कि उनके मध्य में एक अल्प विवृति के अतिरिक्त अन्य ध्वनि न हो तो ऐसे संयोग को स्वर संयोग की संज्ञा दी जाती है। दो स्वरों के संयोग में, संयुक्त स्वरों की भाँति उच्चारण प्रयत्न एक ही न होकर भिन्न भिन्न प्र० होते हैं। उनका संयोग मात्र ही हो पाता है।

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में, आधुनिक मानक हिन्दी की भाँति दो या दो से अधिक स्वरों के संयोग अत्यधिक मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं। कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में एक साथ अधिक से अधिक चार स्वरों का संयोग मिलता है। उदाहरणार्थ -

चार स्वरों का संयोग -

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में चार स्वरों का परस्पर संयोग अंतिम स्थिति में ही होता है - आरंभिक तथा माध्यमिक स्थिति में यह संयोग नहीं प्राप्त होते हैं -

इ आ इ ऊ - धिआइऊ ना० ११५

तीन स्वरों का संयोग

क्रमश: आदिम माध्यमिक तथा अंतिम तीनों ही स्थितियों में यह स्वर संयोग कबीर पूर्व खड़ीबोली काव्य में पाया जाता है ।

आदिम स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
आ इ आ- आइआ- ना० २०६		अ इ आ - रमइआ-ना०२१०
आ इ आ- आइआ- ना० १४५		आ इ आ- ललाइआ-ना०२०६
अ इ औ - अइऔ-ना० १७५		इ आ ई - घिआई-ना० २१२
अ इ ए अइए-ना०१०३		ईं आ इ- जीआइ-ना० २१८
आ इ ऊ-आइऊ-ना० २१८		अ इ उ महउ ना० २११
आ ए उ- आएउ-फ० श्लोक १०१		ए अ ऊ - लैअऊ-ना० २०७
		अ इ ए- महइए-ना० २०३
		आ इ ए - जलाइए-फ०श्लोक ७३
		आ इ ए - कलाइए-फ०आमाम०७

दो स्वरों का संयोग

आदिम स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
अ		
	अ, इ- मइया- ना० २२४	अ, इ-आवइ-फ०रागसुही
	अ, ई- कईंयन- गी०वा०पद० २७४	अ,ईं-गईं ना० ११६
अ,उ - अउघट - ना० २१८	अ, ऊ - कऊणा फ०श्लोक ४६	अऊ कल्पऊ-फ०श्लोक १०२
		अ ऊ कुभऊ -ना० २२३
		अ ए- पए- फ०श्लोक १००
		अ,औ- चितऔ-गी०वा०३१
आ		अ, औ गऔ गी०वा०ग्वा०६

आरम्भिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
उ	उ,अं-भुजंगम-गौ०बा०पद५०	
	उ,आ-दुआर-ना० २११	
		,उ इ-पुइ-ना० २१८
		उ,ई सुई-गौ०बा०पद १६
		उ ऊ-तुरू-ना० २१८
ऊ		ऊ, अ- दुअ-ना० २०५
		ऊ,आ-दुआ- ना० २०६
ए		
		ए,इ-लेइ-गौ०बा०पद २६
		ए इ-नामदेइ-ना० २०४
		ए,उ-नामदेउ-ना० २२१
	एऊ-देऊलाहिं ना०१८४	उ ऊ-देऊ-ना०२२३
ऐ		
	ऐ,आ पैआस- ना० २१५	
औ		औइं हौइं,गौ०बा०प०७०
	औ,इ-सौइबा-गौ०बा०पद १२६	औइ कौइ-गौ०बा०पद १४
	औ, इ-लोइन क० श्लोक १६	औइ- कवढ़ौइं-ना० २२५
	औ, इ भविऔभि-क० श्लोक २३	औ,उ कौ उ-ना० २३०
		औऊ-दौऊ-ना०१९५
		औ ऐ -बैबलौऐ-ना०१३५

आरम्भिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
औ		आ, आ- नौआ - ना० १६
		औ र - मण्यौर ना०१३५

संयुक्त व्यंजन या व्यंजन संयोग

विभिन्न शब्दों के अन्तर्गत जब दो या दो से अधिक व्यंजन निकट आते हैं तो व्यंजनों के उस परस्पर संयोग को व्यंजन संयोग कहते हैं। ऐसे व्यंजनों के मध्य में कोई स्वर ध्वनि नहीं प्राप्त होती है। कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कम से कम दो एवं अधिक से अधिक पांच व्यंजनों का ही संयोग मिलता है।

१. तीन व्यंजनों का परस्पर संयोग

	न्+ध्+प	बंध्यौ ना० १६६
	प्+प्+न्	घंह-गो०बा०स० ११२
	प्+प्+न्	घंह-गो०बा०स० ११२
न्--	न्+घ्+प्0	बान्ध्या- गो०बा०स० १५३
	न्+द्+र	मछ्यंह गो०बा०स० ३६
	न्+द्+र	मछिंह-गो०बा० स० ३६
	न्+द्+र	मिंछा गो०बा ०स० ६४
	न्+त्+र	मंत्र - गो०बा०पद १२
	न्+ध्+य	सन्ध्या गो०बा० प० ५
	न+द्+्र	समुंह-गो०बा०४१६ तिमौर
	स्+त+र	समहस्त्र गो०बा०पंद्रहनियौं १
	स+व+र	सुस्वंती - गो०बा० आत्माबोध १३
	न्+प+म	सुन्यं - गो०बा०पद ५८

चार व्यंजनों का संयोग

प्+र्+न्+त	प्रांति गो०ना०सा० १०७	
न्+स्+त्+र्	सहंस्त्रदल	गो०पद १३०
न्+स्+त्+र्	संस्त्र	सौका०प० १६८

पांच व्यंजनों का संयोग

प्+र्+न्+द्+र	मच्छेंड	गो०ना० पद ३३
म्+प्+न्+त्+र्	म्यंत्र - गो०ना०सा० ४०	

२.दो व्यंजनों का परस्पर संयोग

व्यंजन संयोग मानक हिन्दी की भांति आदिम तथा माध्यमिक स्थिति में ही प्राप्त होते हैं। अंत में स्वर का मिश्रण हो जाता है। व्यंजन गुच्छों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

(१) एक रूप या समवर्गीय व्यंजन गुच्छ

(२) भिन्न रूप या भिन्न वर्गीय व्यंजन गुच्छ

(१) एक रूप या समवर्गीय व्यंजन गुच्छ

जबदो व्यंजन एक ही अनुक्रम में आ जाते हैं तो उन्हें समवर्गीय व्यंजन गु गुच्छ कहते हैं। इस प्रकार के निकट उच्चरित होने वाले दोनों व्यंजन यदि एक सी विशेषताओं के होते हैं तो उन्हें व्यंजन द्वित्व की संज्ञा दी जाती है। लेकिन कुछ मान्यताओं के अनुसार यह माना जाता है कि यह नामकरण वैज्ञानिक नहीं है। वैज्ञानिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि इनमें (व्यंजन द्वित्व) में एक ही व्यंजन का दो बार उच्चारण नहीं होता है बल्कि एक ही व्यंजन की मध्य की स्थिति या अवरोध की स्थिति प्रलम्बित या दीर्घ हो जाती है। प्रथम अदीत स्पर्श और अन्तिम में कोई अंतर नहीं आता है।

स्पर्श महाप्राण या स्पर्शसंघर्षी महाप्राण व्यंजनों का द्वित्वरूप में उच्चारण नहीं होता है। इसका कारण यह है कि व्यंजन का महा प्राण होना और कुछ नहीं केवल स्फोट में अधिक हवा का निकलना है और चूंकि द्वित्व व्यंजन में प्रथम व्यंजन का स्फोट होता ही नहीं है इसलिए वह महाप्राण भी नहीं होता है। लेकिन में भले ही द्वित्व का प्रथम व्यंजन महाप्राण लिखा हुआ मिले किन्तु उच्चारण में वह अल्पप्राण रूप में ही सुनाई देता है।

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में निम्नलिखित व्यंजन द्वित्व मिलते हैं -

१. स्पर्श व्यंजन द्वित्व

माध्यमिक स्थिति

त्+त	उत्तर	गो०बा०स० २६७
त्+त	उत्तम	गो०बा०स० २६०
ग्+ग	उग्गा	गो०बा०पद १६
क्+ख्	अन अख्खर-गो०बा० ग्यारह तिथि २१	
ल्+ल्	उल्लिम - ना० १६८	
ड्+ध	टिड्ढे - फ०श्लोक १०५	
ड्+ड	बड्डयाँ फ० श्लोक २४	
क्+क	मुक्कियाँ	फ० श्लोक १०
द्+द	लद्दिआ	फ०श्लोक ११
ड्+ड्	डड्डा-फ०श्लोक २	
प्+प्	सँप्पा	ना० १४३

२. अनुनासिक व्यंजन द्वित्व

न्+न	जगन्नाथ	गो०बा० पद ६

न्+न्	म्यन्नं	गो०बा०पद १२
न्+न्	भिन्न	ना० १८१
न्+ न्	सुन्नै	ना० १६२
न्+न्	सिन्नी	फ० श्लोक ७४

पार्श्विक व्यंजन द्वित्व

ल्+ल्	अल्लहु	फ० श्लोक ११०
ल+ले	अल्लासेती	फ० श्लोक १०८
ल+ प	अल्लाऐसी	फ० रागसुही २।२
ल् +ल्	चल्लि आं	फ० श्लोक १०१

स्पर्श संघर्षी द्वित्व

च्+च्	कच्चिआं	फ०आसा महला १
ज्+ज	भिज्जो	फ० श्लोक २८
ज+ज	सिज्जो	फ० श्लोक २८
च्+च्	सच्चावं	फ० श्लोक १०८

२. भिन्न व्यंजन संयोग

यदि निकट उच्चरित होने वाले दोनों व्यंजन भिन्न ध्वन्यात्मक विशेषताओं वाले हों अर्थात् भिन्न उच्चारण स्थानों तथा प्रयत्नों से उत्पन्न हैं तो वे भी भिन्न व्यंजनात्मक संयोग कहलाते हैं ।

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में प्राप्त व्यंजन संयोगों के आधार पर यह कहा जा सकता कि संयोग के द्वितीय सदस्य के रूप में अधिकांशत: य, व एवं र व्यंजन ही आते हैं ।

आरम्भिक स्थिति

व्यंजन +प

क्+प   प्या गौ०ग्रा०स० २५५

क्+प   प्युं - गौ०ग्रा० स० ८१

स्+प   प्यौं - ना० १३०

स+प्   स्यागी - ना० ७८

ग्+प्   ग्यानै ना० ७३

घ्+प्   ध्यानै - ना० ७३

ब्+प   व्यास - ना० ११४

ब् +प   व्यंतामीन -गौ०ग्रा० पद ३

द्+प   ज्यंद-गौ०ग्रा०स० ५५

त्+प   ज्यांगी गौ०ग्रा० स० ४५

प्+प   प्हं गौ०ग्रा० स० ११३

ब्+प व्यौपार गौ०ग्रा० पद १०

ब्+प व्यौहार ना०भारती १३

माध्यमिक स्थिति

ग्+प श्रग्यानी - गौ०ग्रा० २२३

ग्+प श्रग्यारह   गौ०ग्रा०पद १२

व्+ प उरव्यंतहि   गौ०ग्रा०स० २४४

भ्+प श्रभ्यास -गौ०ग्रा० पद ५४

स्+प कुरै स्यौ गौ०ग्रा० पद ५५

घ्+प   कामध्यैनि- गौ०ग्रा०प० २०६

थ्+प   कथ्या ना० ७६

ष+प   पैष्पा ना० ६८

स्+प   दरस्या ना० १०७

व् प फाव्या ना० ११४

स+ प प्रगास्या गौ०ग्रा०प० ३०

ह्+पा माह्या गौ०ग्रा० ग्यारह ति२२

भ्+य श्रभ्यास थ ग० १६४

फ+प - समफ्या ना० मारवी १०

ल+च तौल्या - राग भारती १२

व्यंजन +र

सकर - प्रवन- गौ०ग्रा०प० ३६

माध्यमिक स्थिति

त्+र मित्र - गौ०ग्रा० पद ८

द्+र् मुद्र - गौ०ग्रा० पद १६

मुर्   प्रमत - गौ०ग्रा० ग्यारह ति

ग्+र   नग्र गौ०ग्रा०पद २

स+र   विश्राम - गौ०शा० पद ५३

द्+र   सुद्रगौ०ग्रा पद० ४६

व्यंजन+व

आरंभिक स्थिति

ग्+व - ग्वालिया-गौ०बा०पद २१
ज्+व- ज्वाला- गौ०बा०स० ११४
द्+व - द्वार - गौ०बा० पद ११
स्+व - स्वाद - गौ०बा०स० २५
स्+व - स्थान - गौ०बा० वरवै बोध १२
ज्+व - ज्वाला- ना० ११८

माध्यमिक स्थिति

श्+व - अश्वदान - ना० ६१
त्+व - तत्व - गौ०बा०व्य० ४६
स्+व विस्वाद - गौ०बा०स० १३६
ड्+व डूवै - का० पद सं० २३
व्+व - पृथ्वीपती-ना० १४६

अन्य व्यंजन संयोग

आरम्भिक स्थिति

न्+ह न्हासै -गौ०बा०स० २०१
प्+र प्रगट गौ०बा०पद० २६
म्+ह म्हारै - ना० १२५

माध्यमिक स्थिति

श्+न - आश्विन - गौ०बा० पद १४
म्+ह - आम्हैं - गौ०बा०स० २७३
द्+ष आदिष्ट - गौ०बा०स १६२
ष्+ट अष्ट - गौ०बा०प० ८३
न्+द इन्दी -गौ०बा०स० ५
त्+म आत्मा गौ०बा०प० ८३
म्+भ कुम्भ - गौ०बा० सि०द० ४
म्+ह धुम्हरा - गौ०बा० पद ४२
स्+त घरहस्ती - गौ० बा० ग्यार्ह० ३
न्+ह चुन्हा - गौ०बा० पद ४६
म्+भ जोगारम्भ-गौ०बा०प० २०
न्+द्र योगेन्द्र - गौ०बा० पद ३
म्+ह तुम्हारा-गौ०बा०स० २६६
न्+ह तैन्हैं - गौ०बा०पद ६०
ष्+ण तृष्णा- गौ०बा०पद १६

आरम्भिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति
	न्+त दिगन्तर - गौ०बा०प० २६
	र्+ल दुर्लभ - गौ०बा०स० १८८
	न्+द् - पन्द्रह - गौ०बा०पं०ति० १६
	स्+त पुस्तक गौ०बा० आत्माबोध १३
	श्+त विघ्न - गौ०बा० स० २०
	न्+द निन्द - गौ०बा०स० ३८
	ह्+य ब्रह्म - गौ०बा०पद ४५
	च्+छ मच्छ - गौ०बा० प्रा० ६
	न्+द् निंदर - गौ० बा०म० २०६
	ह०+ग्र सहग्ग - गौ०का०म० २६१
	न्+त सन्ताप- गौ०बा०स० ४४३
	न्+द - सन्देसा - गौ०बा०ग्या०
	न्+ह लंही - गौ०बा० पद ३८
	क+त भंतदान - ना० १४६
	स+ज मस्जिद - ना० १६२
	च+छ वाच्छावन ना० १६२
	त्+थ उत्थारी - ना० १६३
	क+म बम्से ना० १६३
	न्+स बन्सापा फ०श्लोक १८

अक्षर -

वह ध्वनि या ध्वनिसमूह जो हवा के एक भटके में उच्चरित होता है, अक्षर कहा जाता है । अतः यह स्पष्ट है कि एक अक्षर को विभिन्न भाषा ध्वनियों में तोड़ सकते हैं । किसी भी अक्षर में जितनी ध्वनियाँ होती हैं उनमें से

कुछ अल्पमुखर तथा कुछ अत्यधिक मुखर होती हैं। अल्पमुखर ध्वनियों को गह्वर की संज्ञा दी जाती है तथा अत्यधिक मुखर ध्वनियां शीर्ष (Peak) कहलाती हैं। यह कोई आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक अक्षर में शिखर तथा गह्वर ध्वनियां हों ही। बिना गह्वर ध्वनियों के केवल शिखर ध्वनियां ही अक्षर का निर्माण कर सकती हैं किन्तु मात्र गह्वर ध्वनियां स्वयं मिलकर अक्षर निर्माण नहीं कर सकती हैं। अत: हम कह सकते हैं कि केवल कुछ अपवादों को छोड़कर व्यवहारिक दृष्टि से किसी शब्द में जितने शीर्ष होते हैं उतने ही अक्षर होते हैं। अक्षर में अधिकांशत: कोई स्वर ही शिखर होता है। इसका कारण यह है कि व्यंजनों की अपेक्षा स्वर ही अधिक मुखर होते हैं।

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य का कोई भी प्रत्यक्ष उच्चरित रूप हमारे सामने नहीं है केवल लिखित रूप ही उपलब्ध है। अतएव अक्षर संरचना का वर्ण वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत करना कठिन तथा असंभव है। फिर भी आधुनिक मानक हिन्दी के संदर्भ में - स्वर ध्वनिग्रामों को शीर्ष मानक निम्नलिखित रूप में अक्षर का स्वरूप निर्धारित हो सकता है।

स — स्वर, व - व्यंजन

(१) केवल एक स्वर ध्वनिग्राम एकअक्षर का निर्माण कर सकता है —

स —	अ।कैला	गो०बा०स० २७
	अ।गनि	गो०बा०स० १८
	आ। दम्	गो०बा०स० ५३
	आ।धा	गो०बा०प० ५३
	इ।ला	गो०बा०पद १०
	ई।स्वर	गो०बा० पद ४६
	उ।जाला	गो०बा०प० ३४
	ऊं। वै	गो०बा०पद ४०
	ऊं।ग	गो०बा०पद ४६
	ऋ।रम	गो०बा०न० १६६
	ऐ।सा	गो०बा०पद ४३

- ए   गो०बा० १२७

उपर्युक्त शब्दावली में (-) चिह्न से चिह्नित केवल एक स्वर से ही एक अक्षर का निर्माण हुआ है।

लेकिन अपवाद के रूप में ह्रस्वतर अथवा जवित स्वर इ, उ आक्षरिक नहीं होते हैं। उदाहरणार्थ -

मइ   गो०बा० ५८
जा इ ।गौ   गो०बा०म० ११
जाइ।ला   गो०बा०पद ३४
जाइ । णा   गो०बा०प० ६७
ही इ । गी   गो०बा०पद० १० ८

२. सव   स्वर + व्यं

अ । जपा   गो०बा० स० १८
ए । क   गो०बा० पद ३
औ र ।   गो०बा० पद० ६

३. व, स

जा।ऊँ   गो०बा० पद ४
गा । हँ   गो०बा०पद ५१
णु। क । दै ।३   ना० २।६

(ख) व स व

अंति । कालि   गो०बा०स० १०८
अ । गुल   गो०बा०स० ११६
अं । दैया   गो०बा०पद ५३

५. व, व स

एं।डी	गौ०ना०स० ७९
तु।णा	गौ०बा०प० २२
मु।धा	गौ०ना०पद ५७
प्र।मि	गौ०बा०पद ३८

६. स व व — स्वर + संयुक्त व्यंजन का प्रथम व्यंजन

मिल्।या	गौ०ना०स० २८
पुड् । या	गौ०बा०प० १४६

७. व व स

श्रां।त। रा	गौ०ना०पद १४
श्रा । गौ। चर	गौ०बा० स० ४५

८. व व स व

कां । उप	गौ०का० पद २२
क्रोध	गौ०बा०पद १६
धूता	गौ०बा० पद २५
च्यारि	गौ०ना०स० १९७

—

अध्याय - ४

पड्ग्राम विचार

अध्याय — ४

पदग्राम विचार[1]

प्रत्यय प्रक्रिया

प्रत्यय सामान्यत: वह पदग्राम है जो अर्थवान पदग्रामों से संयुक्त होकर ही सार्थक होता है । अर्थात् प्रत्यय की स्वतंत्र अर्थवान कोई भी सत्ता नहीं होती है । अत: हम यह कह सकते हैं कि प्रत्यय आबद्ध पदग्राम है । किन्तु प्रत्यय भाषा के पदात्मक गठन का वह महत्त्वपूर्ण अंग है जिसके सम्बद्ध होने से अर्थवान पदग्रामों के कार्य में काफी परिवर्तन हो जाता है । प्रत्यय प्रमुख्त: दो प्रकार के होते हैं —

१. व्युत्पादक प्रत्यय —

वह प्रत्यय है जो किसी धातु अथवा प्रातिपदिक के पूर्व या पश्चात सम्बद्ध होकर दूसरी धातु तथा प्रातिपदिक का निर्माण करता है ।

२. विभक्ति प्रत्यय —

वह प्रत्यय है जो किसी प्रातिपदिक के अंत में पड़कर व्याकरणिक सम्बन्ध को प्रकट करता है । विभक्ति प्रत्यय के पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय तो आ सकता है किन्तु विभक्ति प्रत्यय के बाद व्युत्पादक प्रत्यय नहीं आ सकता है । अत: इसे चरम प्रत्यय भी कहा जा सकता है । व्युत्पादक प्रत्यय के बाद विभक्ति प्रत्यय तो आ सकते हैं किन्तु विभक्ति प्रत्यय के बाद व्युत्पादक प्रत्यय नहीं आ सकते हैं ।

---

१. पदग्राम (morpheme) — भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई को पदग्राम कहते हैं । पदग्राम के एक या अनेक सहपदग्राम होते हैं । ये सहपदग्रा परिपूरक वितरण में होते हैं ।
डा० जायसवाल-कबीर की भाषा ।

व्युत्पादक प्रत्यय

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में प्रयुक्त तत्सम तद्भव देशी तथा विदेशी उपसर्गों का विवेचन निम्नलिखित है।

अ

अजपा	अजपा जपौ अपूज्या जपौ	ना० १६४
अभरा	आभरा का तै सूमर भरिया	गो०बा०स० ६१
अविद्या, अग्यान		स०गो०बा० २२३
अगम, अपार		फ०आसामदला ४
अगम, अगोचर		गो०बा०....

अन--

अनहद- सव्द	अनहद घंटा बाजै	ना० १६४
अनबोलता-	अनबोलता चरन न छोड़	ग० ६६
अंतरगति	अंतरगति रहै लुकाना-	ना० ११०
अनहद	गगन मंडल मैं अनहद बाजै -	गो०बा०स० ३२
अनभवत्या	अन + भवत्या	ना० १४८

सु-

सुरति	सुरति कीन्हीं सारि	ना० १६६
सुदेही	सिद्धि मिलिए देह सुदेही	ना० १५४
सुमति	सुमति पखंडी पाखंडी डंड विचारी -	गो०बा०स० ४८
सुमबढे	स०गो०बा० ६०	
सुचैति	फ० श्लोक ८७	

वि

विचित्र, विमोहित	माइआ चित्र विचित्र विमोहित विरला बूझै कोई	ना० १५०
विकाल	काल विकास अकालहि नाचै -	ना० १३७
विग्यान	ग्यान खोजि विग्यान पाया -	गो०बा०स० २०१

प्रति	प्रतिपल	गुम जात मैं प्रतिपल कीन्हा	ना० ११६
स	सनाथ - गुर नर कीजै सनाथ	ग० ११८	
	सगुरा - सगुरा होइ सु मरि मरि पीवै		गो०ग०ह० २४
कु	कुसंगी	कु+संगी ना० १५	
	कुरंक	कु+रंक ना० २०२	
बै	बैराग- ग्यान विचार जोग वगैरा- ना० १३७		
	बैरागी	बै+रागी ना० १७४	
बे-	बेकरमा	आनदेव फाकर बेकरमा - ना० ३०	
	बे अंत	फ० आसा महला ४	
	बेहाल	बे+हाल गो०बा०पद २३४	
	बे मुहताज	बे+मुहताज - फ० श्लोक १०८	
अवि	अविनासी	जहाँ आवै आप अविनासी रै	ना० १७१
	अविपल	काया पलटै अविचल बिध	गो०बा०न३७

निषेध सूचक तत्सम

निह	निहचल	तहाँ निहचल नामदेव दासारे ना० १७०	
	निहकरमा	राम राम निहकरमा ना० ११६	
	निहचै	निहचै नरवै भए निरदंद	गो०बा०प० १५
	निहसबद	गो०बा०सि०	
	निश्चल	नि:+चल निश्चल गो०बा०मिथ्या दरसन	
	निहकेवल	निह+केवल गो०बा० शि० ८०	
मह	महदमुद- पांच महदमुद गुणत्रीबीधा ना० १८१		

सहित अर्थ द्योतक तत्सम

सन्-

संताप-

	संगति	साध की संगति	ना० २११
	संताप	जनम मरन संताप हिरिऊ	ना० २११
	सनमुख	तास दीया सनमुख भेरीका	ना० २२६
अभि			
	अभिअंतरि	अभिअंतरि काला रहै बाहर करै उजास	ना०साखी २
	अभिअंतरि	अभिअंतरि की लागै माया	गो०बा० स० ४५
निर्	निरंजन	मिलै निरंजन दीन दयाल	ना० १६६
	निरंजन	तहा निरंजन अंजन नाँलै	ना० १६४
	निरमल	निरमल निरवा कु पगु चीनि लीचै	ना० १५६
	निरदंद	मर निरंद	गो०बा०म० १५
	निरास	रहै निरास	गो०बा०स० १६

हीनता द्योतक तत्सम

दुर	दुरबल-	दुरबल गरीब राम कौं	ना० १३६
अव	अवघट	दूरि पयाँना अवघट घाट	ना० १२०
पर	पटरानी	बीनती करै पटरानी	ना० ११८
अह	अहनिसि	अहनिसि सदा पुकारै	ना० ११३ अनिषि
	अहनिसि	अहनिसि लैंवा ब्रज अगनि का मेंव	गो०बा०म० ३१
निस	निसतारै	निस+तरौ - ना० ११ राम नाम नियचारै	
	निस नाहु	निस+नाहु	ना० २०२

नि

निगुरा   निगुरासान पिपासा   गो०बा०स० २४

निपापा- निसहरदक पिपासा   गो०बा० पद २१

निधरिया, निमाड़ी   फ० श्लोक ६४

निदोसा   फ० श्लोक ४१

बि —   बिरला, बियोधी - कौ कौ विरला वियोगी गो०बा०स० ३३

बिरले - फ० श्लोक ८४

बिभचारी - बि०+आचारी - ना० १६

जं	जंजाल	जंजाल अहार मैं घरि चौर	गो०बा०स०३५
	जंजाल	हिरदै सदा जंजाल	गो०बा० ३६
उ	उसास	उ+सास, सास उसास बाई कौं भविबा	,, ५२
औ	औगुन	औगुन मध्ये गुन करिलै	गो०बा०स० ६०
सू	सूभर	अमरा या से सूभर भरिया	गो०बा०प० ६१
सा	साजन	सा+जन फ० २श्लोक ७०	
अण	अणषायै	अनषायै ही मिरिए गो०बा०स० १४६	
	अणबोल्या	अणवोल्या अवधू सोई	,, ३८
	अणपूछ्या	अणपूछ्या ना० ७३	
दुर	दुरगंध	जल थल दुरगंध सर्व सुजई	स०गो०बा० १६६
वि	विवादं	अजर क्या नहीं वाद विवादं	गो०बा०
ब	बदेही	देही बदेही अवियल चीरै	गो०बा०
प	पलंका	लंका धाडि पलंका जाइबा	म०गो०बा० ६४

भरि　　　　भरि पूरि - सरब निरंतर भरि पूरि रहिबा गो०बा०२२
　　　　　　भर पूरि - भर+पूरि - ना० २

सर- सरजीव- नीरपीव आगें सरजीव मारें भा० ४७

व्युत्पादक पर प्रत्यय

ये प्रत्यय किसी संज्ञा विशेषण तथा क्रिया प्रातिपदिक में संयुक्त होकर अन्य संज्ञा विशेषण तथा क्रिया प्रातिपदिकों का निर्माण करते हैं ।

संज्ञाबोधक- पर प्रत्यय

आ- तदभव संज्ञा + आ

अहीरा　　　　अहीर+ आ गो०बा०पद ४२
पंडिता　　　　पंडित +आ भा० १०१
दासा, अकासा, मेहा, सनेहा - ना० ११०
पसुवा , नरा　　　ना० ११७

ई तद्भव　　संज्ञा+ई

जोगी　　　　जोग+ई - जोगी गो०बा० स० २६७
पापी　　　　पाप+ई -पापी-गो०बा०स० २६७
पनिहारिनी　　　पनिहारिन+ई पनिहारिनी गो०बा०प०४७

संज्ञा +लौ

मृगलौ　　　　मृग+लौ-गो०बा० पद २७

बगलौं	बग + लौं	बगलौं गो०बा०पद ६०
मेहलौं	मेह + लौं	मेहलौं गो०बा० पद ३१
संज्ञा + वा	धरवा	धर + वा गो०बा०पद ५०
संज्ञा + अन	चरणान	चरण + अन ना० १३६
संज्ञा + आरा	वणिजारा	वणिज + आरा गो०बा०पद १५
संज्ञा + ला	हंसला	हंस + ला हंसला गो०बा०पद ३४
	हंसुला	हंस + ला ना० २०२

संज्ञा + पाल

घड़ियाल घड़ी + याल गो०बा० पद २७
घड़ियाल घड़ी + याल फ० श्लोक ४१, ४२

संज्ञा + हीण

सबदहीण सबद + हीण - सब्द हीण - गो०बा०स१६०

संज्ञा + बारी

घरबार - घर + बारी घरबारी गो०बा० पद २७

संज्ञा + धारी

दूधा + धार - दूधाधारी गो०बा०पद ३८
प्यंड + धारी - प्यंड धारी गो०बा०पद ३२
आसन धारी - आसण + धारी गो०बा० पद ३८

संज्ञा + आणि   पुरसाणि   पुरस + आणि   गो०बा०पद ३८

संज्ञा + इक

साधिक - साध + इक   गो०बा०सु० ४४

साधिक   साध + इक   ना० २०२

संज्ञा + इणि   सुहागिणी - सुहाग + इणि   फ० श्लोक ११४

संज्ञा + वना

जीवणा - जीव + वणा   फ० श्लोक ४३

संज्ञा + वता

पतिव्रता + पति + व्रता   ना० २६

संज्ञा + आइल

रसाइल   रस + आइल   ना० २३।१५

संज्ञा + आरी

भिखारी   भीख + आरी   ना० ११

संज्ञा + पा

सिआणपा   सिआण + पा - २०८

संज्ञा + गार

गुन्हैगार - गुन्है + गार   ना० १६३

संज्ञा + आगति

सरणागति ~~सरणागति~~ - सरण + आगत + इ - सरणागति - ना० ११

संज्ञा + आरा

गंवारा-- गंवार + आरा नाo १२२

संज्ञा + औरी

ठगौरी -- ठग + औरी नाo १४०

संज्ञा + एरियां

घनेरियां - घन + एरियां फoश्लोक १०६

विशेषण बोधक पर प्रत्यय

विशेषण + ल

पांगुल -- पांगु + ल गोoबाo पद २५

विशेषण + ई

पिआरी पिआर + ई - नाo १३२
सुंदरी सुंदर + ई जाo १२५
पियासी पियासी + ई नाo १०६
सनेही सनेह + ई नाo १०६
अग्यानी अग्यान + ई नाo २५

विशेषण + गी

विसासघातगी -- विसासघात + गी गोoबाoसo २४६

विशेषण+वंता

गुणवंता -- गुण+वंता गो०ला०स० १०७
बुधिवंता - बुधि+वंता गो०ला०स० १०७
सुघनवंत - सुधन+वंत ना० २२४

विशेषण+सहैता

रूप सहैता रूप+सहैता गो०ला०स० २५

विशेषण+पन

बालापन-- बाला+पन ना०साखी ४

विशेषण+अनौं

अँधियारानौं - अँधियारा+अनौं ला० ११२

विशेषण +ड़ौं

नवैरड़ौं - नगेर+ ड़ौं - गो०ला०पद ३१

विशेषण+ए

पियारें- पिआर +ए - फ०श्लोक १२८

विशेषण +ता

चतुरता -- चतुर+ता ना० १३
दीनता - दीन +ता ना० १६३

विशेषण +णी

वक्कवादणी - वक्कवाद+ णी नाo १७७

पापणी - पाप+णी नाo १७७

सर्वनाम बोधक

सर्वनाम +सा

ये सब - ये +सब नाo २३, १५

सर्वनाम +- आ

आपा— आप+आ नाo १०२

सर्वनाम +-सरीखा

आपु सरीखै - आपु +सरीखै - नाo २२६

संज्ञा +सरीखा

ग्यान सरीखा गोंoबाoसo १८६

चित सरीखा गोंoबाoसo १८६

मन सरीखा गोंoबाoसo १८६

संज्ञा +सम

साकऊ सम साकऊ +सम - नाo १५३

विशेषण + सौं

अविनासी सौं अविनासी +- सौं नाo १२४

संज्ञा +सनमुख वीठल सनमुख वीठल+सनमुख - नाo ६६

संज्ञा +सब

	सब कामा	सब+कामा बा० १४५
	सब गुन	सब+गुन ना० ४५
	सबै कमाई	सबै +कमाइ गो०बा० पद ६

सर्वनाम +संग

	इनकासंग	इनका+संग - गो०बा०स० २६१
	इन संगि	इन+संगि ना० १४३

संज्ञा+संग

	सिध संगै	सिध+संगै गो०बा०स० १६६
	जीव सीव+संगै	गो०बा०स० २२७
	हंस संगि	हंस+संगि - गो०बा०स० २२७
	हंस संगि	हंस+संगि गो०बा० पद ५२
क्रिया+हार	कथणाहार	कथण+आर गो०बा०पद २६
	रचन हार -	रचन+हार ना० ११०
	पीवणाहारा	पीवण+हारा गो०बा०पद ४७

संज्ञा+सकल

	सकलभवन	सकल+भवन गो०बा० भारती
	सकल कमाई -	सकल+कमाई - गो०बा०पद ५४

विशेषण+सदा

	सदामलीन	सदा+मलीन गो०बा०स० २४०

विशेषण +साथ

	एकौसाथ	सकौ+साथ गो०बा०स० २४०

सर्वनाम+पन

अपनैं पन	अपनैं+पन	ना० १६५

क्रिया +हारी

उपांबनहारी	उपांबन+हारी	गो०वा०पद ७
हिंडोलनहारी	हिंडोलन+हारी	बो०बा०पद ७

संज्ञा +सरूप

जोति सरूप	जोति+सरूप	ना० १०७

क्रिया +इक

अजाचीक	अजाच+इक	गो०बा०प्रिया परसन

लघुतावाचक परप्रत्यय

जीयरा- संज्ञा+रा जीय+रा ना० १६४

नदिया - जैसैं नदिया समंद समानी - ना० ५३

बिषिया - काइ रे मन विषिया बन जाहि - १ ना० ६२

बहूटी - (टी) जिल्द बहूटी भरण वर - फ० श्लोक ३

१. अन्य विशेषणों तथा क्रिया प्रातिपदिकों के निर्माण करने वाले प्रत्ययों का विवेचन यथा स्थान दिया गया है।

२. विभक्तिमूलक प्रत्ययों का विवेचन संज्ञा, सर्वनाम विशेषण क्रिया आदि के सा व्याकरणिक कोटियों के रूप में यथास्थान दिया गया है।

अध्याय -५

संज्ञा

संज्ञा-प्रातिपदिक

संज्ञा-प्रातिपदिक

पद ग्रामिक अनुशीलन (Morphological - Structure) की दृष्टि से कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में दो प्रकार के संज्ञा प्रातिपदिक प्राप्त होते हैं —

१. मूल संज्ञा प्रातिपदिक — वे पद जिनमें कोई संज्ञावाचक व्युत्पन्न प्रातिपदिक नहीं जोड़ा जाता है। अर्थात् वे प्रातिपदिक अपने मूल रूप में ही संज्ञा (पदतालिका) के अन्तर्गत आते हैं।

२. व्युत्पन्न प्रातिपदिक — व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिक वे पद हैं जिनमें एक या एक से अधिक संज्ञा वाचक व्युत्पन्न प्रत्यय जोड़कर संज्ञा प्रातिपदिक का निर्माण किया जाता है। कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में क्रमश: विभिन्न प्रातिपदिक ,आ , ई, आई, इया, ता, पर आर, आरी इत्यादि को जोड़कर व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिकों का निर्माण किया गया है जिनका विस्तृत विवेचन पिछले अध्याय " प्रत्यय-प्रक्रिया" में किया जा चुका है।

अन्त्य ध्वनिग्राम के अनुसार संज्ञा प्रातिपदिकों का वर्गीकरण :-

किसी भाषा के पदग्रामिक गठन में प्रत्यय प्रक्रिया का विशेष महत्त्व है। प्रत्यय प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रमुखत: व्युत्पादक प्रत्यय और विभक्ति प्रत्ययों की गणना की जाती है। विभक्ति प्रत्यय संज्ञा सर्वनाम विशेषण और क्रिया पदों के अंत में लगकर व्याकरणिक सम्बन्धों का बोध कराते हैं। जिन पदों में विभक्ति प्रत्यय जुड़ते हैं उनके अन्त्य ध्वनिग्राम की प्रकृति भी महत्त्वपूर्ण होती है। अतएव कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में अन्त्य ध्वनिग्राम के अनुसार संज्ञा प्रातिपदिकों का वर्गीकरण प्रस्तुत करना लाभदायक होगा। कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में जिन पदों के अन्त में संयुक्त व्यंजन ध्वनिग्राम अथवा जिस पद के उपान्त में अनुस्वार युक्त स्वर आया है उक्त पद को स्वरान्त भी माना गया है। शेष जिन पदों का अन्त संयुक्त व्यंजन में नहीं हुआ उन्हें अधिकांशत: व्यंजनांत ही माना गया है।

स्वरान्त संज्ञा प्रातिपदिक (पुल्लिंग)

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में अध्ययन के उपरान्त यह विश्लेषण मिला है कि प्रायः प्रत्येक स्वर में अन्त होने वाले संज्ञा प्रातिपदिक मिलते हैं —

अ

जीव	जीव तैं छिन न बिसास	ना० ११३
मंत्र		ना० ३६
पुउ		ना० ६४

आ

ताला	सबदहिं ताला सबदहिं कूंची	गो०बा०स० २१
पींजरा	सप्त धातु का काया पींजरा	गो०बा० पद २२
हीरा	रे मन हीरै हीरा बेधिया	गो०बा० पद ५४
बाबा	भगत भला बाबा बाउला	ना० २४
सौना	अश्वमेध जगु की जै सौना परभदान दीजै	ना० १५६
काणा	फ० श्लोक ३६	
खटौला	फ० श्लोक ३६	
फरिश्ता	फ० श्लोक ६६	
बागुला	फ० श्लोक १०१	
कंतारिआ	फ० श्लोक १०६	
कुतिआ	फ० श्लोक ६१	

इ :—

गजपति	असपति,गजपति नाह नरिंद	ना० १५८
आगनि	आगनि दहै काछआ कलपु कीजै	ना० १५६

अलि	ध० श्लोक १०१
कंधि	फ० श्लोक १०६
रति	फ० श्लोक ५६
मुधि	गौ०ना० पद ४८
गांठि	गौ०वा०पद ५४

ई :—

अल्ला रखी	फ० श्लोक १०८
खुदाई	फ० आसा महला २
देवी	फ० श्लोक ६६
साथी	फ० श्लोक १०१
गुरुभाई	गौ०वा०स० ४१
गिरही	गौ०वा०स० ४५

उ :—

नामु	तेरा नामु है अधारा	ना० १५७
हिंगु, सिंगु	बाबी के घर हिंगु आधे भैसर मापे सिंगु गौ० ना१५६	
फलु	घ० श्लोक ११२	
जीवु	फ० श्लोक ११०	
अलाहु	फ० रागसूही १।६	
वाउ	फ० श्लोक १८	
बसतु	ना० १७१	

ऊ :—

दरियाउ	दरियाऊ तूं निर्हद तु निसिआर तू ना० १५७
माधऊ	पतित पावन माधउ विरद तैरा - ना० १५५
असरू	फ०श्लोक १२४
कंकरू	ध० श्लोक १०२

नाऊं	फ० श्लोक १०२
गुरु	फ० आसा महला ८
हिन्दु	गौ०बा०ख० ६८
तराजु	गौ०बा०ख० पद ६
साधु	गौ०बा०ख० २१

ए :—

अंधुली	मैं अंधुली की टैक	ना० १५७
कपड़े	फ० श्लोक ६२	
फरीदै	फ० श्लोक २३	
बावले	फ० श्लोक ६१	
दरवाजे	फ० श्लोक ५१	

ऐ :—

कीजै	फ०श्लोक २६
मिलावै	फ० गजसुदी ११५
प्यौहै	गौ०बा०ख० ६२
लौंडे	गौ०बा०ख० १०५
बूडै	ना० २६
फुलंदरियै	ना० १६

औ	किओ	फ० आसा महला १२
	निबन्धो	फ० श्लोक ६८
	विणाओ	फ० श्लोक १२४
	गौ	ना० १७

ई :-

नामी	ना ४६
धनी	ना० ४१
धनी	गौ०बा०पद ६०
आंधी	गौ०बा०पद ६०
बगली	गौ०बा०पद ६०

व्यंजनांत संज्ञा प्रातिपदिक (पुल्लिंग)

कान्त :-

खलक	ध०श्लोक ७६
लोक	ध०श्लोक ६२
मन माणिक	फ०श्लोक १२२
इश्क	फ०आसा महला २
दीपक	गौ०बा०प्राण संकली
बालक	गौ०बा०स० २६२
बालक	गौ०बा०स० २६२

खान्त :-

दोजख	फ०श्लोक ६५
मुख	फ० श्लोक १०६
सख	फ० श्लोक १
गोरख	गौ०बा०स० २२०
भेख	ना० १८३

गान्त :-

काग	फ० श्लोक ६१
कुरंग	फ० श्लोक १२
बाग	फ०श्लोक ८३
चग	गौ०बा०श० २१५
पग	गौ०बा०श० ३६
बग	गौ०बा०श० २१५
हांग	ना० ८१

धान्त :-

स्कंध	ना० २३
गैध	ना० ७७

चान्त :-

परपंच	ना० १७५
पंच	ना० ६७

छान्त :-

मच्छ	गौ०बा० पद ४१
काछ	गौ०बा०श० १५२
बछ	ना० ६२

जान्त :-

मौज	ना० ५१
नाज	फ० श्लोक १००
साज	फ० श्लोक ८०
पंकज	गौ०बा० प्राण संकली ।

फंज	ना० १३१

झान्त

झींझ	ना० ७६
झंस	फ० श्लोक ६५

टान्त

काष्ट	ना० १२
घट	फ० श्लोक ४०
ढंट	फ० श्लोक ६८
षाट	क० रागसूची ११६
बाट	गो०बा०स० १३५

ठान्त :-

काठ	फ० श्लोक ५१
फुठ	फ०आसा मडला ८
वोठ	गो०बा०पद ४६
कंठ	गो०बा०पद ५६
मठ	ना० १६७

डान्त	पिंड	ना० २१
	संड	फ० श्लोक ३६
	छपड़	फ० श्लोक ५४
	गुड़	फ० श्लोक ३०
	गुरड़	गो०बा० पद ५०
	ब्रुंड	गो०बा०म० ६०

ढान्त :-

गढ़	फ०श्लोक ५०
गढ़	गो०बा० प्राण संकली
गोढ़	गो०बा० पद २६
मूढ़	ना० ६२

णान्त :-

आसण	गो०का०स० ८२
बाण	गो०बा०स० २२६
प्राण	गो०बा० स० २३३
बासण	गो०बा०स० २५३
बाण	फ०श्लोक ३४
बिंदुबाण	फ० श्लोक ३६
बांभण	ना० १६७

तान्त

अमृत	ना० १७५
कंत	फ० श्लोक ३३
चित	फ० श्लोक १००
छत	फ० श्लोक २१
रक्त	गो०बा०स० ८५
घृत	गो०बा०प० ६२

थान्त :-

बत्थ	फ० रागसूही २
हाथ	फ० श्लोक ६०
तीरथ	ना० १२१
ग्रन्थ	गो०बा०पद २

पंथ	गौ०बा०अ० २२०

दान्त :-

बिन्द	फ० श्लोक ३५
फरीद	फ०आसा महला ६
नाद	गौ०बा०अ० १८१
बैद	गौ०बा०अ० २१०

धान्त :-

सिध	गौ०बा०पद ५५
बंध	गौ०बा०पद ५
दूध	गौ०बा०अ० ६२
साध	ना० ११८
व्याध	ना० १७३

नान्त :-

मन	ना० १२८
गगन	गौ०बा० पन्द्रह तिथि २
रतन	रा०गौ०बा० १७०
तन मन	गौ०बा०वृथै बीथ
आसमान	फ० आसा महला १३
आसन	फ० आसा महला १०
जोबन	फ० श्लोक ३६

पान्त :-

मंडप	फ० श्लोक ४८
पाप	गौ०बा०अ० ४६
पहुप	गौ०बा०पद १८

कान्त :-

थान्त :-

गरथ	फा० श्लोक १०५
रथ	फा० श्लोक २२
साथ	फा० श्लोक ३६
भरत	गी०भा०ख० ६२
धाव	गी०भा०ख० २१०
सारथ	ना० १७२

भान्त	डिंभ	ना० १८३
	लटारंभ	ना० ८१
	कुंभ	ना० ६१

मान्त :-

काम	फा०श्लोक ५
जनम	फा० श्लोक २६
भुयंगम	गी०भा०पद ५०
गम	गी०भा०ख० १६

यान्त :-

रान्त :-

मार	गी०भा०गाथा संकली
ईश्वर	गी०भा०ख० १४४
भरतार	गी०भा०ख० २५२
घर	फा० श्लोक २५

अंधार	फ० श्लोक ४५
दरबार	फ० श्लोक १०६

लान्त :-

कमल	गो०बा०प्राण संकली
पाताल	गो०बा०स० २
जल	गो०बा०स० २
पड़ियाल	घ० श्लोक ४१
जंगल	फ० श्लोक २२
भील	ना० १७३

वान्त :-

पांव	गो०बा०स० २६६
महादेव	गो०बा०स० १४
जीव	गो०बा० सिष्या (दरसन
भाव	फ० श्लोक ६४
दांव	फ० श्लोक १०६

हान्त :-

मल्लाह	फ० श्लोक ५१
देह	फ० श्लोक ४३
कलह	ना० ६४

सान्त :-

आकास	गो०बा० स० १६८
सास, उसास	गो०बा०स० ५२
पारस	ना० ८२
पलास	ना० ८२

षान्त :-

मुष	गौ०बा०स० १५२
पद	गौ०बा०पंद्रह तिथि २
दुष	ना० ८४
विष	ना० ८७

त्रान्त :-

मंत्र	गौ०बा० पद १२
छत्र	फ०श्लोक ४६
नैत्र	ना० ७६
पुत्र	ना० ७८

स्वरान्त स्त्रीलिंग संज्ञायें

अ :-

गौर	फ० श्लोक ५५

आ :-

जिभ्या	ना० ८६
कंवला	ना० ५४
नापा	ना० ५२
नदिया	ना० ८४
क्तीया	फ० ४६ श्लोक
कौहा	फ० श्लोक ६६
दुनिया	फ० श्लोक ५
वैला	फ० रागसूही २१
गुफा	गौ०बा०स० १३२
हुकरिया	गौ०बा०पद ४६

परखा	गौ०बा० पद १२६
ज्वाला	गौ०बा०स० ८६
छाया	सिच्छा दरसन गौ०बा० पद ८०

इ :–

गाइ	ना० ५६
सुख मनि	ना० ११
सौति	ना० १४१
गाँठि	गौ०बा० पद ५४
किरणि	गौ०बा०स०५३
कांमिनि	गौ०बा० पद ४७
कामधेनि	गौ०बा०म० १०८
दृष्टि	गौ०बा०स० ७५
क्रांनि	गौ०बा०स० ९८
सिरष्टि	गौ०बा०स० २४२
गैलि	फ० स्लोक ८

ई :–

पापणी	ना० १७७
बक बादली	ना० १७७
लूटी	ना० १७८
बाली	ना० १७६
गाई	गौ०बा०पद ५१
जोती	गौ०बा०स० ५
लकरी	गौ०बा०स० ४०
धरती	गौ०बा०स० २६७
क्यारी	गौ०बा०स० ३६
कंवली	फ०स्लोक २६

औ :-

त्यौ	रा० ८७
त्यौ	गौ०भा०पु० २०७

आँ :-

पैरियाँ	ना० ६८
बैटियाँ	ना० ६८
गलियाँ	फ० श्लो० २६
गोटाँ	फ० श्लोक ६८
गुड़ियाँ	फ० श्लोक २०
माँ	फ० श्लोक ८८
मुसलाँ	फ० श्लोक ५२
रतिआँ	फ० श्लोक ५३

व्यंजनांत स्त्रीलिंग प्रातिपदिक

कान्त	बाक	फ० श्लोक २०
सान्त -		
	मुख	फ० श्लोक ३१
	रैस	फ० श्लोक १६
	गण्डत	
गान्त -	जहूग	ना० ११८
जान्त	निवाज	फ० श्लोक ६२
	बकत	म

ठान्त	मजीठ	फ० श्लोक २५
णान्त	तारण	ध० श्लोक १२६
	वहणा	स०गो०बा० २४७
	जोगल	फ०श्लोक ४७
	कमाल	फ० श्लोक ११२

तान्त

निवात	फ० श्लोक ३०
मसीत	फ० श्लोक ६१
रात	फ० श्लोक १०६
मौत	फ० श्लोक १०१
मुहब्बत	फ० आसा महला १
मात	गो०बा०स० १६६

दान्त	बूंद	ना० ७७
नान्त	बहन	ना० ७५
	मीन	ना० ५६

फान्त :-

बुफ	फ०श्लोक ६

यान्त

गाय	गो०बा०स० १६४

रान्त :-

उमर	फ०श्लोक ६०
कमर	फ० श्लोक ८६
तनूर	फ० श्लोकर १२०

	भंवर	सं०गी०ब० १३२
लान्त :-		
	कोयल	गी०बा०पद ६०
	नैमपल	फ०राग सुकी १।४
	आमल	फ० श्लोक ६
	भूल	फ० श्लोक १५
सान्त	आस	फ० श्लोक ५५
हान्त :-	स्नेह	फ० श्लोक ४३
	बरगाव	फ० श्लोक ६६ .

लिंग एवं वचन

लिंग :--

अलग अलग अर्थ सूचित करने के लिए शब्दों में जो विकार होते हैं उन्हें रूपान्तर कहते हैं --संज्ञा में लिंग, वचन तथा कारक के कारण रूपान्तर होता है। संज्ञा के जिस रूप से वस्तु की जाति का बोध होता है उसे लिंग कहते हैं। हिन्दी में दो लिंग होते हैं--पुल्लिंग व स्त्रीलिंग। जिस संज्ञा से पुरुषत्त्व का बोध होता है उसे पुल्लिंग जिससे स्त्रीत्व का बोध होता है उसे स्त्रीलिंग कहते हैं।

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने में प्रयुक्त प्रत्यय :--

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में केवल दो ही लिंग प्राप्त होते हैं। पुल्लिंग एवं स्त्रीलिंग। आरंभिक ब्रजभाषा में भी केवल दो ही लिंग का विधान दिखाई पड़ता है। पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के कुछ विशेष प्रत्यय प्रयुक्त होते थे। उदाहरणार्थ --

इ प्रत्यय --

मालन+इ	मालनि	गो०बा०पद २०
बावल +इ	बावलि	फ० राग सूही १
मुक्त+इ	मुक्ति	ना० २०
नार+इ	नारि	ना० २०७
गांठ+इ	गांठि	गो०बा० प्राणसंकली १०

ई

जात+ई	जाती	ना० १८
तरुण+ई	तरुणी	ना० २०२
दास+ई	दासी	ना० ४२
कबैरा+ई	कबैरी	ना० २२८
चकवा+ई	चकवी	ना० २०२
मृघ+ई	मृघी	ना० १७

चंडाल+ई	चंडाली	ना० ६४
बूंटा+ई	बूंटी	गो०बा०स० ६८
कठौता+ई	कठौती	गो०बा०स० १४३
बूढ़ा +ई	बूढ़ी	गो०बा०स० १७३
चींटा+ई	चींटी	गो०बा०स० ३४
ताला+ई	ताली	गो०बा०स० १३३
कूंचा+ई	कूंची	गो०बा०म० १३३
हकेला+ई	हकेली	फ० रागसूही ११६

इया –

जीभ+इया	जिभ्या	ना० १८
कुंपड़ा+इया	कुंपड़िया	फ० आसा महला ६
टुकरा+इया	टुकरिया	गो०बा०म० ४७

इन –

आंख+इन	आंखिन	ना० १८

नी –

नट+नी	नटनी	ना० ७१
नाग+नी	नागनी	गो०बा०प्राण संकली १०
बाघ+नी	बाघनी	गो०बा०पद ४३

हीं –

भील+हीं	भीलहीं	गो०बा०पद २६
मछली +यीं	मछलहीं	गो०बा०पद ६०

इणी

सुहाग + इणि	सुहागिणी	फ०श्लोक ११४
जोंगि + इणि	जोंगिणी	गो०बा०भारती

आइण

रस + आइण	रसाइण	ना० २३,२५

णीं--

नाग + णीं	नागणीं	गो०बा०प्राणसंकली ७
कांट + णीं	कांटणी	गो०बा०प्राण संकली ७
बाघ + णीं	बाघणी	गो०बा०पद ४८

संज्ञा-विभक्ति

वचन प्रत्यय

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में आधुनिक खड़ीबोली की भांति ही एक वचन से बहुवचन बनाने में विभिन्न प्रत्ययों का प्रयोग होता था। इस प्रकार से चार रूप- १. मूल रूप एक वचन, २. मूलरूप बहुवचन, ३. विकृत रूप एक वचन तथा ४. विकृत रूप बहुवचन का निर्माण होता था

मूल रूप एक वचन के अधिकांश रूप संज्ञा प्रातिपदिक में दिये गये हैं

विकृत रूप - एक वचन

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में एक वचन, विकृत रूप बनाने के लिए निम्नलिखित प्रत्ययों का प्रयोग होता था।

शून्य प्रत्यय

चीता + ०	चीता	गौं०बा० पद ५७
दीपक + ०	दीपक	गौं०बा०पद ५६
बकरा + ०	बकरा	गौं०बा० पद ५१
बाँह + ०	बाँह	ना० १६७
गाँरष + ०	गाँरष	गौं०बा०स० २६

प्रत्यय हि

राम + हिं	रामहिं	ना० ६१
नरक + हिं	नरकहिं	गौं०बा०प० १६४
सबद + सबदहिं	गौं०बा०स० २१	

प्रत्यय ऐं	सुमलैं — समल + ऐं	सुमलैं	गौं०बा० पद ५७
	हीरा + ऐं	हीरैं	गौं०बा०पद ५४
	निवास + ऐं	निवासैं	ना० ५६
	सुचित + ऐं	सुचितैं	गौं०बा०स० १५४
	भांड + ऐं	भांडैं	गौं०बा०स० ३७
प्रत्यय अन	मृघ + अा	मृधन	ना० ७२
प्रत्यय आँ	गाय + आँ	गायां	गौं०बा०पद ५७
	चीटी + आ	चीट्याँ	गौं०बा०पद ५७
	पवन + आँ	पवनाँ	ना० १६
प्रत्यय उ	कायर + उ	कायरु	बा० २१७
	आंजन + उ	अंजनु	ना० २०४
	मारग आ। उ	मारगु	ना० २१७
प्रत्यय ए	संग्राम + ए	संग्रामै	गौं०बा०प० १२१
	साँच + ए	साँचै	ना० २५

कंत्तंव+ए	कंतंवें	गां०बा०स० ६
पुस्तक+ए	पुस्तकें	गां०बा०स० ६
सुसब्द+ए	सुसबदें	गां०बा०स० ६०
बंदा+ए	बंदें	ना० ५२

प्रत्यय इयां

ग्वाल+इयां	ग्वालियां	गां०बा०पद ५१
बैरी +इयां	बैरियां	ना० ९८
करंडी +इयां	करंडियां	गां०बा०पद १०
पावडी+इयां	पावडियां	गां०बा०स० ३९
नली+इयां	नलियां	गां०बा०पद ६
बैलडी+इयां	बैलडियां	गां०बा०पद ९७
पंख +इयां	पंखियां	गां०बा०पद ४३
प्राणी+इयां	प्रणियां	ना०सारी ९

प्रत्यय इआं

तलुआ +इआं	तलिआं	फ० श्लोक ९१

प्रत्यय आं

बात+आं	बातां	गां०बा०स० ५०

प्रत्यय ऐं

सबद+ऐं	सबदैं	गां०बा०स० १०
जीव+ऐं	जीवैं	गां०बा०स० १५१
हीरा+ऐं	हीरैं	गां०बा०स० १७४
आंष+ऐं	आंषैं	गां०बा०स० ७२
कांन+ऐं	कांनैं	गां०बा०स० ७२

चित + ऐं	चितैं	ना० १६४

प्रत्यय हु

संत + हु	संतहु	सं० २१७
कंठ + हु	कंठहु	ना० १४२
पांव + हु	पांवहु	ना० २१८
हांथ + हु	हांथहु	ना० २१८

प्रत्यय ईं

पातिसाइ + ईं	पातिसाही	गो०बा० पद २७

प्रत्यय इ	परबन + इ	परबनि	गो०बा० पद २७
	जोबन + इ	जोबनि	गो०बा०स० २०

विकृत रूप-बहुवचन

'कबीर' के पूर्व खड़ी बोली काव्य में पुलिंग से स्त्रीलिंग के विकृत रूप बहुवचन बनाने के लिये निम्नलिखित प्रत्ययों का प्रयोग होता था ।

औं प्रत्यय

	बगला + औं	बगलौं	गो०बा०पद ६०
	आंव + औं	आंवौं	गो०बा०पद ६०
	डोरा + औं	डोरौं	गो०बा०पद १४
	चरन + औं	चरनौं	ना० १२
	संत + औं	संतौं	ना० १३८
प्रत्यय आं	मूढ़ + आं	मूढ़ां	गो०बा०पद ५७
	लखन + आं	लखनां	ना० १२५

प्रत्यय ई

	लौंग + ई	लौंगी	गो०ग्रा०ख० २२०

प्रत्यय ०

	ढंता + ०	ढंता	गो०ग्रा० पद ४८
	ढंढी + ०	ढंढी	गो०ग्रा०ख० ७८
	राजिंद + ०	राजिंद	ना० ७१

अनि प्रत्यय

	संत + अनि	संतनि	ना० २
	लौग + अनि	लौगनि	ना० १३१
	नयन + अनि	नयननि	ना० २२७

प्रत्यय आंन

	धौह + आंन	धौहांन	ना० ३६

— ं अनुस्वार प्रत्यय

		पारषूं	ना० २७
		डाहैं	ना० ३७
		थाक ं	ना० ३७

प्रत्यय औं

	सांप + औ	सांपौ	ना० १७२
प्रत्यय ऐ	लोह + ए	लोहै	गो०ग्रा० १
अन प्रत्यय	चरन + अन	चरणान	ना० १३८
	लोक + आन	लोकन	ना० ५२

संत + आन	संतन	ना० २०१
भगत + आन	भगतन	ना० २०१

अन्य प्रत्यय जोड़ कर भी कबीर के संपूर्ण खड़ीबोली काव्य में बहुवचन का बोध कराया जाता था -

महाजन + लोग	महाजन लोग	ना० १६७
उतिम + लोग	उतिम लोग	ना० १६८
जोगी + जन	जोगीजन	ना० ५
तीनि + जणौं	तीनि जणौं	गो०बा०स० २४६
नर + लोई	नरलोई	गो०बा० पद २३
संत + जनन	संत जनन	ना० ४१
घर + बारी	घरबारी	गो०बा०स० ४४
पंडित + पुरिषा	पंडित पुरिषा	गो०बा०स० ६५
जणा + जणा	गो०बा०पद ४३	
सब + हिन	सबहिन	ना० ६७
भगता + जन	भगताजन	ना० ६०
मुनि + जन	मुनिजन	ना० १५५
संत + जनां	संत जनां	ना० २२०

काव्य-रचना

कारक रचना

संज्ञा (सर्वनाम या विशेषण) जिस रूप से उसका सम्बन्ध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ प्रकाशित होता है , उस रूप को कारक रूप कहते हैं ।

संस्कृत काल में सात विभक्तियाँ और ६ कारक माने जाते हैं । षष्ठी विभक्ति को संस्कृत वैयाकरण कारक नहीं मानते क्योंकि उसका संबंध क्रिया से नहीं है । संस्कृत काल में एक संज्ञा पद के २४ भिन्न भिन्न रूप बनते थे — प्राकृत काल में इन संज्ञा रूपों का संख्या १३ तथा अपभ्रंश काल में ५ या ६ ही रह गई थीं । आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के विकास के साथ ही हिन्दी में संज्ञाओं की विभक्तियों (रूपों) की संख्या संस्कृत की अपेक्षा बहुत कम है और विकल्प से बहुधा कहीं एक संज्ञाओं की विभक्तियों का लोप हो जाता है ।

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की भाँति समस्त संज्ञा रूप इतने घुल मिल गये कि एक संज्ञा पद के केवल दो ही रूप मिलते हैं ।

१. मूलरूप या निर्विभक्तिक रूप —

वह रूप जिसमें शून्य प्रत्यय का प्रयोग होता है तथा जो प्राचीन काल में कर्ताकारक में प्रयुक्त होता रहा है ।

विकृत रूप —

इसको विकारी या तिर्यक रूप भी कहते हैं । इस रूप में अन्य कारकों की विभक्तियाँ जोड़ी जाती थीं । इन दो रूपों से आठ भिन्न कारकों

के अर्थ प्रकट करने के लिये उत्तर अपभ्रंश काल से विकृत रूप के साथ अन्य पद या पदांश जोड़े जाने लगे । आधुनिक कारक इन्हीं जोड़े जाने वाले पदों या पदांशों के अर्द्ध शेषांश हैं जो इतने घिस पिस गये हैं कि अब अपना स्वतंत्र भाव भी खो बैठे हैं । कबीर के पूर्व कारक रचना की दृष्टि से खड़ीबोली में दो पद्धतियाँ मिलती हैं

(१) अपभ्रंशकालीन स्थिति :-

जिसमें आठ कारकों की अर्थ सूचक विभक्तियाँ स्वतंत्र पदग्राम से संयुक्त होकर प्रयुक्त होती हैं जिन्हें हम संयोगी कारक विभक्ति की संज्ञा देते हैं ।

(२) वियोगात्मक कारक पद्धति -

जिसमें विभक्ति प्रत्यय मूल पदग्राम से संयुक्त होकर नहीं आता बल्कि वियोगात्मक रूप से जुड़ता है । प्रथम पद्धति में विभक्ति मिश्रित पदग्राम (Complex - Morpheme) मूल पदग्राम विभक्ति का एक अक्षरात्मक अंग (Syllabic- Constituent) बन जाती है जबकि द्वितीय पद्धति में विभक्ति + मूल पद ग्राम मिलकर एक मिश्रित पदग्राम का निर्माण नहीं करते बल्कि एक ही अनुक्रम में घटित होने पर भी दोनों की अक्षरात्मक स्थिति अलग अलग रहती है ।

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में मूलरूप एकवचन स्वरान्त तथा व्यंजनांत दोनों रूपों में मिलते हैं । इन दोनों रूपों का विवेचन विस्तार से गत पृष्ठों में ( ) किया जा चुका है । मूलरूप बहुवचन प्रत्यय का स्पष्टीकरण भी गत पृष्ठों में हुआ है ।

विकृत रूप एक वचन की रचना अधिकांशतः मूल रूप में शून्य प्रत्यय जोड़कर भी की जाती है अर्थात् निर्विभक्तिक रूप में ये पद वि०ए०व० का निर्माण करते हैं । इसके अतिरिक्त मूल अकारान्त रूपों में - ए तथा - ऐ प्रत्यय जोड़कर विकृत-रूप एक वचन की रचना की जाती है । इसका विवेचन भी गत पृष्ठों में विस्तार से किया जा चुका है । ( )

कारक-विभक्ति

संयोगी-विभक्ति

(१) कर्त्ताकारक (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण)

प्रातिपदिक में निम्नलिखित संयोगात्मक विभक्तियाँ जोड़कर कर्त्ता-कारक का अर्थ प्रकट किया जाता है –

शून्य प्रत्यय (ब०प्रत्यय)

सतगुर +०	सतगुर सुझ लखाया	गो०बा० पद ७
मन+०	ऐसे चवु मनइरि क्यौं गता	ना० ११५
जननी +०	जिन जननी संसार दिखाया	गो०बा० पद ४६
शैतानी +०	जो शैतानी बन्साया से कित फिरैचित	फ०श्लोक १८
किनहूं +०	तेरा किनहूं मरम न पाया	ना० ६४

'आ' प्रत्यय

सिद्धा	सिद्ध + आ	सिद्धा भाषण वामा गो०बा०स० १६४
मृधाँ	मृध + आ	मृध्याँ बीता मारया जी - गो० बा०पद ५१
चीट्याँ	चीटी + आ	चीटया परबत ढोल्या रे अवधू- गो०बा०पद ५७
जिना	जिन + आ	जिना पछाता सचु फ० आसा महला १
जिना	जिन + आ	जिना विसारियाँ नामु –फ० श्लोक १०४

'ऐ' प्रत्यय

हीरै –	हीरा + ऐ	रे मन हीरै हीरा बेधिला गो०बा० पद ५६
बामै	बामा + ऐ	बिन थाँभा बरसै मंडपछीया - गो०बा०पद ७
नामै	नाम + ऐ	नाम नामै जन जीति लीया ना० १६६ नाम+ए

भवरै	भवरा + रै	पहली बरस जु भवरै तीनी न० ६१
जैसे :-	जैसे रांवविसारिया फरीद श्लोक १०७	
एकै	एक + रै	एकै अनंत उपाया- गो०बा०पद २४
लौहै	लाते लौहै पांणी सोषिया गो०बा० सब १०५	

प्रत्यय हीं

महलहीं	महल + हीं	गगन महलयीं अगनी गृह्णी गो०बा०पद ६०

प्रत्यय ए

अंधे	अंधा + ए	अंधे अंधा हाथि ना० १४२

विशेष - रै - जब सकर्मक क्रिया भूतकालिक कृदन्तीय रूप के साथ कर्मणि प्रयोग में रहती तब मूल संज्ञा प्रातिपदिक में विकृत रूप बोधक संयोगी ए तथा - ऐसे विभक्ति जोड़ दी जाती है - जहाँ आजकल आधुनिक हिन्दी में ने परसर्ग जोड़ दिया जाता है ।

संयोगी विभक्ति

कर्म, सम्प्रदान कारक-

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में संयोगात्मक विभक्ति के अन्तर्गत कर्म कारक सम्प्रदान कारक, का द्योतन करने के लिये निम्नलिखित विभक्तियां प्रयुक्त होती थी -

शून्य प्रत्यय -

कमल + ०	कमल बदन काया करि कंचन	गोरखबानी, पद १२
षट चक्र + ०	षट चक्र बेधि भरपै उरधं मधि फिरैं	गो०बा०पद १२
हाथ + ०	हाथ भरोहुं	फ० राग सूही १
पवन + ०	पंच पवन अपूणां आवै	स०गो०बा० १८२
दूध + ०	दूध पीअर गोविंदे गई	ना०२१ ३

संयोगी विभक्ति

करण-कारक

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में भिन्न भिन्न निम्नलिखित विभक्तियाँ करण कारक के अन्तर्गत संयोगात्मक रूप में पायी जाती हैं।

शून्य प्रत्यय

नराइन + 0	नामदेव की प्रीति नराइंक लागी	ना० ११५
चरन + 0	मन मंझा तू गोविन्द चरन चित लाई रे	ना० १०५
आसणि + 0	मू चापि दिढ़ आसणि बैठी	गो०बा०पद १४
साध + 0	साध संगि भेली	फ० रागसूही ६
उतपति + 0	उतपति हिन्दू जरणा जोगी	गो०बा०स० १४

प्रत्यय एँ

प्रसादैं	गुरु प्रसादैं भी निधि पार	गो०बा० पंद्रहतिथि
आवै मरैं	आवैं देखिबा जावैं भूजिबा	गो०बा०स० ७२
घूर्णें	एकै घूर्णें बोलयाँ	गो०बा०पद ४२

प्रत्यय हि

पिरहि	पिरहि बिनु कतहि सुख पाये	फ० रागसूही ५

प्रत्यय हु

कंठहु - कंठहु लखे भाल - ना० १४२

जिनहु - राम संगि नामदेव जिनहु प्रतीति पाई ना०२८

प्रत्यय इ

अकलि अकल + इ अकलि परि मुसलमानी गो०बा०स० १४

नैनति नैनन + इ पहली जोति नु नैनति देखी ना० ६१

प्रत्यय इयाँ

पावड़ियाँ पग फिलसै —
पावड़ी + इयाँ गौ०बा० सु० ३१

प्रत्यय ए

बाहे-बांह+ए बाहे यै पुरसाण उठैला -गौ० बा०सु० ६२

प्रत्यय नौ, नै

अंधियारनानौ - अंधियारा + नौं- अंधियारानौ भी भागोरैबाई। ना० ११२
जौहिनै - जौहि+नै कर जौहिनै धरमै विनवै ना० ११२

[illegible] —

संयोगी विभक्ति

अधिकरण कारक

शून्य प्रत्यय - नासिका, भूमंडल-नासिका + ० नासिका अरै भू मंडले - गौ०बा०सु०३४

[illegible]

प्रत्यय इ — इकोतरसै पुरिया नरकहि जाई गौ०बा०सु० १६४

प्रत्यय आँ — घरनाँ - हैहै घरनौ मेरा भाया ना० १२

प्रत्यय ए — आगे - आंग+ए - बायाँ आगै सौहता सप्या भौगिवा गौ०बा०पद१

पत्यय ऐ - बालै - बाल+ऐ - बालै जौवनि ऐ नर जती गौ०बा०सु० २०

माँहि- माँहा+रै बायें माँहि न पांवी गो०बा०सं० ३७

दरियावै - दरियाव+रै ज्यु दरियावै ढाहा क० २०टेक ११

प्रत्यय ईं --

निज सुपिनै बिंद कूं डरै - गो०बा०सं० २१२

सरणीं --सरणा+रै - एक पीठला सरणी जा रै ना० २२८

फारणीं- नीफार बब फारणी-अमीरस पीव

फारणा+रैं गो०बा०सं० १७१

प्रत्यय इ

डाधि- डा+इ डाधि स्टद से डोली गो०बा०सं० ६

भरमि- भरम+इ तरकै भरमि न भूली गो०बा०सं० १०

नग्रि - नग्र+इ नग्रि जाऊं स भागा गो०बा०सं० ३०

जंगलि - जंगल+इ तिन पंखिआं जंगलि जिन्नावासु क०सलोक १०२

प्रत्यय आं

चरनां - चरन +आं - मुभका मनवा तुवा चरनां - ना० ५६

सरनां- सरन+आ - भक्त नामदेव तुम्हारे सरनां -ना० ५६

प्रत्यय या

पहोहीया- पहोंढ़ी+या - ढंढ ब्रह्म पहोढ़ीया मानूं बैस्यानंर

गो०बा०सं० २११

संयोगी विभक्ति

संबंध कारक

शून्य प्रत्यय-

मछमंद +० मछमंद डाधि करद संडौली- गो०बा०सं० ६

कूंधा +० गगन मंडल में ऊंधा कूवा गो०बा०सं० २३

राजा+० राजा सौमंत दल प्रवांली गौ०बा०दा० ६५
सिधा+० सिधा सौमंत सुध वांणी गौ०बा०दा० ६५

प्रत्यय ए
सुखदे-सुखद+ए - सुखदे हीर ा बांधले अबधू गौ०बा०दा० ६० दरियाव - दरियाव-ए - फरीदा दरियावे बने धागुला बैठा केलकरे
फ० श्लोक १००

प्रत्यय ऐ

लौंदै - लौदा +ऐ - लौंदै घड़ी+सारं गौ०बा०दा० ६
भुबै - भुव+ऐ जैसी भुवै प्रीति अनाज - ना० ११५

प्रत्यय आंइं बकुरौ - बक+ बाल गोविंदाइं म्हासरथी ना० ६१
गोविन्द+इंइं

प्रत्यय औं पहुनौं --पद+औं ये पहुनौ बैतारथ जावैं ना० ११२
दरजीनौ - दरपी+नौं - जनम नाउं दरजीनौ दीधौं - ना० ११४

प्रत्यय नै दूधनै - दूध+नै - जैसलौं कंतरी दूधनै जाली ना० ११४

व्यास नै - व्यास+नैजाग्रत नै आका व्यासनै भांटा ११०।१४

वियोगात्मक कारक परसर्ग

अपभ्रंश कारकों की विभक्तियों का अध्ययन करते हुए हमें कुछ ऐसे स्वतंत्र शब्द मिलते हैं जो संज्ञा के साथ प्रत्यय की भांति जुड़े नहीं होते फिर भी वे कार्य करते हैं किसी कारक विभक्ति का। अधिक विश्लेषण करने पर हमें यह ज्ञान होता है कि इन परसर्गों का प्रयोग संज्ञा शब्द के साथ अधिक हुआ है। इस लक्ष्य से परसर्गों के आविर्भाव का कारण पता चलता है। सर्वनामों के रूप परिवर्तन के साथ ही उनसे संलग्न विभक्तियों का भी रूप परिवर्तन होना स्वाभाविक है। ऐसी दशा में बहुत संभव है कि क्षति पूर्ति के लिए लोगों ने नये व्यापक

शब्दों की आवश्यकता महसूस की है अतः विभक्ति चिह्नों की असमर्थता में ही परसर्गों का आगमन संभव है ।

आरंभिक ब्रजभाषा में भी अनेक प्रकार के परसर्गों का प्रयोग प्राप्त हुआ है । लेकिन इसमें स्थिति अपभ्रंश काल से भिन्न है । अपभ्रंश की तरह ब्रजभाषा में केवल द्योतक शब्दों का ही नहीं बल्कि अन्य पूर्ण तत्सम या तद्भव पूर्ण शब्दों का भी प्रयोग हुआ है ।

वियोगात्मक विभक्तियाँ

कर्त्ता कारक

आधुनिक हिन्दी में स प्रत्यय कर्त्ता का प्रयोग सकर्मक क्रिया के भूत निश्चयार्थक रूप के साथ संज्ञा के विकृतरूप में "ने" परसर्ग का प्रयोग करके होता है । आश्चर्यजनक एवं अद्भुत बात है कि अपभ्रंश के बाद-कबीर ने पूर्व खड़ीबोली काव्य में कारक परसर्ग ने का प्रयोग मिलता है । जबकि-कबीर के युग में उस का प्रयोग नहीं है । कबीर ग्रन्थावली में कारक परसर्ग ने का प्रयोग नहीं मिलता है ।[१] यह रूप केवल नामदेव की कविताओं में ही यदा कदा प्राप्य है.......

ने	उनने मारा उनने तारा । उनने किया उत्धारा	-	ना० १६३
ने	नामदेव ने हाथ लगाया बघरा पीवन लागे	-	ना० १६३
ने	ऐसा तुमने नामा दरजी बायका बनाया	-	ना० १८४

वियोगी-विभक्ति

कर्म-सम्प्रदान कारक

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कर्म सम्प्रदान कारक के अन्तर्गत विभिन्न वियोगात्मक विभक्तियाँ प्राप्त हुई हैं । उदाहरणार्थ —

-----

१. कबीर की भाषा - डा० माताबदल जायसवाल

कू	काहे कू कीजै ध्यान जपना	ना० २३
का	नामदेव का स्वामी मानिले सगरा	ना० २३
कौ	चिरही कौ ध्यान अमली कौ ध्यान	
	सूवा कौ कारन वैस्या कौ मान	गो०बा०प० १४५
कूं	ता लौगौं कूं काल न खाय	गो०ब०स० २२०
लै	मन पवना लै उनमनि धरिबा	गो०बा० स० ३४
लै	अरध उरध लै जौर	गो०बा०स० ३५
लै	यहु मन लै लै उनमन रहै	गो०बा०स० ५०
नै	जाल नै जौसी करै विचार	गो०बा०पद २६
था	पताली देवली पर्वन था देव	गो०बा०पद ३७
थी	पाप थी करवी कैसे उतर तिरिला	गो०बा०पद ३६
कौ	तिन्हाँ मिलन कौ चाऊ	फ०श्लोक ८१
कौ	मुझकौ दु:ख सबाई पगु	ध०श्लोक ८२
कूं	कंधी उतै रुखड़ा किथर कूं करे धीर	फ०श्लोक ६७
कौ	यह संसार बार कौ खेता	ना० २२७
	तामैं हरि कौ खेती	ना० २२७
कौं	ता जोगी कौं त्रिभुवन सूझै	गो०बा०पद २६
कौं	जानौं ढूढण जाता	गो०बा०पद १४
कऊ	जिन दान काली कऊ दीभा	ना० २०४
कउ	मोक्ष तारिलेरामा तारिलै	ना० २०
किऊ	अजामल किऊ बैकुंठ ही थान	ना० २०६
कऊ	तुरग कऊ जीतिऊ	ना० २०५

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कर्म सम्प्रदान कारक के अन्तर्गत विभिन्न रूप प्राप्त हुए हैं। पदग्राम के रूप में कौ तथा सहपदग्राम के रूप में कऊ किऊ, कउ, कौ कू, का, थी, नै, लै आदि प्रत्यय प्राप्त हुए हैं। अपभ्रंशकालीन साहित्य में भी कौं, कौं, हुं तथा कौ के रूप मिलते हैं। कर्म कारक के सभी परसर्ग आरंभिक पूरपूर्व ब्रजभाषा में प्राप्त होते हैं।

वियोगी विभक्ति

करण कारक

सिऊ	करिभाई सिऊ पिवरणी	फ०श्लोक ११
से	पिप से दरगाह वगाह	फ० श्लोक ६६
सिऊं	तू रखा उनी सिऊं	फ० श्लोक ११
सु	बचन सु भतर	ध० श्लोक १२४
सेती	फरीदा उनका सेती विछु गया	फ०श्लोक १७
सूं	तिन सूं गांठिन कामा	ना० १७
सूं	संत सूं लैना संत सु दैना ना० ३२	
सिऊ	वाउ विवादु काक सिऊ न कीजै	ना० २१४
थै	तापै मिटै अंतर की तपनी	ना० १३
थैं	लूण नीर थै ना है न्यारा	ना० १४
स्यूं	घा बरल स्यूं सो लाई	गो०बा०११।२।७३
स्यूं	कौस बल स्यूं मागी	गो०बा०स० २६८
स्यूं	पश्चिम देस स्यूं आये जोगी	गो०बा० २६७ प्रधानता है
स्यूं	कौण देस स्यूं आये जोगी	गो०बा०स० २६६
तै	मामंत तै पुरिष आगता	गो०बा०स० २५६
तैं	तातैं गोरख मांगि ब साय	गो०बा० म२१३ प्रधानता है
तैं	मुक्ति कहा तैं होई	ना०साखी ६
तै	दिष्टी पडे तै सारी की मति कीमनि सब द उपारं	गो०बा०स० २६३
तू	कूकर तै ठाकुर भये	ना० २२८
तैं	तामैं अकलि कहां तैं आवै	गो०बा०स० २०८
थीं	पूरब देस थी पश्चिम त्रिकुटी	गो०बा०पद ३१
सु	नवबल बधी सुबद सु	ध० श्लोक ८०
सउ	फरीदा गौर निमाही सउ करै	फ०श्लोक ६४
सौं	धनि सौं माली रब निर्मा	फ० श्लोक १००
सौ	नर सौ नारि होइ अउतरै	ना० २०७

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में करण कारक के विभिन्न रूप प्राप्त हुए हैं। पद्ग्राम के रूप में सौं तथा सउपद्ग्राम के रूप में उ, हु, सौ, थी, तैं, ते, थ्यूं, थे, तैसी, सिउ तथा से आदि विभिन्न रूप प्राप्त हुए हैं अपभ्रंशकालीन साहित्य में इस रूप में कोई परसर्ग नहीं प्राप्त है। एक अन्य प्रत्यय [illegible] तणा प्राप्त होता है — यह रूप अपभ्रंश के बाद परिवर्तित होकर क्रमशः तहं से तें और ते होते हुए आधुनिक हिन्दी का 'से' परसर्ग बन गया है। आरंभिक सूर पूर्व ब्रज-भाषा में करण कारक के लगभग सभी प्रत्यय सौ सों तें ते आदि जो कबीर के पूर्व खड़ीबोली में प्राप्त हैं, पाये जाते हैं।

अधिकरण कारक—

माँहि	राम सबन ही माँहि	ना० साखी १
भाँति	सो कुल संतनि माँहि	ना० २२५
माँही	दरसण माँही आपै आप	स०गो०बा० २७२
माँहि	हिरदै माँही रंग हिरदै हीया	ना० ३६
पै	देवा तेरी भगति न मोपै होइ जी	ना० ४८
पै	सुकृत कथा होई नहीं मोपै	ना० ४८
पै	सुकृत कथा होई नहीं मोपै	ना० ४८
पै	देव मेरी हीण जाती है काहू पै सही न जाती हो	ना० ५३
माँहिं	गगन सिखर माँहिं बालक बोलै	गो०बा०स० १
पै	काहू पै सही न जाय हो	ना० ५३
माँहिं	गगन सिखर माँहिं बालक बोलै	गो०बा०स० १
पै	काहू पै सही न जाय हो	ना० ३
में	तामैं अकलि कहाँ तैं आवै	स०गो०बा० २०२
में	मन मैं रहिबा भेद न मिलाँ	स० गो०बा० ६३
मे	हिरदा पंकज मैं रहै समांना	गो०बा०प्रा०संकली
में		क० रागसूही २

मधि	यांन गुरका जागै ही हौता मधि पिरलै अवधू पापा	गो०बा०स० १३१
मा	तिनाँ मा पिटी	प०श्लोक ८८
पर	आपा पर नाहीं चीन्हीला	ना० २०
परि	तन मन हरि परि छिन छिन वारूँ	ना० २७
परि	दूजौं परि कैसे जावौ	गो०बा०पद ३१
महि	बादिसाहु महल महि जाउँ	ना० २१८
महि	भ्रमर गुफा महि	
उप्पर	ऊपर झाँटिआ	फ० श्लोक २५
ऊपर	उस ऊपर है मारग मेरा	फ० रागसूही
लिए	मुरिदाँ की लिए -	प०आसा महला ८
लिए	बसी रब हिया लिए	फ० श्लोक २२
मंझ	मुलमा मंझ पीर रे	ना० २७
मंझि	फरीदा भूमि रंगावली मंझि विसूला बाग	फ० श्लोक ८३
मंझि	सबर मंझि समाज र सबद का निह हौ	प० श्लोक ११५
मांझी	जाँ हलही मांझी जनम पढीलौ	गो०बा०प० ७
मंझा	आप मंझा समझि न पर है	ना० ६२
मंझारी	बिजली सोंध मंझारी	गो०बा०पद ३३
मांझी	आंखल ही मांझी जनम यदी लौ	गो०बा०प० ७
मधि	इडा प्यंगला मधि समाईं	गो०बा० पद ३०
मधे	ता मधे गुरु भभोरया	गो०बा०पद २८
मांहिला (में)	मन मांहिला हीरा बीधा	गो०बा०पद ४
माहै	मन माहै तेरै तन तारुवाँ	गो०बा० पद ३
मांझ	ते नर गिनिये पसुवा मांझ	ना० १२५

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य के अधिकरण प्रत्ययों में विभिन्नता है। में सभी ग्रन्थों में प्राप्त है। अतः "में" परसर्ग के रूप में प्रयुक्त हुआ है। संयुक्त परसर्ग के रूप में माहै, माहिं, महिं, मा, पै, पणि, मांह, मांहिला,

केरे	इक आपीने पतली सह केरे बोला	ध०रागगुड़ी २।२
कौ	मैं नाहीं कौ सबु जगु डिठा ।।	फ० सलोक ८
दै	आपनणे घर जाइये पैट तिनां दै दुभ	फ० ९ श्लोक १०
दै	एक तरवै दे रहि गये	फ० सलोक ३६
का-	प्रेम पियाला खसम का	फ० सलोक १७
की	फरीदा बैटी मेरी काठ की	फ० सलोक ३१
दी	फरीदा साहबु की कर चाकरी दिल की लाहि मरांदि - प० श्लोक ६१	
दा	गहला लोक न जान दा हस न कोहा लाघि	फ० श्लोक ६६
केरी	कतार केरी छपडी भजार उलके थैं	फ० श्लोक ६५
दा	फरीदा बुरे दा भला कर	ध० श्लोक ७८
मै	दैहि मै अपरानिका	फ० श्लोक ८७
नु	कौल करेंदे हंस नु किते काजपर	फ० सलोक १००
नां	दया धरम नां बीज बलावो	गो०बा०पद ३१
ना	जीव सीव ना सगे बासा जा,बंधि बाइबा	गो०बा० पद ३१

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में संबंध कारक के अन्तर्गत भी रूपों की विविधता है । का, की, के रूप पदग्राम के रूप में प्रयुक्त हैं । सहपदग्राम के रूप में केरा, केरी केरे आदि रूप हैं । पंजाबी प्रत्यय दा,दी, दे तथा नां, ने नु नी बाबा फरीद में बहुतायत से पाये गये हैं । गुजराती का प्रभाव भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है । ना, नी आदि रूप नामदेव तथा गोरखबानी दोनों ही में प्राप्य हैं । अपभ्रंश कालीन साहित्य में केर, मे, और क रूप मिलते हैं । क के रूपान्तर का की के आधुनिक भाषा में प्रचलित हैं । अन्यरूप लुप्त हो गये हैं । आरंभिक ब्रजभाषा में भी सिर्फ का की के कौ आदि रूप ही प्राप्त हैं ।

<u>संबोधन कारक</u>

रे	नाम कहे तुम सुनहु रे अवधू	गो०बा०स० २५
हो	कहो हो अवधू	गो०बा०स० ११३
रे	के लंढिया युग बापरे	फ०श्लोक ६८
वो	वो देह बंदे के भाग	फ० श्लोक ६१

रे	नहीं रे पूता गुरु सौं भेंट	गो०बा०स० १०९
हाजी	बाबा रतन हाजी कहै	गो०बा०स० ११८
ए	ए अष्टांग सब भूठा	गो०बा०स० १३३
या	या धनकी देखहु अधिकाई	ना० २
भाई	भाई रे भरम गया भौ भागा	ना० ७२
रि	अैना रि लागी बाढलीर	ना० १३५
है	है हरे दीपावली गुणी रैणिला	ना० २२६
है	विष्णदास नामा बीनवै है भवा	ना० २२६
वै	सुलतानु पूछै सुन वै नामा	ना० २१८

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में सम्बोधनकारक के विभिन्न परसर्ग प्राप्त हुए हैं। संबोधन कारक के अर्थ द्योतन के लिये अधिकतर संज्ञा का विकृतरूप ही प्राप्त हुआ है। कुछ विस्मयादि बोधक शब्द संज्ञा के पूर्व आकर संबोधन कारक का द्योतन करने लगे हैं।

कारक परसर्गवत प्रयुक्त अन्य शब्द

कर्म-संप्रदान

नाइ	रंगिले जिहुवा हरि की नाइ	ना० २१२
लगि	लागि जीव उपरि बारि	गो०बा०स० २०७
नाई*	सूम की नाई मैटिले रामा	ना० १०६

अधिकरण :-

थीर	जाइ सुते पीराज यह थीर अतीमा गढ़ - फ० श्लोक ४७

करण अपादान

करणा	प्रणावै नामदेव बहु करणा	ना० २१२

संगि	मन माने सौं संगि फिरै	गो०बा०स० २७१
साथि	कहि न सोभै सुंदरी सनकादिक के साथि	गो०बा०स० २५०
कारणि	ता कारणि अनंत सिधा जोगेस्वर हूवा	गो०बा०पद ३
संगति	साध संगति मिलि बैसीला	ना० ३१
सकेला	बैरनी मन परिवार सकेला	ना० ३३

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कारक परसर्ग की भाँति प्रयुक्त होने वाले कुछ शब्द प्राप्त होते हैं । अपभ्रंश कालिक साहित्य में इस प्रकार का कोई रूप नहीं है । प्रारंभिक ब्रजभाषा में इस तरह के कुछ उदाहरण अवश्य हैं ।

अध्याय -६

सर्वनाम

सर्वनाम

सर्वनाम वे पद हैं जो संज्ञा के प्रतिनिधि के रूप में प्रयुक्त होते हैं। संज्ञा की भाँति ही इनका रूपान्तर लिंग, वचन तथा कारक विभक्तियों से होता है। कबीर पूर्व के खड़ीबोली काव्य में सार्वनामिक पदों में लिंग भेद रूपात्मक स्तर पर निश्चित करना संभव नहीं है। सर्वनामों में यह लिंग भेद केवल वाक्यात्मक स्तर से ही ज्ञात होता है। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि कबीर से पूर्व खड़ी बोली काव्य में संस्कृत पालि प्राकृत एवं अपभ्रंश की भाँति लिंग भेद पाया ही नहीं जाता है। भारतीय आर्यभाषा के अपभ्रंश काल में ही कुछ सार्वनामिक रूपों में लिंग भेद मिट गया था। आगे चलकर आधुनिक आर्यभाषाओं में प्राय: यह लिंग भेद सर्वनामों में लुप्त हो गया था।

वचन के द्वारा भी सर्वनामों में विकार होता है। कबीर के पूर्व खड़ी-बोली काव्य में वचन के दृष्टिकोण से सार्वनामिक पदों का वर्गीकरण एक वचन तथा बहुवचन के रूप में कुछ ऐसे सार्वनामिकरूप हैं जिसके वचन का निरूपण संज्ञा-त्मक स्तर पर नहीं हो सकता है। चौदहवीं शताब्दी के पूर्व खड़ीबोली काव्य में कुछ ऐसे भी रूप मिलते हैं जो परम्परा से बहुवचन के हैं लेकिन उसे कारक में एक वचन में ही प्रयुक्त हुए हैं। उदाहरणार्थ तुम, हम, ये , से , आदि......
एक वचन के अर्थ में ही प्रयुक्त हुए हैं।

संज्ञा की भाँति सर्वनाम में भी चौदहवीं शताब्दी के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कारकों के दो रूप मिलते हैं। मूलरूप एकवचन, मूलरूप बहुवचन, विकृतरूप-एकवचन, विकृतरूप बहुवचन। कारक रचना संज्ञा + की ही भाँति संयोगात्मक एवं वियोगात्मक दोनों पद्धतियों के होती है। लेकिन प्रधानता वियोगात्मक पद्धति की ही होती है। केवल पुरुष वाचक सर्वनामों में कर्म, सम्प्रदान तथा सम्बन्ध कारक

मैं की संयोगी रूप मिलते हैं।

रूप, अर्थ तथा प्रयोग के दृष्टिकोण से सार्वनामिक रूपों के आठ भेद मिलते हैं :-

१. पुरुष वाचक सर्वनाम
२. निश्चय वाचक ,,
३. अनिश्चय वाचक ,,
४. प्रश्न वाचक ,,
५. निज वाचक ,,
६. सम्बन्ध वाचक ,,
७. सार्वनामिक विशेषण ,,
८. सार्वनामिक क्रियाविशेषण ,,

पुरुष वाचक सर्वनाम

उत्तम पुरुष

मूलरूप एक वचन

हमैं — गोरख कहै हमैं आपणौं भुगता - गो०बा०स० २७३
हमैं — ग्यान कथीजि हमैं विग्यांन पाया - गो०बा०स० २०१
हमै — हमैं तौ रहवा रहौ - - गो०बा०पद २६
मै — भूल कहै मैं रुखा ० अनल कहै मैं धाया गो०बा० पद २५
मैं - ताका मैं चेला — गो०बा०पद १२

मैं — मैं अपराधी आप मैं अपराधी - ना० १५
मैं — मैं तूं विसार्‍यौ और अभागा - ना०४१
मै — नामदेव कहै मैं नरहर गाया - ना० ११

मैं	मैं मनिषा जनम निरबंध ज्वाला	ना० १५
मैं	ताके अंतरिथ को मैं नायाँ नारद	ना० १५
मैं	ताकूं मैं न सताऊंगा	ना० ११
हम	हम तो भूले ठाकुर पाने	ना० १८५

मैं- श्लोक ८

हम्मी हम्मी दज्भा फ०श्लोक ६

हमीं श्लोक ६

मैं फरीदा मैं जानियाँ - फ० श्लोक ८७

हूं संसार समदे तारि गोविंद । हैं तिरही न जानूं बाप जी - ना०५०

हौं - तू मेरे ठाकुर तू मेरे राजा हौं तेरे सरने आया रे - ना० १३१

हौं - फरीदा हौं लौंडी सहु आपना फ० श्लोक ४५

हउ - हउ विरह जाकी - फ० रागभूही

हउ - हउ तउ एक रमरभा लेअरु ना० २०७

हूं- निद्रा कहै हूं षरी बिसूती गो०बा०स० १७

हूं - हुं ताका दास - गो०बा०स० । ४

हौं - कवनु सु वैनों हौं करी रितु वसु आभवै कंतु - फ० श्लोक १२४

हुअ - ना० उह तेरी यूंगंडा न तू मेरी भक्ति - ना० २१८

हम - जिस भामन हम बैठे केतिक वैसि गह्यिा - फ० आमा०फहला० १०

अम्हें- अम्हें सब सिद्धि पाई - गो०बा० पद २५

अमें - अमें तो रहिबा रंगे - गो०बा०पद २१

अम्हें अम्हें जगेला व्राप्देय - ना० १६५

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में उत्तम पुरुष एकवचन में मैं तथा हम के रूप बहुतायत से पाये जाते हैं । अत: हम कह सकते हैं कि मैं तथा हम पद-

मूलरूप बहुवचन

हम (व०ब०) उड़ु निदौसा मारिए हम दो सांदा क्या हाल - फ० श्लोक ४१

मूल रूप बहुवचन में सिर्फ हम रूप का ही यदाकदा प्रयोग हुआ है। अपभ्रंश में मूल अथवा विकारी किसी भी रूप में हम का प्रयोग कहीं भी नहीं हुआ है। हौं का बहुवचन अपभ्रंश में अम्हें है अत: हम अम्हें को कहीं-२ आदरार्थ बहुवचन की संज्ञा दे सकते हैं। सूरपूर्व आरंभिक व्रजभाषा में हम उत्तम पुरुष सर्वनाम के मूलरूप बहुवचन नामों में प्रयुक्त होने लगा था और इसका विकास अपभ्रंश के अम्हें रूप मे माना जा सकता है।

पुरुष वाचक सर्वनाम

उत्तम पुरुष

संबंध कारकीय रूप

मेरा	नाथ कहे मेरा इन्यों पंथ पूर्ण	बो०बा०स० २६१
हमारा	सब्द हमारा षरतर षांडा	स०गो०बा० २६१
हमारी	रहणि हमारी साथी	स०गो०ब० २६४
हमारा	जो राषै सो गुरु हमारा	गो०ब०स० १४२
हम ची	हरी हैं हम ची नाव री	ना० ३४
मेर	पौढ़ा षरवत मेर प्रबने	ना० १५
हमरे	हमरे धन बाबा बनबारी	ना० २
हमारा	ठाकुर साहिब प्राण हमारा	ना० १४
हमसि	तब सुख पावै हमारी देही	ना० १०२
हमारे	गोविंद वसै हमारे चीत	ना० ११५
हमारा	सुन यह केसव नियम हमारा	ना० १६१

मोर	मैं तूं विसाख्यो मोर अभागा	ना०४१	(नि०वचन)
मेरी	सांई मेरो रीझि सांची	ना० २६	
मेरी	मन मेरी गज जिम्भा मेरी कातनी	ना० ९८	
मेरी	है सब बंध भरम मेरी जीवनि	ना० ९७	
मेरा	धनि किंह मेरा मानिका भानु	ना० २१८	
मेरा	तेरे चरनौं मेरा माथा	ना० १२	
मोरा	नामदेव का है तू जीवना मोरा	ना० ४१	
मंना(मेरा)	बाप मंता समझि न परई	ना० २१२	
मेरे	कहा मरो मेरे कुला लौ	ना० १३१	

उत्तम पुरुष संबंध कारकीय रूप

मेरा	उस ऊपर है मारग मेरा	फ०राग सूही - ७
मेरा	जा फिर देखा मेरा कालाड़ु	फ०रागसूही ६
मेरे	लैला रब मोसिया तू जावी मेर मन	फ०सलोक ४०
मेरी	फरीदा रोटी मेरी काठ की लावन मेरी भुख	सलोक ३१
मेरा	जाए मिला तिनाँ सजनाँ मेरा टुटस नाही नेह - फ०सलोक २४	
हमारा	रहु हमारा जीवनाँ	फ०सलोक ३७
हमार	बाट हमार खरी उडीनी	फ०रागसूही १७

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में, उत्तम पुरुष सर्वनाम के सम्बंध कारकीय रूप बहुतायत में पाये गये हैं। एक वचन के रूप में मेरा मेरी मेरे पदग्राम के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। मोर मोरा, तथा मेर सब पदग्राम के विभिन्न रूप हैं।

बहुवचन में हमारा हमारे तथा हमारी पदग्राम है। सब पदग्राम के रूप में हम्हारे मांहरा हमार हमरे रूपों की प्रधानता है।

अपभ्रंशकालीन साहित्य में इन रूपों में से एक भी रूप नहीं प्राप्त हुआ है, हो सकता है कि यह रूप उस समय प्रचलित अन्यरूपों के विकसित रूप हों।

आरंभिक ब्रजभाषा में सम्बन्ध वाची पुल्लिंग मेरी मेरै तथा स्त्रीलिंग मोरी मेरि आदि सर्वनाम के रूप प्राप्त हैं ।

पुरुष वाचक सर्वनाम

उत्तम पुरुष

विकृतरूप एकवचन

मोहि	मोहि भरोसा पाइया	गो०बा०प ५८
मुझ	सतगुर मुझ लखाया	गो०बा०पद १०
मुझ	मुझ नींदड़ी न आवै	गो०बा० पद ४२
मुझ	नामा कहै सुनहु आदि साह । यहु पतिषा मुझ दिखाइँ	ना०२१८
मुझे	पंढरी नाथ किजइँ बतावो मुझ पंढरी नाथ किथइँ	ना० १८६
मोहि	मोहि बताई तोहि को राखै	ना० ११८
मोकउ	मोकउ तारिलै राम तारिलै	ना० २०५
मोहि	यस बैटा गिनि मोहि करि कीनी	ना० २०१
मोहि	जो मिलियो आई मोहि	ना०साखी ५
मोहि	यहु परतीति मोहि नहीं आवै	ना०प० ८
मुझै (मुझ)	आव कोई मिलवी मुझै राम सनेही	ना० १०२
मुझ	मुझ अवगुण तव नहीं दोसु	फ०राग सुही १
मुझ	साईं मुझ न देइ	फ०श्लोक ४१
मुझको	फरीदा मैं जानियां दुख मुझको दुख सबकी आन	फ० श्लोक ८७
मुझ	फरीदा बार पराइ बैसना साईं मुझ न देइ	फ०श्लोक ४४
हम	हरि हैं हमरी नाथ री	ना० ३४

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में विकृत रूपों की विविधता है । "मुझ" रूप परसर्ग की भाँति प्रयुक्त हुआ है । मोहि, हम, मुझे, मुझै, मो आदि

रूप सवपदग्राम की भाँति प्रयुक्त हुए हैं।

अपभ्रंशकालीन साहित्य में विकृतरूप मो तथा मुज्झ (मुज्झ) का कहीं कहीं प्रयोग हुआ है जो आगे चलकर खड़ीबोली की मुख्य विशेषता बन गया। आरंभिक ब्रजभाषा में इनमें से कोई रूप भी नहीं प्राप्त होता है।

पुरुष वाचक सर्वनाम

उत्तम पुरुष   विकृत रूप बहुवचन   (कोई रूप नहीं मिला है)

पुरुष वाचक सर्वनाम

मध्यम पुरुष

मूलरूप एकवचन

तु	तु किनहूं नहि पढ़ीया	सो०बा० पद ५८
तुम्ह	तुम्ह सतगुर में मैला	स०गो०बा० २६
तु	तु अविनासी आप कहिए	गो बा०पद ५८
तुं	तुं तो आप आप तैं हुवा	गो०बा०पद ५८
तुं	तुं देष्या अजिमारां	गो०बा०पद ५८
तुं	तुं ही पराणे धारा	गो०बा०पद ८
तुम	नाथ कहे तुम सादु रे अवधू	स०गो०बा० २६
तुम	नाथ कही तुम आपा राषो	स०गो०बा० ७३
तु	नामा तु ही जल ऊपर	ना० १६३
तु	तामें नामदेव एक तु मैला	ना० ३३
तु	जत जाऊं तत तुं ही देखू	ना० १२
तु	तु न बिसारि तु न बिसारि	ना० ४१
तु	तु अनाथ बैकुंठ नाथा तेरे चरनां मेरा माथा	ना० १२

तुम	हम नहीं होते तुम नहीं होते कवनु कहाते बाहबा	ना०२०६
तिधु	माँस न तिधु खाहि	प०श्लोक १३
तू	जै तू एवं रूख री	फ०श्लोक ४४
तुम	तुम क्यूं रैन बिहाइ	घ०श्लोक ३३

तुम जहाँ तुम दाखा तहाँ मैं [illegible]
जहाँ तुम पंथी तहाँ मैं साथी

जहाँ तुम शिव तहाँ मैं बैल पूजा ना० १६१

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में भी मध्यम पुरुष एक वचन सर्वनाम के विभिन्न रूप मिलते हैं। विश्लेषण के पश्चात यह कहा जा सकता है कि तथा तुम रूप पद ग्राम है। सहपदग्राम के रूप में तू, तिधु तुम्ह रूप मिलते हैं। अपभ्रंश कालीन साहित्य में तु एवं तुम्ह रूप मिलते हैं। सूरपूर्व प्रारंभिक ब्रजभाषा में भी कबीर पूर्व खड़ी बोली के तु तथा तुम रूप मूलरूप की भाँति ही प्रयुक्त हुए हैं जो अपभ्रंश के तुम्हें रूप का विकसित रूप है।

पुरुषवाचक सर्वनाम

मध्यम पुरुष (आदरार्थ बहुवचन)

मूलरूप बहुवचन

तुम्हे	निस तत निरवारला अम्हैं तुम्हैं नाहीं	बा०पद ३७
तुम्हैं	मुझ तै क होई तुम्हैं बंधन पड़िया	गो०बा० पद ४६
तुम्हैं	बंदत गोरखनाथ सुनव मछंदर तुम्हैं ईश्वर के पूता—गो०ब०४४।६	
तुम्हैं	तुम्हैं बैठ्या न काम न कीहुजी	रै०गो०बा० पद ५५
तुम्हैं	तुम्हैं करहु कौन की सेवा	गो०बा०पद ३८

तुम्ह	तुम सा देव और नहीं दूजा	ना० ४१

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में 'तुम्ह' अपभ्रंश कालिक साहित्य के रूप की प्रधानता है । यह रूप मूलरूप एकवचन के अतिरिक्त आदरार्थ बहुवचन के रूप में भी प्रयुक्त हुआ है ।

पुरुष वाचक सर्वनाम

मध्यमपुरुष

विकृतरूप एकवचन

तुभि	तुभि परि वारि डौं सब पढ़ीया देवा	गो०ना०पद ५८
तुज कूं	जिन्ने जन्म हारा है तुजकूं	ना० १२
तुझा	मुझा माथा तुझा चरणां	ना० ५८
तुम	तु जिनयूं पीऊं रै	ना० ४१
तुसी तुस	माया भले रिसी मुक्ति तुसी तुस देवता	ना० १४८
तुज	तुज देवा भूल पड़ी ५	ना० १६२
तुज कू	मैं अनाथ तुजले शरणा रखे तुज कू	ना० १६२
तोहि	तामें तोहि क्यों आवै वांसा	ना० १२२
तुझै	उपाये तुझै भतीजै	ना० १३३
तुम पै	नामा कहै मैं तुम पै हूं	ना० ५२
तुम सा	तुम सा देव और नहीं दूजा -	ना० ४१
तुम्ह पै	मैं अनाथ सुकृत हीनौं तुम्ह पै परयौ वियोग -	ना० १६४
तुमको	तुमको गाऊं भूठ दिखाने	ना० १८५
तुमनै	ऐसा नामा तुमनै धरणी का पथ बनाया	ना० १३६

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में तेरा, तेरी, तेरे रूप पदग्राम की भांति तथा तोरा, तोरे, तेरो आदि रूप सह पदग्राम के रूप में पाये जाते हैं। तुम्हारा, तुम्हारी, तुम्हरि तुम्हरे आदि बहुवचन मूलक रूप एक वचन की भांति प्रयुक्त होते हैं। अपभ्रंशकालीन साहित्य में भी तुम्हारे तथा तुम्हरा रूप मिलते हैं जो आरंभिक ब्रजभाषा तक भी इसी रूप में प्राप्य हैं।

निश्चय वाचक सर्वनाम

" यह " से " वह " तथो वे "

मूलरूप एक वचन —

यहु

यहु तन साथ साथ का घरवा   गो०बा० पद ५०

यह

चैलीन रावल यह भौर झाम्या   गो०बा०पद २८

यही	यही मारे न भाणांन उसड़ै न बुझ	स०जो०बा० २४
यहु	यहु मन सकती यहु मन सीऊ	गो०बा०स० ५०
इहि	इहि परमारथ श्री गोरष सीधा	गो०बा०स० १७४
सोई	सोई निरंजन डाल न मूल	स०गो०बा० ११६
सोइ	ना सोइ छीजै ना सोइ गलै	गो०बा०स० २३२
यह	यह अग्यान रंगी पर छाटा	ना० १५
यह	यह हैरब नियम हमारा	ना० १६१
यह	यहपरपंच सत्त विनसैगे	ना० १७४
यही	यही अनौपम बानी की	ना० १७८
यही	नामदेव भनै मेरै यही पूजा	ना० १०
इहि	इहि धरि आउ	ना० १७५
इहि	नामदेव भनै यहु रहि गुरा आंधा	ना० ४३
या	ध्याउ करूं पर मन की	ना० १७५
सोई	सोई साध सोई गुनि ग्यानी	ना० १३
सो	सो कारो सो ठौर न पावै	ना० ७४
एहु	एहु हमारा जीयड़ा	फ० श्लोक ३७
एह	एहे अमल नैड़ै दिख रह भारा	शिवा फ० श्लोक ५१
एही	घर घर एही आग	फ० श्लोक ८१
एही	फरीदा एही पछतावोगै	फ० श्लोक ६४
सु	ग्यानी बुता सु ग्यानं बुझ रखिया	गो०बा०पद ६८
सो	सो जोगी अवधूता	गो०बा० पद ६६
सो	सो दरवेश अलह की पाति	गो०बा०पद १८२
सो	सो आप ही करता आप ही देव	गो०बा०स० १४१

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में निश्चयवाचक सर्वनाम निकटवर्ती तथा दूरवर्ती दोनों के विभिन्न रूप प्राप्त हुए हैं। सम्बन्ध विश्लेषण से परि-

परिणाम यह निकलता है कि यह वोड पदग्राम है । सखपदग्राम के रूप में एह एवी ए ओ, एहु वहि निकटवर्ती तथा सोई वो सु तथा सो दूरवर्ती निश्चय-वाचक सर्वनाम के रूप हैं । अपभ्रंश में ठीक ठीक यह एवं वह का प्रयोग कहीं भी नहीं मिलता है । लेकिन उसके प्रारूप दृष्टिगोचर होते हैं । प्रारंभिक ब्रज-भाषा में यह के लिये वहि तथा वह के लिए वऊह रूप मिलता है । ब्रजभाषा के वहि एह वह आदि रूप अपभ्रंश के एहु से विकसित हुए हैं ।

<u>निश्चय वाचक सर्वनाम (ये, वे)</u>

<u>मूलरूप बहुवचन</u>

ये	ये हन्यौ कउ रोग	गो०बा०ह० २३५
ये	ये तत मुंभ विरला कोइ	स०गो०बा० १२०
वै	मरो वै जोगी मरो	स०गो०बा० २६
ते	ते पद जानां विरला जोगी	स०गो०बा० ६
ये	ये सब बकति अन्नया स्वामी	ना० १५
तीऊ	तीऊ अवैगी केवल रामा	ना० १७
ये	येसब बंध अरम मेरो जीवांन	ना० १७
ते	ते भी गये रे मन मंभा	ना० १०५
ते	ते भी देखत काल लीयेरे भय मंभा	ना० १०५
ते	ते बंदांन लवै रे	ना० १३१
ये	ये बोई हीरालाल लगाया	ना० १३०
ये	ये सब भूठे वेषभूषाना	ना० २३
वे	वे पर उपकारी	ना० १४३
ये	ये दो नैना मत छुवो	फ० श्लोक १२
ते	प्रेम पियाला साम का वे पीवे ते देह	फ० श्लोक १६

कबीर से पूर्व खड़ीबोली काव्य में निश्चयवाचक सर्वनाम मूलरूप बहु-वचन के विभिन्न रूप मिले हैं। निकटवर्ती रूप में "ये" तथा दूरवर्ती रूप में वे वर्तमान हैं। सम्प्रदान के रूप में तोऊ, वे, तथा वे रूप प्रयुक्त हुए हैं। अपभ्रंश कालीन साहित्य में भी वे तथा ये का प्रयोग हुआ है। आरंभिक ब्रजभाषा में वे का प्रयोग बहुवचन के रूप में नहीं है। वे का प्रयोग आरंभिक ब्रजभाषा में बहुवचन के रूप में बहुतायत से है।

निश्चय वाचक सर्वनाम

विकृत रूप	एकवचन	(वह, उस)
उस	या उस वार न पार	गो०बा०स० १०४
इस	इस विधि आवत पुरिष की गवी	गो०बा०स० १४५
इस	इस चौपदा में मारले गीता	गो०बा० स० २३६
याकी (स्त्री)	याकी धेनु का दूध यु मीठा	गो०बा०पद ५१
या	या पवन कोई जाणै	स०गो०बा० १४५
ता (उस)	ता मैं अकाल कहाँ तै आवै	गो०बा०स० २०२
तसि	तसि गाभि अंतरि पद निरबनं	स०गो०बा० १६८
ताकूं	ताकूं पेखत माइदस लागा -	ना० १३०
ताका	ताका अंत न जानिआ	ना० १६२
ता	रमता न कोई निरपख हुवै जैसे	
	तापै मिटै अंतर की तपनी	ना० १३
ता	ता पूजी मेरौ लागै मना	ना० १२८
ताकी	नामदेव कहै और ताकी मानै	ना २६
तास	तास परमि मैं जाऊंगा	ना० १५
उस	उस ऊपर है मारग मेरा	फ० सलोक ७
इस	फरीदा मिल रहा इस दुनी	फ० सलोक १११

तिन	तिन पर कृपा करौ तुम	ना० १४२
इनकी	जब लगि इनकी आसा	ना० ९५
इन	इन लोगनि मारि भगायौ जी	ना० १३१
इन	इन भीतर गोविंद भजि रे	ना० १७४
इनि	आगे इनि अनेक भरमाया	ना० ३९
उन	उन नै मारा, उन नै तारा	ना० १६३
उन	मानावतां गया उनाला एक यगां दुध	ना० १८४

कबीर से पूर्व खड़ी बोली काव्य में विकृत बहुवचन में इन तथा उन ग्राम हैं । एक पद ग्राम में रूप में तिन तथा इनि का प्रयोग है । अपभ्रंशकालीन साहित्य में विकारी रूप इन्ह तथा इन प्राप्त होता है । आरंभिक ब्रजभाषा में इन तथा उन दोनों ही रूपों की बहुलायत है ।

निजवाचक सर्वनाम

आप	सो आप ही करता आप ही देव	गो०बा०स० १६१
आपा	नाथ कहै तुम आपा राखौ	गो०बा०स० १४८
आपै	सो आपै करता आपै देव	स०गो०स० १५८
आपै आप	परगटा मांहीं आपै आप	स०गो०बा० २०२
निज	निज तत निहारि गोरख अवधूता	स०गो०बा० ९१
निज	निज तत नांव अमूरति मूरति-	गो०बा० आरती ६२
अपणी	कमाई अपणी उनई पाई	गो०बा०पद ५८
आपै आप	जीवलोक आपै आप गंवाया	गो०बा०पद ४७
आपणा	आपणा ही अंध पाथ आपणा ही गाई	गो०बा० पद ४१
अपणा	आपणा ही मकड़ी आपणा ही जाल	गो०बा०पद ४१
आपै	आपै गोरखनाथ बोलत बैना	गो०बा०पद ६
आपना	पिंडु कारणी अपनी बीत	गो०बा०स० ७
आपनै	आपनै वेदन कविर निजु	फ०श्लोक १३

सोई	सोई जीव न वसदा	फ० श्लोक ११०
जे	जे गुरु मिले न पूरा	गो०बा०पद० १२

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में संबंध वाचक सर्वनाम मूलरूप एकवचन के अन्तर्गत रूपों की विभिन्नता है । पदग्राम के रूप में, जो, एवं सो रूप प्रयुक्त हुए हैं । सह पदग्राम में जे सोई जे आदि रूप मिले हैं । अपभ्रंशकालीन साहित्य से लेकर आधुनिक युग तक सम्बन्ध वाचक सर्वनाम के सभी रूप ज्यों के त्यों चले आ रहे हैं । आरंभिक सूरपूर्व ब्रजभाषा में भी सभी रूप प्राप्य हैं ।

संबंध वाचक सर्वनाम

मूलरूप बहुवचन

जे	जोगी सो जे मन सो गावे	स०गो०बा० १०२
जे	बाले जोवनि जे नर जती	स०गो०बा० २०
दु	पंढरीनाथ कु लेहि दु नामा	ना० २५
जे	फहिं मारि जें लागें पंथा	गो०बा०प्रा०सकेली १५

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में संबंध वाचक सर्वनाम मूलरूप बहुवचन के थोड़े में ही रूप प्राप्य हैं । जे पदग्राम है । अपभ्रंशकालीन साहित्य तथा सूरपूर्व ब्रजभाषा में यह रूप प्राप्य है तथा शुरू से अब तक यही रूप चले आ रहे हैं ।

संबंधवाचक सर्वनाम

विकृतरूप एक वचन

तिस	तिस मरणी मरौ	स०गो०बा० २६
जिस	जिस मरणी गोरख मर दीठा	स०गो०बा० २६
जासौं (जिससे)	जासौं अब जू सोरे अवधू	गो०बा०पद ४१

जाकै	जाकै राम नाम निर भली	ना० ८३
जा	जा दिन भार्ता बारईता	ना० ३१
जिस	जिस तुं दैवहि तिसहि बुझाई	ना० १५२
तिस	जिस तु दैवहि तिस हि बुझाई	ना० १५२
जिस	जिस तन बिरह न उपजै	श्लोक ३८
जिसु	सीहैं जीवु न बपरा जिसु भरवसु करतारा फ० श्लोक ११०	

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में संबंध वाचक सर्वनाम विकृतरूप एकवचन में जिस तथा तिस रूपों की विविधता है। अतः पदग्राम के रूप में जिस तथा तिस का प्रयोग हुआ है। उपपदग्राम के रूप में जा जिसु आदि रूप हैं। अपभ्रंशकालीन साहित्य सूरपूर्व ब्रजभाषा से लेकर आजकल आधुनिक हिन्दी तक समस्तरूप उसी तरह सुरक्षित हैं।

सम्बन्ध वाचक सर्वनाम

विकृतरूप बहुवचन

जिन	जिन जननी संसार दिखाया	गो०बा०पद ४६
जिनि तिनि	जिनि कीन्हा तिनि दीठा	स०गो०बा० २३६
जिनि	जिनि कीत्या सुरज-ब०	स०गो०बा०२१६
जैणैं	बालक इन्ही हैणैं बाप धमि राषां	गो०बा०पद ४
तैणैं	तैणैं पापा सर्व निरन्तर मैरै स्यामी	गो०बा०पद ४
जिनि, तिनि	जिनि कैमत्या तिनि भरि भरि पीया	गो०बा०पद २८
जिनहु	रामरंगि रामहैष जिनहु प्रतीति पाई	ना० २८
जिन्नै	जिन्नै जन्म दारा है तुम हूं	ना० १६२
तिन	पीछे तिन का लेकरि डाँमली	ना० २२१
तैन्है	तैन्हैं धरीया भिखकरी	ना० २२६

तैणौं	तैणौं बाघनी रुणाँदला	ना० २२६
तिन जिन	जिन यह लाधा, तिन तह पाया	ना० २२७
तिनका	तिनका लोप कम नाहीं रे अवधू	ना० ९८
तिन्ही	तिन्ही तु जन्मी	फ०श्लोक ७६
जिन्हाँ, तिन्हाँ	जिन्हाँ नैन निहालते	
	तिन्हा मिलन भी जाय	फ०श्लोक ८१
जिन्हैं	विरले कोई पाइआ जिन्हैं पिआरे नेह	फ० श्लोक ८३
तिना, जिन्हाँ	धिक तिनाँ दा जीविआ	
	जिन्हाँ विडाणी आस	फ० श्लोक २४
जिल्हा	तिन पँखि भी कँत जिल्हा बागु	फ० श्लोक १०२
तिन	तिन पँखिया कँत जिन्हा बाग	फ०श्लोक १०२
तैन्हैं	तैन्हैं पग लागू कर्जोडी - ना० ११२	

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में संबंध वाचक सर्वनाम विकृतरूप बहुवचन में रूपों की विविधता एवं बहुतायत भी है। पद ग्राम के रूप में जिन तथा तिन रूप प्रयुक्त हुए हैं। सरूपग्राम के रूप में जैसे जिनहु, जिन्हे जिन्हाँ, जिना तथा तैसे तिनि तिना, तिन्हाँ तैन्हैं आदि रूप हैं। इनमें भी अपभ्रंश कालीन साहित्य से लेकर सूरपूर्व ब्रजभाषा तथा आज तक की मानक हिन्दी में परम्परा-गत रूप से विकसित होते हुए समस्त रूप सुरक्षित हैं।

प्रश्नवाचक सर्वनाम

मूलरूप एकवचन

कौन	तुम्हें करहु कौन की सेवा	गो०बा०पद० ३८
कौनैं	पवना रे तू जासी कौनैं घाटी	गो०बा०पद २४
कौण	कौण तुम्हारी बक्स भाव की	गो०बा०पद० २६६
केणी	तौ काया केणीं पाई	गो०बा०पद ५४

क्वन	नाद हमारै आवै क्वन	गो०बा०प०० १०६
काहे	काहे भुलत हौ अभिमानं	गो०बा० पद १४
की	कौहै घर जागै की घर सुता	बा०गो०बा० ३२
किसा	जै भीत मंगाबहि त किसा पर्जाई	ना० १५२
कौन	कौन के कांक रहुयौ राम नाम लेत ही	ना० २४
कौन	हरि जिन कौनं सहाई करैगा	ना० १७८
कौन	मदउ कौन होइ माधउ मौभिउ	ना० १८७
की	की छिपिया ८० छिम बेलल देव	ना० १८७
क्यौं	बस भुइय क्यौं निकसे दुध	ना० १७१
क्यूं	बीज बिना क्यू निमजै बेस	ना० १७१
कहा	कहा करौं जग देखत अंधा	ना० १७७
कहा	माधौं जी काह कहें मन की	ना० १७५
कौसे	पउन बारा कौसे बीध की परिकमता	ना० १८०
क्वने	क्वनै सांई री मांई	ना० १९६
कउमु	कउमु कवै मिलि बूझिब	ना० १९६
कवा	तौ कवा राजा छाडि राव	गो०बा०आत्मबोध १८
कौन	नित नित सुमिरह कौन	क० श्लोक ८६
क्वन	क्वन सुमबबस क्वन गुन	फ० श्लोक १२४
कउन	को गए सिंह ।पहन मौरा वाली कउरस	फ० श्लोक ४६
क्यूं	सौक्यूं आवहि बाबु	फ०श्लोक ७०
किउ	वादिसाह एसी किउ होइ	ना० २९८

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में प्रश्नवाचक सर्वनाम मूलरूप एकवचन में विभिन्नरूपों को प्रदर्शित करते हैं । कौन तथा कौन रूप पदग्राम की भांति प्रयुक्त हुए हैं । सहपदग्राम के रूप में क्वन, क्वण, कहा, क्यौं कवा, कउन, किउ किसा आदि रूप प्राप्त होते हैं । प्रश्नवाचक सर्वनाम के लिये अपभ्रंश में काइं,

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में प्रश्नवाचक सर्वनाम विकृतरूप एकवचन में किस पदग्राम के रूप में प्रयुक्त हुआ है। किस्सु तथा कासों सहपदग्राम हैं।

प्रश्नवाचक सर्वनाम

विकृतरूप बहुवचन

किन	तैग किनहूँ मरम न पाया	ना० ६४
किन	तू किनहू नहिं धंदीधा	गो०बा०पद ५८
किनहूँ	जाता जोगी किनहूँ न ध्याता	गो०बा० पद ५२
किणि	कौनै राताँ हौरों गारा किणि मीर भूल	गो०बा०पद५४

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में प्रश्नवाचक सर्वनाम के अन्तर्गत विकृतरूप बहुवचन में थोड़े से ही रूप प्राप्त होते हैं। किन पदग्राम है तथा किलि तथा किनहूँ सहपदग्राम हैं। आरंभिक ब्रजभाषा में बहुवचन में किन का प्रयोग मिलता है। यह बहुवचन का विकारी रूप है।

अनिश्चय वाचक सर्वनाम

मूलरूप एक वचन

कोई	कोई जोगी जानत गवनं	गो०बा०स० ५६
कोई	कोई कोई बढ़ी कोई बबादी	गो०बा०म० ६३
कछू	गुण हैं कछू न कहनां	गो०बा०स० ६२
कछु	जहाँ कछु नाहीं तहाँ कुछ देखा	ना० १६४
कछू	निंदम को कछू नाहीं	ना०साखी ६
कोई	ऐसा न कोई निरपष हुवै जैसे तापै मिटै अंतर की तपनी	ना० १३

किछु	कुछ किछु न बूझै कुछ न सूझै	फ०श्लोक ६
कोई	मिट्टी पई अनोखी कोई न होसी मितु	फ०००श्लोक ५८
कतिहि	पीरहि विनु कीतीहि सुख पावै	फ० राग सूही १।५

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में अनिश्चय वाचक सर्वनाम मूलरूप एकवचन में रूपों की विविधता दृष्टिगोचर नहीं होती है । 'कोई' पदग्राम है । सम्बन्ध-पदग्राम के रूप में कछू किछू कतिहि आदि रूप प्राप्य हैं । अपभ्रंशकाल से ही अनिश्चय वाचक सर्वनाम कोई तथा कुछ थोड़े बहुत रूपांतर से चले आ रहे हैं । आरंभिक ब्रज में कोई का रूप प्रयुक्त ना होकर कोऊ प्रयुक्त हुआ है । जो कबीर के पूर्व खड़ी बोली साहित्य में कहीं भी प्राप्य नहीं है ।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

मूलरूप बहुवचन

कोई-कोई	कोई कोई कोरह रह गया	सा०गो०बा० २११
कोई	घड़ी मूरति को सब कोई मेवा	गो०बा०पद ५८
कोई	रात्रि न सन्ध्या कोई	गो०बा०पद ३८
कोई	कोई आई सुकुल जागीला	ना० ३१
कोई	जऊ ततु विचारै कोई	ना० १५४

कबीर के पूर्व खड़ी बोली साहित्य में अनिश्चयवाचक सर्वनाम मूलरूप बहुवचन में सिर्फ एक रूप 'कोई' ही प्राप्त हुआ है । यह रूप अपभ्रंश-कालिक साहित्य में तो प्राप्त है पर आरंभिक ब्रजभाषा में यह रूप नहीं मिलता है ।

अनिश्चय वाचक सर्वनाम

विकृत रूप एक वचन

काहु	मन काहु के न आवै हाथि	गी०व्या०गा० १३२
किसी	भेद न किसी देनि	राग सुही ११६
किसु	साईं वायदु आपने वेपद कीऽर किसु,	फ०० श्लोक ।३
किसु	जीन नवीकि सुनायि वै भेद न किसु देनि	फ०० श्लोक ११६

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य अनिश्चयवाचक सर्वनाम विकृत रूप एक वचन में केवल थोड़े से रूप मिले हैं । पदग्राम के रूप में किसु का प्रयोग है । शब्दपद-ग्राम के रूप में काहु किसी आदि रूप मिले हैं सुरपूर्व ब्रजभाषा में विकृतरूप काहु ही प्राप्त होता है किस का प्रयोग अत्यल्प है ।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

विकृत रूप बहुवचन

किनै	इकनि किनै चालिए दरवैशावी रीति	फ०श्लोक १९८

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में केवल एक रूप प्राप्त हुआ है ।

—

सार्वनामिक विशेषण

अनेक सार्वनामिक पद संज्ञा के पूर्व आकर विशेषण का कार्य करते हैं। इन विशेषणों को सार्वनामिक विशेषण कहते हैं। इनकी रचना दो प्रकार की होती है --

१. मूलसार्वनामिक विशेषण --

मूल सर्वनाम पद ही संज्ञा के पूर्व आकर विशेषण का कार्य करते हैं। जैसे - निश्चयवाचक, अनिश्चयवाचक, सम्बन्धवाचक, प्रश्न वाचक आदि सार्वनामिक पदग्राम मूल सर्वनाम का निर्माण करते हैं।

२. यौगिक सार्वनामिक विशेषण

वे सार्वनामिक विशेषण हैं जो मूल सार्वनामिक पदग्रामों में अन्य प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं --

१. गुण या प्रणाली बोधक सार्वनामिक विशेषण

२. परिमाण बोधक सार्वनामिक विशेषण

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में निम्नलिखित मूल तथा यौगिक सार्वनामिक पदग्राम प्रयुक्त होकर सार्वनामिक विशेषण निर्मित हुए हैं --

सार्वनामिक विशेषण

मूल सार्वनामिक विशेषण -

या (धन) ना० २

ताहि (आपदा) ना० ३

सबै (सखि) ना० १

सौ (मन)	गो०बा०ढ० २२१
ये (पैटावसु)	ना० २४
थै (तत)	गो०बा० पद ७
सम (पैसा)	गो०बा० आरती ६२
यक (विधि)	गो०बा० पद ५७

सार्वनामिक विशेषण

यौगिक सार्वनामिक विशेषण		गुण या प्रणालीबोधक
ऐसा-	ऐसा एक सुभन बाबा रतनहाजी कहै	स०गो०बा०१२४(ऐस+आ-ऐसा)
ऐसै	ऐसै पिंड का परयाजावै प्राण	स०गो०बा० २२३ (ऐस+ए-ऐसै)
ऐसे	जग मैं रहीं रखा	गो०बा० ७२(ऐस+ऐं-ऐसें)
ऐसी	ऐसी जग की छाया	गो०बा०पद ४४(ऐस+ई-ऐसी)
ऐसा	ऐसा न कोई निरपख हुवै चौसै	ना० १३ (ऐस+आ - ऐसा)
ऐसै	ऐसै ही मना रे मेरे ऐसे ही मनाँ	ना० २१० (ऐस+ए-ऐसै)
ऐसौ	ऐसौ ग्यान नित ही धरिए	ना० ७५६ (ऐस+आँ)
ऐसी	ऐसी चौति प्रकासा	ना० १६२ (ऐस+ई-ऐसी)
ऐसौ	ऐसौ ध्यान मायौ धरनिला	ना० १३२ (ऐसू+औ-ऐसौ)
ऐसैं	ऐसै घहु धर वारि सौं राता	ना० ११५ (ऐक+एं-ऐसैं
ऐसौ	जौ ऐसौ औसर निरहैगी	ना० १७८

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में गुणबोधक सार्वनामिक विशेषण के रूप विविधता से प्राप्त होते हैं। उपर्युक्त रूपों में से "ऐसा" पदग्राम की भाँति प्रयुक्त हुआ है। सहपदग्राम के रूप में ऐसौ ,ऐसै, ऐसौ, ऐसी आदि रूप प्राप्त हुए हैं। इन सभी सार्वनामिक विशेषणों के रूप अपभ्रंश से ही यत्किंचित रूपान्तर के साथ आधुनिक हिन्दी तक चले आ रहे हैं। अतः, अपभ्रंश काल का मुख्य प्रत्यय था - रूपान्तर के फलस्वरूप ऐसा ऐसे आदि रूप उपिलब्धांक्त प्रकरण अपभ्रंश-कालीन साहित्य में प्राप्त हुए हैं। आरम्भिक ब्रजभाषा में भी ऐसा, ऐसे आदि रूप प्राप्त हैं।

यौगिक सार्वनामिक विशेषण

कैसी   भगत नामदेव पूछा कैसी भासा   ना० ४२ (कैसा+ई-कैसी)

कैसे   कैसे तिरन वबु कुटिल मतूली   ना० ४३ (कैसा+ए - कैसे)

कैसा   ये जोग है कैसा—गो०बा०पद ४६ (कैस+आ- कैसा)

कैसैं   कैसैं कर् धरिबा गुण का भंडार   गो०बा०स० ८४ (कैसा+ ऐं-कैसैं)

कैसा पदग्राम है तथा सम्पदग्राम के रूप में कैसे, कैसैं, आदि रूप हैं । अपभ्रंशकाल में इसका विभिन्न रूप कस मिलता है पर कैसा नहीं । लेकिन आरंभिक सूरपूर्व ब्रजभाषा में कैसे तथा कैसा दोनों ही रूप प्राप्य है ।

तैसा —

तैसा   जैसी मन उपजै तैसा रामकरै   गो०बा०पद ५ (तैस+ आ तैसा)

तैसे   तैसे संत जना रामु नामु न भाहै   ना० २१० (तैसे+ए - तैसे)

तैसी   तिन तैसी विधि पाई रे मना   ना० १०१ (तैस+ई- तैसी)

तैसा पदग्राम के रूप में प्राप्त है तथा सम्पदग्राम के रूप में तैसी एवं तैसे रूप मिलते हैं । अपभ्रंश में तो समान रूप नहीं प्राप्त होता है लेकिन आरंभिक ब्रजभाषा में तइस का रूपांतर तैसा तैसे तथा तैसैं सभी रूप प्राप्य हैं ।

यौगिक सार्वनामिक विशेषण

जैसा-

जैसी   जैसी मन उपजै   गो०बा०पद ५ (जैस+ई-जैसी)

जैसी   धौर मथन जैसी भँखिया   गो०बा०पद ४३(जस-अइ- जैसी)

जैसे   जैसे पवनां तैसे मटा   ना०१२५ (जैस+ए-जैसे)

जैसा   जैसा करै तो तैसा पाय   गो०बा०आत्मबोध २२

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में यौगिक सार्वनामिक विशेषण के विभिन्न रूप हैं । यहां पर 'जैसा' पदग्राम है तथा जैसे और जैसी सम्पदग्राम के रूप में प्रयुक्त हुए हैं । 'जइस' प्रत्यय अपभ्रंशकालीन सर्वरूप का है । लेकिन सूरपूर्व ब्रजभाषा में उपर्युक्त समस्त रूप प्राप्त है ।

जेंता	जेंता अंतर भगत सूं	ना० साखी ६
जितना	जितना लाइक बामला होंतैं	स०गो०बा० २५४
जेढ़ा	पल एढ़ा जेढ़ा इनिक फंदा	गो०बा०पद १७

पदग्राम के रूप में जेता तथा सहपदग्राम के रूप में जतन जेढ़ा, जेतलों, एवं जितना रूप मिलते हैं । अपभ्रंश कालीन साहित्य में भी जेन्तुल रूप प्राप्त हुआ है । सूरपूर्व व्रजभाषा में जिते तथा जिति रूप प्राप्य हैं । आधुनिक खड़ी बोली में प्रचलित शब्द जितना कहीं कहीं गोरखबानी में प्राप्त हुआ है ।

उतना

तत	जतन पीवै तत भावल तरवर	ना० १११
तेतौ	तेतौ तामैं मेल है	स०गो०बा० २४५
तेता	तेता हरि सूं होई	ना० साखी ६

इसके केवल तीन रूप प्राप्त होते हैं जोकि अपभ्रंशकालीन साहित्य में प्राप्त रूपों में भिन्न हैं । लेकिन आरंभिक व्रजभाषा में तिता, तिति तिते आदि रूप मिलते हैं ।

यौगिक सार्वनामिक विशेषण

कितना

केता	केता सब बिरव तलि रहै	स०गो०बा० ५७
केते	वैसि गहिया केते	फ० आसा महला १०
कित	कित फिरै जित	फ० श्लोक १८
मिति	फरीदा मिति जोदन प्रीति	फ०श्लोक ३६
किते	इस दुनि सिऊ दुनि न किते संगि	फ०श्लोक १११
किचि	कनी बुसे दे रहां किचि बगे पवन	फ०श्लोक ८६
कियाहूं	चारे कुंडा दूढियां रहन कियाहूं नाहिं	फ०श्लोक १०३

पदग्राम के रूप में 'केता' प्राप्त हुआ है । सहपदग्राम के रूप में कित, किथि, किधें किया हूँ आदि विभिन्न रूप हैं । सूरपूर्व आरंभिक ब्रजभाषा में कत, कंतें आदि रूप मिलते हैं जो कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य के रूपों से मिलते हैं ।

संयुक्त सर्वनाम

सब कुछ -	जो लोंपे सब कुछ	फ०श्लोक १५
सब कुछ	चले सब कुछ भावि	फ०श्लोक ७६
सब कोई	कथनी वदनी सब कोई कहै -	ना० ११७
हब सब	पढ़ नही हम सब पयि हारे	ना० ११८
सब कुछ	नामा भक्ति मेरे सब कुछ भाई	ना० १२६
जे कोई	याहि हि मालि जे कोई जूमे	गो०बा०पद २६
सब कछू	नाद ही तो आछै बाबू सबरधू निधानां	गो०बा०पद ६२
सभुकोई	सभुकोई देखै पति आई	ना० २१८
को, को	को को न सारे कोर को न उधारे	ना० ७६
औरन कूं	मन प्रतीती नही प्रानी औरन कूं समझाई -	ना० १४२
सब कोऊ	सब कोऊ जनि जाही आपा	ना० २२७
सब हिन	सबहिन सूं निरवैरता -	ना०साखी १०
औरे कोई -	करता औरे कोई	गो०बा० पद ५८
ताको कहा	ताको कहा करे जोरा	गो०बा० पद ४५
सोधू जो	सोगिया सोइ जो मगमें न्यारा	गो०बा० पद ४५
अवर कछू	साचो ढारि अवर कछू भरई	ना० ४२
आन सम	झूठ मूठु कू आन सम भेव -	ना० २१६

अध्याय — ७

विशेषण

"विश्लेषण"

विशेषण

१. गुणवाचक विशेषण —

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में निम्नलिखित गुणवाचक विशेषणात्मक पदग्राम मिलते हैं। उस युग में प्राप्त सभी गुणबोधक विशेषणों को प्रस्तुत करना असंभव है — अतः उसके स्वरूप विश्लेषण के लिए कुछ उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है — जिससे गुणबोधक विशेषण की प्रकृति स्पष्ट हो जाती है :-

काम	गो०बा०सु० १
कामीर	गो०बा०प० १
विमल	गोबा०प० २
आढि	गोबा०प० ३
विरला	गो०बा० सु० ७
गंभीर	गो०ब०सु०१२७
अलप	गो०ब०सु० २०
मीठा	गो०ब०सु० २५
साच	गो०बा०सु० २५
साच	गो०सु० २५
काचै भांडै	गो०ब० सु० ३७
सहज	गो०बा०सु० ४५
पाखंडी	गो०बा०सु० ४७
सकल	गो०बा०सु० ४५
परम	गो०बा०सु० ६८
निराकार	गो०बा०सु० ७७

नीफर	गीता०श०१।११
धौर	गी०ब०श० १७६
फीकी (शुष्क)	गी०बा०श० १८१
बरतर	गी०बा०श० २२०
बहु	गी०बा०श० २३३
अधाधरि	गी०बा०श० ३३७
ऊपस	गी०बा०श०२४०
मलीना	गी०बा०श० २४०
बड़ी	गी०बा०श० २४३
अभागी	गी०बा०श० २४७
सुन्दरी	गी०बा०श० २५०
काली	गी०बा०श० २५०
नकटा, बूचा, काना	गी०बा०श० २४६
बिसाल धालगी, कापरी	गी०बा०श० २५६
कीमती	गी०बा०श० २६४
पापी	गी०बा०श० २६७
उजियारा	गी०बा०पद ४
कांम, क्रोध, लोभ	गी०बा० पद ५
भारी	गी०बा० पद ११
भौले	गी०बा०पद ५६
पतला, हलका	गी०बा०पद ५०
बंक	गी०बा० पद ५६
गूंगा	गी०बा०बरवै बोध - ११
बयार	बारा०महल फ०० ४
अमल	श्लोक फ०० ६६
अमोल	श्लोक फ०० १२६
अवगुन	फ०राग सूही २।१
इकना	फ०श्लोक ४७

इकनि	श्लोक फ० ११८
इकल	फ० श्लोक ६७
उंचे	फ०श्लोक फ०८२
ऊपर	फ०श्लोक ८२
कच्चियाँ	आ०महला फ० १
कढ	फ० श्लोक ४०
कांचे	फ० श्लोक ६६
काला	फ० श्लोक ६२
काली	फ० श्लोक १५
काले	फ०श्लोक ६
अँधियारी	फ० श्लोक ५२
कृपालु	फ० रागसूही १।५
खन	फ० श्लोक १२५
गंदला	फ० श्लोक ३६
गंध	फ० श्लोक ३५
गहला	फ० श्लोक ६६
गांढले	फ० श्लोक ५०
गुन	फ० श्लोक ६०
गुनाह	फ० श्लोक ६२
घनेरियाँ	फ० श्लोक १०६
चंगा	फ० श्लोक ६
छिपना	फ० श्लोक ८
तल	फ० श्लोक १२१
तले	फ० श्लोक २०६
दुहेला	फ०रागसूही २।१
दर	फ० श्लोक ९२
दोसूं	फ०रागसूही १।२
धन्य	फ०आसा महला ३

धमली	फ०श्लोक १६
नउणा	फ० श्लोक ६
निदोसा	फ०श्लोक ४१
निहाफलै	फ० श्लोक ८१
नीवा	फ०श्लोक ६
नीवै	फ० श्लोक ७६
पकिआं	फ० श्लोक ६०
बड़ा	फ० श्लोक १०५
बहुरिआं	फ० श्लोक २४
बम्भाप	फ० श्लोक १८
बापुड़ा	फ० श्लोक १२२
बुड्ढा	फ० श्लोक ४३
बेपरवाह	फ० श्लोक ६६
बेमुहताज	फ० श्लोक १०८
भला	फ० श्लोक १०६
भली रीति	फ० श्लोक ७१
भूर	फ० श्लोक १२
मंदा	फ० श्लोक ७६
मिठिआं	फ० श्लोक ३०
मैला	प० श्लोक ६२
रंगावली	फ० श्लोक ८३
लीक	प० श्लोक ६
बैयारा	आसा महला फ० १२
विभौ	ना० ३
चौरटी	ना० ४
गम, निगम	ना० १२
निरबंध	ना० १२
कुटिल	ना० १३

अधम, अशौच	ना० १८
भ्रष्ट, विभचारी	ना० १८
काला	ना० २४
आंधा	ना० २१
निर्मल	ना० २२
झूठे	ना० २३
मैलै	ना० २५
ऊजास	ना० २५
सांच	ना० २५
प्रतिव्रता	ना० २६
फा़ैव्ट	ना० ३०
धौसा	ना० ३१
सुफल, प्रबल	ना० ३१
सुत्तार	ना० ३२
सबल	ना० ३६
अखिल	ना० ४१
आलसीया	ना० ६३
लुबधी	प० ७४
नियारा, बियारा	ना० ८२
दुरमति	ना० ९०
नुमल	ना० ९१
गर्व	ना० ९२
अनुराग	ना० ९२
पियारा	ना० १०७
लौभी	ना० ११५
मैला	ना० १२१

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में उपर्युक्त गुणवाचक विशेषण प्राप्त होते हैं। विशेषणों की रचना में ब्रजभाषा में इनका निर्माण अपभ्रंश पद्धति से थोड़ा भिन्न अवश्य है क्योंकि रूप निर्माण की दृष्टि से प्राचीन आर्य भाषा के विशेषणों की तरह विशेष्य के लिंग वचन आदि का अनुसरण करते हुए भी इनके स्वरूप में सर्वत्र कोई निश्चित परिवर्तन नहीं होता है कई स्थलों पर तो ये लिंग वचन के अनुसार परिवर्तित हो जाते हैं, लेकिन कहीं नहीं भी होते।

अत: उपर्युक्त विश्लेषण से यह परिणाम निकलता है कि कबीर के पूर्व खड़ी बोली में विशेषण पदों के रूप निर्माण की प्रकृति विकसित हिन्दी की भांति है:-

१. विशेष्य के बहुवचन होने पर भी विशेषण एक वचन में ही रहता है।

२. आकारान्त विशेषण का रूप परिवर्तन-आकारान्त संज्ञा की भांति होता है। अर्थात् आकारान्त मूल पुल्लिंग संज्ञा के साथ विशेषण का मूल रूप बहुवचन संज्ञा के साथ विशेषण का बहुवचन, विकारी संज्ञा के रूप विशेषण का विकारी रूप तथा स्त्रीलिंग विशेष्य के रूप विशेषण भी स्त्रीलिंग हो जाता है।

३. क्षेत्रीय दृष्टिकोण से इन विशेषणों का विश्लेषण करने से प्रतीत होता है कि कबीर के पूर्व खड़ीबोली में मध्यदेश में प्रचलित विशेषणों का अधिकांशत: प्रयोग हुआ है। बोली विभिन्नता की दृष्टि से इनमें खड़ी ब्रज अवधी तथा पंजाबी विशेषण मिलते हैं।

४. प्रयोग की दृष्टि से विशेषणों के विशेष्य कभी पहले, कभी बाद और कहीं कहीं कुछ दूर पर प्रयुक्त हुए हैं। कहीं-कहीं तो विशेषण संज्ञा की भांति प्रयुक्त हुआ है।

परिमाणवाचक विशेषण

थोड़ा	गो०ब०स० ३२
बहु	गो०बा० स० ६५
पूरा	गो०बा०स० १६०
ऊरा	गो०बा०स० १६०
बीबीस	गो०बा०स० २२५
घणेरी	गो०ब०स० २५५
ढारी	गो०बा०स०२६३
बहुरि	गो०बा०प० २७५
रती	गो०बा०प० ६
घणिआणी	गो०बा० पद १७
घाणी	गो०ब०पद ५५
रतु	फ० श्लोक ५३
रता	फ०श्लोक ११
रती	फ० श्लोक ५३
बहुतु	फ०रागसूही १।७
थोरी	ना० ३
अल्प	ना० १४
घणी	ना० १५
अली	ना०५६
बहुलक	ना० ६६
घनी	ना० ८१
घनी	ना०६४

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में उपर्युक्त परिमाणवाचक विशेषण प्राप्त होते है।

संकेत वाचक विशेषण

निश्चय वाचक, सम्बन्ध वाचक, प्रश्नवाचक, तथा अनिश्चय वाचक सर्वनामिक पद जब किसी संज्ञा शब्द के पूर्व आते हैं तो विशेषण की भाँति उस संज्ञा पद की विशेषता बतलाते हैं। इन सार्वनामिक पदों की संकेत करने की इसी प्रवृत्ति के कारण इन्हें हम संकेत वाचक विशेषण भी कह सकते हैं। नीचे हम कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में पाये जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण संकेत वाचक विशेषणों का विवेचन कर रहे हैं। वैसे इनका विस्तृत विवेचन "मूलसार्वनामिक विशेषण" नामक प्रकरण में किया जा चुका है --

कोई (बिरला)	गो०बा०स० १९३
यूं (बोल्या)	गो०बा०स० १९४
इस (औधूता)	गो०बा०स० २३४
कछु (भाव)	गो०बा०स० २३४
ऐसा (जोगी)	गो०बा०स० २५३
इसै (परख्या)	गो०बा०स० २५४
तै (पुरिखा)	गो०बा०स० २५९
तिहि (घरि)	गो०बा०पद ४
यहा (विधि)	गो०बा० पद ५६
यह (अग्यान)	ना० १५
इहीं (घरि)	ना० १५
याही (गोविंदा)	ना० ७०

पूर्ण एवं निश्चित संख्या वाचक विशेषण --

एक	गो०बा०स० १८८
एकै	गो०बा०पद १५
प्रथम	गो०बा०स० ५६
एक	गो०बा०स० ८६

एक	गी०भा० पद ३
एक्की	ना० ७५
ईकल	ना० ६
एक	ना० १६
बीज	ना० ११
बीय	गी०भा०छ० १७६
दुइ	गी०भा०छ० १६८
तिनि	गी०भा०छ० १८५
तीनि	गी०भा०छ० १२, ११
तीनि	ना० १३
तिनिह	ब० ८७
चारगा	ना० ३१
च्यार	ना० १०५
चारि	गी०भा०छ० १७६
पंच	गी०भा०छ० १७८
पंच	गी०भा०छ० १७५
पंच	ना० १६
पाँच	ना० ६६
अष्ठ	ना० ७४
अष्ट	गी०भा०प्रा०संबंधी १३
आठ	ना० ३
नौ	गी०भा० प्रा० संबंधी १३
नव	गी०भा०छ० ५०

नव	ना० ३
दस	ना० १६
दहँ	ना० ३६
[illegible]ादस	गी०भा०ख० ११६, ६३
दसवँ	गी०भा०ख० १५५
दहुं	ना० २
एकोतरसँ	गी०भा०ख० १६४
चौदस	गी०भा०ख० ६३
बीस	गी०भा०ख० १७६
[illegible]बीस	ना० १२१
पचीस	गी०भा० प्रा०ा संकली ५
तीस	ना० १२१
बतीस	ना० १२५
चलीस	गी०भा० प्रा०ासंकली १३
छतीस	गी०भा०ख० १६७
बावन	ना० १६२
पचास	गी०भा०प्रा०ासंकल ५
साठि	ना० ११३
पाँसठि	गी०भा०ख० १४८, ५०
छव्साठि	ना० ११
छ्साठि	गी०भा०ख० १३
बहतरि	गी०भा०ख० ५३
तीन वै साठि	गी०भा०प्रा०ा संकली ६

नौ सै	गो०बा०प्राण संकली ६
लख चौरासी	ना० १२४
कोटि	ना० ८३
कोटि	गो०बा०स० ५३
सहस्र	गो०बा०स० ६३
सहस	ना० १२१
अष्ठ कोटि	गो०बा०प्राण संकली ६
छयासी सहंस्र	गो०बा०स० १६६
दो योजन	ना० ७७

कबीर से पूर्व खड़ी बोली काव्य में प्राय: सभी पूर्णांक बोधक संख्या वाचक विशेषण संस्कृत के सम्बन्ध उन्हीं विशेषण रूपों के रूपान्तर प्रतीत होते हैं। अपभ्रंश की कतिपय ध्वनि सम्बन्धी प्रवृत्तियों के कारण हिन्दी के पूर्णांक संख्याओं के रूप बहुत पहले ही बन चुके थे, अन्तर केवल इतना ही प्रतीत होता है कि अपभ्रंश के संख्यावाचक रूपों में जहाँ संयुक्त व्यंजनों और उद्वृत्त स्वरों की प्रधानता है - वहाँ हिन्दी ने क्षतिपूरक दीर्घीकरण समीकरण स्वर संधि आदि नियमों के अनुसार उन्हें अपने उच्चारण के अनुकूल बना लिया है। अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि अपभ्रंश की परंपरा से लेकर ब्रजभाषा तथा आधुनिक हिन्दी तक चले आ रहे हैं।

क्रम संख्या वाचक विशेषण -

पहली	गो०बा०स० १६८
एकटी	गो०बा०स० १८७
पहले	ना० ६१
पहिल	ना० २०३
प्रथमें	गो०बा०प्राणसंकली १

दुसरै	गी०व्या०ख० २४३
दुन्यौ	गी०व्या०ख० २७६
दोउ	ना० १११
दुसरौ	गी०व्या०ख० १६४
द्वै	गी०व्या०प० १३
दुसर	ना० १२६
दौ	गी०व्या०पद २०
तीनै	ना० १६६
तीसरौ	गी०व्या०प० १६४
त्रितियै	गी०व्या०ख० २५८
तीन्यू	गी०व्या०पद ७
तिहुं	गी०व्या० प्रा०पांक्ती ३
तुहुं	गी०व्या०प्रा०पंक्ती १
तीन्यौ	गी०व्या०ख० २४७
तीन्यौं	गी०व्या०ख० २४६
चार्या	ना० ३१
चहुं	ना० १३१
चहुं	ना० १४५
च्यारुं	ना० १६८
चौथौ	गी०व्या०ख० १६४
चत्रथै	गी०व्या०ख० २५८
पांचू	ना० ३१
पंचौ	ना० १४७
पंचहु	ना० २०१
पंचमै	गी०व्या०ख० २५८

पाँचा	गौ०बा०प० २४५
आठूं	ना० ७६
नवैं	गौ०बा०पद १
दसवैं	गौ०बा०प० १३५
दसवैं	गौ०बा०पद० १
दसौ	गौ०बा०पद ४५
इकीसौं	गौ०बा०पद ३०
पचीसूं	ना० ६६
बतीसौ	गौ०बा०पद० ११
तैतीसूं	ना० १३७
छतीसौ	गौ०बा०प० १९७
इकोतरसै	गौ०बा०स० १६४

अपूर्ण संख्या वाचक

एक पाव	ना० १६३
तीन पाव	ना० १६३

अपूर्ण संख्या वाचक विशेषण कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में लगभग नहीं के बराबर हैं अपभ्रंश तथा व्रजभाषा में भी इन रूपों की प्रचुरता नहीं है तथा जो रूप पाये गये हैं तब से आज तक कुछ रूपान्तर के साथ उसी तरह प्रयुक्त हो रहे हैं ।

संख्या गुना बोधक —

दोनों	ना० १६३
दोनऊँ	ना० १६३

गुणाबोधक संख्या वाचक विशेषण कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में यदा कदा ही प्राप्त होते हैं । अपभ्रंश तथा ब्रजभाषा में भी यही स्थिति है किन्तु परम्परागत रूप से यह रूप प्राप्त अवश्य है ।

अनिश्चित संख्यावाचक :–

सकल	ना० १
नाना	ना० ८
अनंत	ना० १४
अनेक	ना० २६
बहु	ना० ३३
अनगन	ना० १८७
बहुरि	गो०बा०पद ५२
सबै	गो०बा०पद २
केता	गो०बा०स० २४८
सारी	गो०बा०प० १११
सर्व	गो०बा०स० १०२
सर्व	गो०बा०स ८०
सरब	गो०बा०प० ४४
सब	गो०बा०स० २४

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में उपर्युक्त अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण प्राप्त होते हैं । लेकिन अपभ्रंश तथा आरंभिक सूरपूर्व ब्रजभाषा में इन विशेषणों का कहीं भी उल्लेख नहीं है ।

—

अध्याय — ८

क्रिया संरचना

साधारण काल — मूल काल

क्रिया

जिस विकारी शब्द के प्रयोग से हम किसी वस्तु के विषय में कुछ विधान करते हैं उसे क्रिया कहते हैं । साथ ही जिस मूल शब्द में विकार होने से क्रिया बनती है उसे धातु कहते हैं।

हिन्दी की सभी क्रियायें अधिकांशत: तद्भव हैं । जो क्रियायें तत्सम प्रतीत भी होती है वे वस्तुत: किसी न किसी तद्भव क्रिया की सहायता से ही क्रिया का कार्य करने में समर्थ होती है । तद्भव होने के कारण ही हिन्दी की क्रियायों को संस्कृत की संपूर्ण संपदा प्राकृत तथा अपभ्रंश के माध्यम से, इनमें भी विशेषत: अपभ्रंश के ही माध्यम से । संस्कृत से प्राकृत तक क्रियायों का रूप लगभग एक ही रहा । प्राकृत के बाद अपभ्रंश से क्रियायों का एक नयारूप दृष्टिगोचर होता है । हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के रूप व्यवस्थित हो गये । काल-रचना प्राय: कृदन्त तथा कृदन्त और सहायक क्रियायों के तिङन्त तद्भव रूपों के संयोग से होने लगी , संयुक्तकाल तथा संयुक्त क्रियायों की संख्या बढ़ गई ।

तात्पर्य यह है कि अपभ्रंशकालीन साहित्य से क्रियायों की रूप रचना में एक नया अध्याय शुरू हो गया था । कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में भी क्रियायों की रूपरचना इस दृष्टिकोण से उतनी जटिल न होकर सरल हो गई।आरंभिक सूरपूर्व ब्रजभाषा में भी यही स्थिति पाई जाती है ।

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में भूतकाल या साधारणकाल की रचना दो प्रकार से होती है —

१. प्राचीन तिङन्त रूपों से विकसित तिङन्त तद्भव रूप

२. प्राचीन कृदन्तों से विकसित कृदन्त तद्भव रूप

सभी क्रिया रूपों में काल ,अर्थ,अवस्था ,पुरुष ,लिंग,वचन,वाच्य एवं प्रयोग सम्बन्धी विकार होते हैं ।

१. वर्तमान निश्चयार्थ —

उत्तम पुरुष - एकवचन —

+अउ पावउ - भगवत तै डर पावउ ना० २०१

+ लेअऊ इउ तउ एक रमईयार लै आऊ ना० २०७

+ई दिखाई-हइ पतिआ मुँह दिखाई ना० २१८

थापी - ताथै हम उलटी थापना थापी - गौ०बा०स० १४४

बाची - सो पत्री हम बाची गौ०बा०स० २६४

+औं जानौं - आन न जानौं दैव न देवा - ना० १२६

करौं - लाका मैं न करौं दरसना ना० १२५

जपौं - अजपा जपौं अपूज्या पूजौं - ना० १६४

+ऊं जाऊं - चंवर दुलै बलि जाऊं तुम्हारी - ना० १४५

गाऊं - मैं गाऊं गुन राग रसैला - ना० १५६

जाऊं - हौ बलि-बलि जाऊं ना० १२

पाऊं - मन के नपाये परमपद पाऊं - ना० १३७

+ऐ देखै - चहुंदिसि देखै ना० १४५

धावै - चहुं दिसि धावै - ना० १४५

रीझै - सांई मेरौ रीझै सांचि - ना० २६

+इआ - जानिआ - फरीदा मैं जानिआ दुख मुझको - श्लोक ८२

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में 'अउ' तथा ऊं प्रत्यय बहुतायत से पाये जाते हैं अत: इन्हें हम पदग्राम की संज्ञा दे सकते हैं। इसके अतिरिक्त ऐ, इआ, औं एवं ई प्रत्यय भी मिलते हैं। ये सहपदग्राम के रूप हैं। अपभ्रंशकालीन साहित्य में इ तथा उं प्रत्यय मिलते हैं। आरंभिक ब्रजभाषा में उ, औं, उं आदि विभक्तियां

विकसित हो गई थीं ।

उत्तम पुरुष बहुवचन

+ए - दोहे हम तो दोहे - ना० २२८
+ऐं ज जावैं यहाँ जावैं - गो० बा० पद १६

ब कबीर के पूर्व खड़ी बोलीकाव्य में बहुवचन के बहुत ही कम उदाहरण हैं । अपभ्रंशकालीन साहित्य में ऐ प्रत्यय नहीं मिलता है पर बहुवचन के कुछ रूप अवश्य मिलते हैं । आरंभिक ब्रजभाषा में बहुवचन में ऐं प्रत्यय प्राप्त होता है ।

वर्तमान निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष एक वचन (स्त्रीलिंग)

+ई - जाणी - एक आषीरी हम गुरमुषि जाणी - गो०बा० पद १३
विचारी - जब हम हिरदै प्रीति विचारी - ना० ११
+ऊँ मरौऊँ - तपि तपि लुहिर हाय मरौऊँ - फ०राग सूही ?

मबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में उत्तम पुरुष एक वचन में कुछ स्त्रीलिंग क्रियाये प्राप्त होती हैं । इसमें 'ई' प्रत्यय पदग्राम तथा उं सहपदग्राम के रूप में प्रयुक्त हुआ है ।

मध्यम पुरुष : एकवचन

+ऐ- जानै तेरी तेरी गती तू ही जानै ना० १४६
राषै - मोहि ताई तोहि को राषै ना० ११८

+ओ छोडावो - जो तुम छोडावो गोपाल जी - ना० ५२

+ओं तिरौं - नाई तिरौं तेरै नाई तिरो - ना० ११६

+अहु	करहु - तुम्हैं करहु कौंन की सेवा - गो०बा०पद ३८
+ऐंहि	ढूंढैहि- जंगल क्या ढूंढैहि - फ० श्लोक २२
	मोहैहि - वणाकंडा मोहैहि फ०श्लोक २२
+महि	भवहि- फरीदा जंगल जंगल क्या भवहि फ०श्लोक २२

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में मध्यमपुरुष में एकवचन के ही रूप प्राप्त होते हैं। बहुवचन का कोई रूप नहीं मिलता है। पदग्राम के रूप में ऐ प्रत्यय तथा सहपदग्राम के रूप में,औ, औं, ,अहु, ऐंहि तथा अहि रूप मिलते हैं। अपभ्रंशकालीन साहित्य के मध्यम पुरुष में अहि प्रत्यय मिलता है। लेकिन आरंभिक सूरपूर्व व्रजभाषा में "अइ" "संध्यक्षर" "ऐ" में बदल जाता है।इस प्रकार "ऐ" प्रत्यय प्राप्त होता है।

अन्य पुरुष : एक वचन

+ए	कहै - नामदेव कहै बालक तोरा	ना० १४६
	चीन्है-सहजि समाधि न चीन्हैं मुगधा	ना० ७६
	बोलै - बोलै शेख फरीद	घ०आसामहला ६
+ऐ	कहै - नामदेव कहै सुरही परहरियै	ना० २३
	भाहै - उपिक में बग ध्यान माहै	ना० २३
	पाई- राम संग नामदेव जिनउ प्रतीति पाई - ना० २८	
+आइ	विठाई - मुझे पंढरीराम विठाई	ना० १४६
+आई	फिरई - काहे रे मन भूला फिरई - ना० ७८	
+यौ	ग्रास्यौ- गगन मछली बगलौं ग्रास्यौ - गो०बा० पद ६०	
	बिटाल्यौ - पहले नीर जू मच्छ बिटाल्यौ - ना० ६१	
	बास्यौ - कोमल मोरी आंबौ बास्यौ - गो०बा०पद ६०	
+अहि	भजहि - छोडि : राम की न भजहि खुदाई ना० २१८	
+अही	करही - कोटि उपाय जु करही रे नर	ना० ६२

फलदी - आँब बबूल न फलदी रे नर   धा० ६२

+अहि आवहि जाँहि संवारे आवहिं आप   ना० १२४

+असि उधरसि - जासि न उधरसि श्री गोविंद ना० २१२
करसि - पंडित ग्यानी न करसि गरब - गो०बा०स० २१६
परसि- जोगिया जिनि परसि दामा- ना० १०६

+इया मिलिया - सीस नवावत सतगुरु मिलिया - गो०बा०स० २२२

+य - षाय - ता लोगी हूँ काल न षाय- गो०बा०स० २२०
+दा करदा- जिसु अल्लाह करदा सार   फ०श्लोक ११०
+आ मिल्या-संत पन टल्या अंदेसा   गो०बा० पद ५३
+ला लहैला - कोई जोगी या गम लहैला - ६५

पदग्राम के रूप में ऐ प्रत्यय है तथा सहज पदग्राम के रूप में ए, आई, अई, यों आहि, अदी, असि, इया, य, दा, आ आदि प्रत्यय प्राप्त होते हैं। अपभ्रंश कालीन साहित्य में अई प्रत्यय मिलता है। आरंभिक ब्रजभाषा में अपभ्रंश का पदान्त आई कहीं कहीं सुरक्षित है लेकिन अधिकांशत: ए तथा ऐ प्रत्यय मिलते हैं।

अन्य पुरुष ; बहुवचन -

+ऐं बसै-भाजे लोगु बसै   धा० २२०
छाडि-तैसे संत जन राम नामु न छाडे = ना० २२०
समावैं - अठसठि तीरथ समंदि समावैं - गो०बा०स० १३

+ऐ बहै गंग जमुन उलटी बहै - ना० २१८   पदग्राम है
करै पांचों इंद्री निग्रह करै   गो०बा०स० १८
साधै चारि कला साधै   गो०बा०स० ८१

+आ हूवा ता कारणि अनंत सिधां जोगेश्वर हूवा- गो०बा०स० ३

+उ	चुगनु - कंकरु चुगनु-	फ० श्लोक १०२
+एँ	त्यागेँ - कनक कामनी त्यागेँ दोहँ	गो०बा०स० १०२
	मानी - ब्रह्म विष्णु महादेव मानी	गो०बा०स० १४
+ईं	जाईं - इकोतरसैं पुरिषा नरकहि जाईं	गो०बा०स० १०५
	समझाईं - औरन कूं समझाइ	ना० १४२
+इया	गहिया - मन पवन चंचल निज गहिया	गो०बा०स० १८६
	पाइया - विरलै कोई पाइया जिन्हैं पियारे नेह - फ०श्लोक ८४	
	सहदिया - कमल रेख न सहदिया	फ०श्लोक १७
+अनि	वसनि- कंवरु चुगन पालि वसनि	फ०श्लोक १०२
+ऐनि	जालैनि - सबद अंदर साबरी तन एवैं जालैनि	फ० श्लोक ११८
	दैनि - भेदनकिसु दैनि	फ० श्लोक ११६
+ अहु	उतरहु- इन विधि संतहु उतरहु पारि	ना० २१७
+अहि	करहि-काजी मुलां करहि सलामु	ना० २१८
	चाहहि - साधिक सिद्ध सकल मुनि चाहहि	ना० २०२
+अहिं	मिलहिं - रतन न मिलहिं उधारे रे नर	ना० ६२
+दा	जानदा - महिला लोग न जानदा	फ० श्लोक ६६

बहुवचन के रूपों में 'एँ' पदग्राम है । सहपदग्राम के रूप में दा, अहिं, अहु, ऐनि इया, ईं, एं, उ तथा आ प्रत्यय मिलते हैं । अपभ्रंशकालीन साहित्य में अन्य पुरुष बहुवचन में अहिं प्रत्यय मिलता है जो कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कहीं कहीं सुरक्षित है । आरंभिक ब्रजभाषा में भी अपभ्रंश की यह विभक्ति सुरक्षित तो है पर अधिकांश रूप में हिं, एं, ऐं तथा है प्रत्यय प्राप्त होते हैं ।

वर्तमान निश्चयार्थ

स्त्रीलिंग क्रियायें : अन्य पुरुष एक वचन

+ऐ	करै	- श्रद्धा करै हूँ बिगूती (करी)	गौ०बा०स० १०१
	करै	- ताकी सेवा पारबती करै	गौ०बा०स० १६
	व्यापै	- व्यापै न्यद्रा जयै काल	गौ०बा०स० ३६
	वहै	- तूटी डोरी रस कस वहै	गौ०बा०पद ४६
+आ	आया	- आदि क्रिपालु आया	गौ०बा०पद ४६
+इसी	लगाइसी	- जब तब कलंक लगाइसी काली डांहि डाधि	गौ०बा०स० २५०

अन्य पुरुष एक वचन स्त्रीलिंग क्रियायें काफी मात्रा में प्राप्त हुई हैं "ऐ" प्रत्यय पदग्राम के रूप में तथा ई, आ, तथा इसी प्रत्यय सहपदग्राम के रूप में प्रयुक्त हुआ है ।

अन्य पुरुष बहुवचन

+ऐं	दीसैं	- काली गंगा धौली गंगा झिलिमिली दीसैं	गौ०बा०पद ४०
+ईं	लाईं	- और दुनी सब धंधै लाईं	गौ०बा०स० ६

अन्य पुरुष बहुवचन में थोड़ी सी ही क्रियायें प्राप्त हुई हैं । ऐं पदग्राम तथा ईं सहपदग्राम प्रत्यय हैं ।

२. वर्तमान संभावनार्थ

उत्तम पुरुष : एक वचन

संभावनार्थ क्रिया से अनुमान इच्छा, कर्तव्य आदि का बोध होता है । वर्तमान संभावनार्थ रूप, प्राचीन तिङन्त रूपों के तद्भव रूप हैं अतः इनमें लिंग संबंधी परिवर्तन नहीं होता है । अर्थ तथा प्रयोग में भिन्नता होने पर भी रूप रचना की दृष्टि से वर्तमान

निश्चयार्थ तथा वर्तमान संभावनार्थ में कोई विशेष अंतर नहीं है। प्रयोगावृत्ति की दृष्टि से वर्तमान संभावनार्थ क्रियारूपों की संख्या बहुत कम है।

+आं- जाणां- परीदाजाणां तिल भोडें सम्भलबुझ भरी -फ०श्लोक ७
जांणां जै जांणां लड़ पिंजना पीडी पाक गहि-फ०श्लोक ८

+औ मोड़ौ- मोड़ौं तौ मूल बिनासा ना० १०६
बिसारौं - जौ रे बिसारौं ना० ३७

+ ऊं बिसारूं - जौटै बिसारू तौ सब हाऊं ना० ३७
जाउं - स्वामी बन बंहि जाउं तौ क्षुध्या व्यापै-गो०बा०स०३०
जाउं नग्री जाऊं त माया -गो०बा०स० ३०
जाउं आउं तौ बीठल जाउं तौ बीठल- ना० ६१

+औं करौं - जैसी करौं तौ मेह बिन बूकें - गो०बा० पद ८
बेलौं - छुवटे बैलौं तौ बैठजे हरौं गो०बा०पद ८

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में उत्तम पुरुष एक वचन वर्तमान संभावनार्थ में विभिन्न प्रत्यय प्राप्त हुए हैं। "उं" प्रत्यय अधिकता से मिलता है। अत: इसे हम पदग्राम प्रत्यय कह सकते हैं। सह पदग्राम प्रत्यय के रूप में औ, औं, आं प्रत्यय मिलते हैं।

मध्यम पुरुष : एक वचन

+ऐ- बोलै - जौ बोलै तौ रामहि बोलि - ना० ११६

मध्यम पुरुष एकवचन ,वर्तमान संभावनार्थ में केवल एक क्रिया रूप प्राप्त हुआ है।

अन्य पुरुष : एक वचन

+इ देहि जे राघु देहि त बचन बढ़ाई - ना० १५२

+अहि मंगावहि- जै भीख मंगावहि त किश्रा घटि जाई - ना० १५।२
उतरै - जइ गुरदेव त उतरै पारि ना० २१६

+ऐ पड़ै - कंठ पड़ै तौ सतगुर लाजै गौ०बा०स० ३२
बिसरै - जोगी च्यंता बीसरै तौ होई अत्यंतलिलीन ,गौ०२७१
फिरै - मन मानै तौ संगि फिरै- गौ०बा०स० ३०
बियापै - भरि भरि षाउ तौ व्यंद बियापै - गौ०बा०स० ३०

+औ पूरौ जै आसन पूरौ तौ सहज का भरौ पियाला- ,, ४

+आई पतिआई - कहौ तौ को पतिआई- गौ०बा०स० २४
जाई- ममता जाई तौ साध संगत मैं रह्या समाई जा० ११७

अन्य पुरुष में 'ए' प्रत्यय बहुतायत से प्राप्त हुआ है अत: इसे हम पद ग्राम कह सकते हैं। सहपदग्राम के रूप में ऽ अहि औ तथा आई प्रत्यय हैं।

बहुवचन —

+ऐं आवैं चारिकला रवि की लै ससि धरि आवैं गौ०बा०पद १२
पुरवै गौशति लख विप्रहं दीजै, मन बांछित सुख पुरवै कामा ना० १७

पदग्राम प्रत्यय ऐं तथा सहपदग्राम ऐ है।

वर्तमान आज्ञार्थ

मध्यम पुरुष : एक वचन

आज्ञार्थ क्रिया से आज्ञा उपदेश एवं निषेध आदि का बोध होता है। वर्तमान आज्ञार्थ के रूप भी प्राचीन तिङन्त रूपों से विकसित हुए हैं। अतएव लिंग सम्बन्धी परिवर्तन संभव नहीं है।

मध्यम पुरुष एक वचन

+इ गुजारि सुबह निवासि गुजारि फ० श्लोक ७२

सुमरि ताहि सुमरि गंवार ना० १६६

+ए मारे तिना न मारे धुम्म फ० श्लोक १०

+औ छांडौ अब जिनि छांडौ मांहि ना० १४१

+इलै भेटिलै नादि समाइली रे सतगुर भेटिले वैधा ना० २००

+लै करले ज्या करना सो आजि करले ना० १६२

+लै भजिलै तातै भजिले राम पिआर ना० १६६

+इयै गाइयै इन संगि गोविंद गाइयै ना० १४३

धरीयै हरी कौ व्रत धरीयै ना० १४३

+इला आराधीला- कोई गुरु आराधीला जो व्रज गांठि छोडै - गो०बा०पद ५४

+हु सुनहु नाथ कहै तुम सुनहु रे अवधू गो०बा०स० २१

+औ चाल्यौ चाल्यौ पांचौं बाइला गो०बा० पद ८

आओ आओ देवी बैसो गो०बा०स० ५३

देखो देखो वंदा चल्लिआं फ० श्लोक १०१

+इ छाडि छाडि मनौर झूठी आसा- ना० ७८

+० जा एक बीठला सरनै जारे ना० २२४

+रवा पलटिवा घटै अमासे काया पलटिवा गो०बा०स० ३३

+आं करनां - एसा परिषि गुरु करनां गो०बा० पद २२

+उ लिखु तू काले लिखु न लेखु फ०श्लोक ६

+ऊ करऊ रे जिह्वा करऊ सत खंड - ना० २१२

वर्तमान आज्ञार्थ के रूप कभी भी शुद्ध रूप में नहीं प्राप्त होते हैं। इनकी रचना अंशतः प्राचीन विधि, अंशतः प्राचीन आज्ञार्थ और अन्ततः प्राचीन निश्चयार्थ से होती है। उत्तम पुरुष के रूपों में यह कथन और भी लागू होता क्योंकि शुद्ध उत्तम पुरुष के आज्ञार्थक रूप एकदम नहीं मिलते हैं।

अतः कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में औ प्रत्यय पदग्राम के रूप में प्रयुक्त हुआ है। सहपदग्राम के रूप में इ, ए, औ, लै, ले, इलै, उ, इये, इवा, इवा, ओं, उ, ऊ प्रत्यय हैं अपभ्रंश कालीन साहित्य में क्रमशः इ, उ और ए प्रत्यय प्राप्त होते हैं। आरंभिक सूरपूर्व ब्रजभाषा में इ, औ, उ, उ प्रत्यय मिलते हैं। यह सभी कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में सुरक्षित हैं। आधुनिक हिन्दी में औ वाले रूप मिलते हैं।

वर्तमान आज्ञार्थ

मध्यम पुरुष : बहुवचन

अभाव है।

अन्य पुरुष : एक बचन

+अहु सुनहु नामा कहै सुनहु बादिशाह - ना० २१८
+इये तिरिये गोरख कहै पूता संयमि ही तिरिये गो०बा०प० १४५

+ चीन्हइ- आपा परचै गुर मुषि चीन्ह गो०बा०स० ३८
+अ० उठ- उठ फरीदा वुजु साज- फ० श्लोक ७२
+इ सुणि- गोरष कहै सुणि रे अवधू - गो०बा०स० ८३
सांभलि- सांभलि राजा बोल्या रे अवधू गो०बा०स० ५७
+औ सुणौं गोरख कहै सुणौं रे अवधू गो०बा०स० ७४

+औ मोडौ, तोडौ अवधू आहार तोडौ निद्रा मोडौ - गो०बा०स० ३३
+इवा - लुकाइवा नासिका अग्रे पवन लुकाइवा- गो०बा०स० ७५
+औ - आऔ - आऔ देवी बैसो गो०बा०स० १५५
+ऊं सुनूं भनत नामदेव सुनूं वो तिलोचन- ना० ७५
+इलै आनिलै - आनिलै कागद साजिलै जुडी - ना० १६

भराइलै- भराइलै उधिक नाo १६

पदग्राम के रूप में औ, प्रत्यय है । सहपदग्राम के रूप में अकु, इयैं, शुन्य, इ, इवा, ऊँ तथा इलैं प्रत्यय हैं । आरंभिक सूरपूर्व व्रजभाषा में औ प्रत्यय मिलता है । आधुनिक हिन्दी में औ प्रत्यय मिलता है, जो कबीर के पूर्व खड़ी बोली काल में भी प्राप्य है ।

बहुवचन

कीन्हौ तैराइ कीन्हौं औकासी भुलां गो०बा०स० १४

+औ सुणा- भणत गोरखनाथ सुणौं नर लोई गो०बा०पद ४४

+इलै षणिलै - सोलह कलिलै बाई- गो०बा०पद २७

+औ सुणौ - सुणौं नर लोई - गो०बा० पद २३

पदग्राम के रूप में औ तथा सहपदग्राम के रूप में इलै और औ प्रत्यय है ।

भूतकाल

भूतनिश्चयार्थ --

भूत निश्चयार्थ प्राचीन संस्कृत कृदन्तीय रूपों से विकसित तद्भव रूप हैं । अतएव प्राचीन संस्कृत कृदन्तों की भाँति इनमें भी कारक के लिंग परिवर्तन से क्रिया का लिंग परिवर्तन हो जाता है । साधारणकाल रचना में भूत निश्चयार्थ के रूप भाषा के स्वरूप निर्धारण के लिए महत्वपूर्ण अंग हैं । सामान्यतया मानक हिन्दी (Standard Hindi) खड़ीबोली का एक वचन भूत निश्चयार्थ आकारान्त, व्रज, राजस्थानी , बुन्देली, कन्नौजी, मालवी, आदि का औकारान्त, अवधी का "वा" या वाकारान्त इवू रुउ तथा भोजपुरी का इलू या लकारान्त होता है । कबीर के

पूर्व खड़ीबोली काव्य का भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण करने पर हम देखते हैं कि रूप तो सभी प्राप्त होते हैं किन्तु भूत निश्चयार्थमें आकारान्त रूपों की बहुलता है। अत: हम उस साहित्य में भी आधुनिक खड़ीबोली के कुछ रूपों को बीज स्वरूप देखते हैं।

१, भूत निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष - एकवचन

+इआ देखिआ ऊंचे चढ़ के देखिआ तो घर घर एही अगु - फ०श्लोक ८२
फिरा- गुनहि भरिआ मैं फिरा - फ०श्लोक ५२

+आ कीआ - ता मैं कीआ संग फ० श्लोक १२२
जाना- हम जाना ना० ११

+ए बैठे जिस आसन हम बैठे फ०आस मक्ला १०

+० प्रत्यय दिठ तिन लोइन मैं दिठ - फ०श्लोक ८

+इयौ मैं तोसों चित लाइयौ ना० १४१
+औ पायौ- पायौ मैं राम संजीवनी भूरी ना० १६८
कह्यौ - तिनके अंगि कह्यौ मैं रामा - ना० १७
+औ बताऔ- पंढरीनाथ बिठाई बतावौ मुझे - ना० १८६

+अइयौ समझाइयौ - कहे सुने की कछु न आने अनेक बार समझाइयौ. - ना०१७५
+ला जगेला - आम्हें जगेला प्राल्देस - ना० १६५
+ई पाई- अम्हैं सब सिधि पाई गो०बा०पद २३
खोई- जीवन खोई-पाछे पछताणी- फ० रागसूही १।२
+० दिठ से लोइन मैं दिठ फ० श्लोक १७

रूपों की विभिन्नता के बीच में भी पदग्राम के रूप में आ तथा औ प्रत्यय मिलते हैं। सहपदग्राम के रूप में इआ, ए, इयौ, औ, ला, ईं तथा अइयाँ प्रत्यय प्राप्त होते हैं। अतः खड़ीबोली की भाँति कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में आकारांत रूपों की ही प्रमुखता है।

उत्तम पुरुष बहुवचन

+इया उतरिया लाल बोलंती अम्हें पारि उतारिया गो०बा०स० १०४

इसमें केवल एक ही रूप प्राप्त हुआ है।

स्त्रीलिंग क्रिया

उत्तम पुरुष : एक वचन

+ईं जाणीं मैं सार न जाणी फ०रागसूही १।३
पछताणी - जीवणा होईं पाथे पछताणी - फ० राग सूही १।३
भरीं - थोड़े सम्भल बुक भरीं फ० श्लोक ७
करीं थोड़ा माखु करीं फ० श्लोक ७

+ई थापी हम उलटी आपना थापी गो०बा०स० १४४
+ईं होईं - जीवन होईं पाछे पछताणी फ० रागसूही १।३
पाईं - अम्है सब सिधि पाईं गो०बा०पद २३

स्त्रीलिंग उत्तम पुरुष एकवचन में ईं प्रत्यय प्राप्त होता है। ईकारान्त स्त्रीलिंग के रूप अपभ्रंशकालीन साहित्य में शुरू से ही प्रचलित थे। आरंभिक ब्रज-भाषा में भी इसमें ईं प्रत्यय ही मिलता है।

मध्यम पुरुष : एक वचन

+इ ढाहि- कँधी बहन न ढाहि फ० श्लोक ८५
+औ हुवौ ये दो नैना मतु हुवौ फिर देखन की आस - फ०श्लोक १२

+इंया-फिरीया   सहर मिलहर रावै तुम फिरीया - ना० ६६
        घडीया   तू किनहूं नहीं घडीया   गो०बा०पद ५८

+आं - देख्यां- त् देख्यां उजियारा   गो०बा०स० ५८
+औं - जन्यौं - जिन्नी तू जन्यौ - फ० श्लोक ७४
+यौ - पतायियौ - तू अजी न पतायियौ - फ० श्लोक ७४

रूपों की विभिन्नता के बीच हम देखते हैं कि इंया प्रत्यय पदग्राम है। सहपदग्राम के रूप में इ, औ, आं औं तथा इयौ प्रत्यय हैं। आरंभिक सूरपूर्व ब्रज-भाषा में इयौ, यौ, इउ तथा यौ और औ प्रत्यय मिलते हैं।

मध्यम पुरुष : बहुवचन

रूप का अभाव है

अन्य पुरुष एकवचन

+इया   मोहिया   फरीदा जिन लोइन जग मोहिया फ०श्लोक १७
+ओई   समोई   उलट्या पवना गगन समोई गो०बा०स० ८८
+इआ   समानिआ   जनु नामा सहज समानिआ   ना० २००
        भरिआ   जिंउ आकासे धडूअलो मृग तृष्णा भरिआ जा० १६६
+औ   गयौ   पतित अजामेल तारलौं गयौ ना० १६६
        आयौ - नामदेव उठि जब बाहर आयौ - ना० १६८
+हीं   कीन्हीं   सुरती कीन्हीं सारि ना० १६६
        चीन्हीं   पर आत्म आत्मा नहीं चीन्हीं - ना० १६३
+ला   कैला   तहाँ माँझी दूध कैला   ना० १६५
        तबीला   माया तबीला तृष्णां तबीला   गो०बा०पद ४६

+इउ | धिआइउ | धनि ते वै मुनि जन जिआइउ हरि प्रभु मेरा- ना०१५५
 | थापिउ | ध्रु थापिउ हौ -ना० १५३
 | आपिउ | भभीषण आयिउ हौ ना० १५३

+हा | कीन्हा | अठार भार का मुंदगर कीन्हा ना० ६४

+या | मार्या | मृष्यां चीता मार्या ही गौ०बा०स० ५७
+मि | भविअमि | फरीदा इन्नी निकी पंह्नि थलमुगर भविअमि
 | | फ०श्लोक २३
 | थीअमि- अज फरीदा कूजड़ा से कीउँ थीअमि - फ०श्लोक २३
+इआं | मालिआं | फरीदा कोठे मंडप माणिआं - फ०श्लोक ४८
+योहि | विसरयोहि- ला रब न विसर्योहि - फ० श्लोक १०७
+न्ह | लीन्ह | ग्यान रतन उरि लीन्ह पराणां गौ०बा० पद ५
+हौ | कीन्हौ | पायौ जिष कीन्हौ विस्तार ना० २७
+ए | आये | जाकारन त्रिभुवन फिर आये ना० २६

इआ, तथा या प्रत्यय पदग्राम हैं। सहपदग्राम के रूप में इया, आेइ औन्ही, ला, इउ, न्हा, या, मि, इआं, योहि,न्ह, हौ, तथा ए प्रत्यय हैं। आरंभिक ब्रजभाषा में ऊकारान्त, ओकारान्त तथा औकारान्त रूप प्राप्त होते हैं।

अन्य पुरुष : बहुवचन

+इआं | विसरियां | विसरियां जिन नाम- फ० आसा महला १
 | रतियां | अल्लासेती रतियां फ०श्लोक १०८

+इया | गडिया | केते वैसि गडिया फ०आसा महला १०

+आ | लगाया - | काजी मुलां कुरांण लगाया- गौ०बा०स० ६६
 | मुड़ाया | पंच तत सिधां मुड़ाया गौ०बा०स० ७७
 | आया | उतिम लोग देखे आया ना० १६८

+उ	लैउ	संतौ लैउ विचारी नाo १३८
+न्हा	कीन्हाँ	तास कुलव प्रगाहे कीन्हाँ नाo ६४
	कीन्हाँ	लोहा तांबा बंधन कीन्हाँ नाo ६८
+ला	लबीला	लबीला कुटुंब बंधु - गौoबाo पद ४६
+इया	कंपिआ	फरीदा रितु फिरी विण कंपिआ-फoश्लोक१०३
	ढूंढिआ	नारे कुंग ढूंढिआ फo श्लोक १०३
+ पाडि	भड़पाडि	पते फड़े भड़पाडि फoश्लोक १०३
+ ए	बैठे	अनेक राविंद बैठे - नाo ७१

आ तथा इयाँ प्रत्यय पदग्राम हैं। सहपदग्राम के रूप में इया, उ, न्हाँ, ला, पाडि, इआ तथा ए प्रत्यय हैं। आरंभिक ब्रजभाषा में बहुवचन के रूप प्राय: एकारान्त तथा ऐकारान्त हैं।

भूतनिश्चयार्थ

स्त्रीलिंग क्रिया - अन्य पुरुष : एक वचन	बहुवचन
+ई खोई - सबै कमाई खोई - गौoबाoपद २	बहई-नदी अठारह गंडिक बहई- गौoबाoप्राoसं ६
+ई - भेंटी - इला प्यंगुला जोगण भेंटी - गौoबाoपद१६	
रूपाणी - सतगुर वैलि रूपाणी - गौoबाoपद १७	ईं कीन्हीं -
आणी - नीकैं बालि धरि आणीं - ,,	सब बसुधा बस कीन्हीं नाo ११८
+ए - थाये - नित नवेलडी थाये - गौoबाoपद १७	

+इली	मारिली	माया मारिली गौ०बा० पद ४६
+आ	निघाया	बाधनी उपाया बाधनी निघाया-गौ०बा०पद ४८
	दिखाया-	जिन जननि संसार दिखाया - गौ०बा० पद ४६

भूत निश्चयार्थ स्त्रीलिंग क्रिया में एक वचन के अन्तर्गत ई प्रत्यय पद-ग्राम है। सहपदग्राम के रूप में र, इली तथा आ प्रत्यय है। बहुवचन में ई तथा ही प्रत्यय मिलते हैं। ईकारान्त स्त्रीलिंग क्रियायें अपभ्रंशकालीन साहित्य से ही मिलने लगती हैं। ब्रजभाषा की विशेषता न्ही प्रत्यय इसमें दृष्टिगोचर होती है।

भूतकाल संभावनार्थ

भूतसंभावनार्थ के रूप रूपात्मक दृष्टिकोण से वर्तमान कालिक कृदन्त के ही रूप हैं। वाक्यात्मक स्तर पर यही रूप भूत संभावनार्थ का अर्थ प्रकट करते हैं।

मध्यमपुरुष एकवचन

+इ	बौलि-	जौ बौलै तौ रामहिं बौलि ना० १०५
+इये	बौलिये	लै बौलिये तौ कहिये राम - ना० १०६
+इया	विसारिया-जै तैं रब विसारिया ता रब न विसर्यौ हि - ध०श्लोक १२८	
+ईला	चीन्हीला- आपा पर नहीं चीन्हीला तौ चित चितारे उडकीला	ना० २०
+औ -	आडै	तौ तन आडै ना० ४६
	छांडौ	तौ भगति न छांडौ ना० ४४

अन्य पुरुष एकवचन

	तिरिये - तौ भौ तिरियै पारै	गौ०बा०स० पद ६
+इये	मरियै	तौ बिन ही खूंटी मरियै - गौ०बा०स० ७४
+ए	जाये	लाख तौला मौल जाये जौ एक षिलै विंध - गौ०पद५

वैधिला जब हीरै हीरा वैधिला तौ काया कैंजे पाईं -
गौ०बा० पद ५४

+इला त्यागिला नहीं श्रापिला तौ प्राण त्यागिला - ना० ६६

+इया देन्दियां - मही देन्दिया नित - जो सैतानी बन्धाया संचित फिरे पीत- फ० श्लोक १८

+श्रा तौल्या तन तौल्या तौ क्या भया - ना०साखी १२

उत्तमपुरुष एकवचन

+इश्रा-दैखिश्रा ऊंचे चढ़ के दैखिश्रा तौ घर घर र ही श्रु - फ०श्लोक ८२

+श्रा - जाश्रा - जै जाश्रा बाग बापुड़ा जनम नै मेंही श्रं - फ० श्लोक १२२

+ऊं - गाऊं - नाथ निरंजन श्रारती गाऊं, गुरदयाल श्राग्या जौ पाऊं -
गौ०बा० पद ६१

+श्रौ- मिलियौ - जौ मिलियौ चाहै मौंहि ना० साखी ५

भविष्य निश्चयार्थ -

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में भविष्य निश्चयार्थ बोधक रूपों की रचना दो प्रकार से हुई है -

१. भविष्य काल सूचक प्राचीन संस्कृत तिङ्न्त रूपों के तद्भव रूप - 'हा' - 'स' विभक्त्यंत रूप

२. मूल धातु या प्रातिपदिक में -'ग' (गत: 'ग 'का अवशेषांश) को भविष्यसूचक विभक्ति के समान जोड़कर कृदन्तीय रूपों में अथवा धातु या प्रातिपदिक में +ब् (तव्यम्) का अवशेषांश ब् जोड़कर अन्य रूपों से।

कुछ उदाहरण 'न्ह' -'है ' प्रत्यांत के ही मिलते हैं।

भविष्य निश्चयार्थ :-

उत्तम पुरुष : एक वचन

+गा	सताऊँगा	ताकूं मैं न सताऊँगा	ना० ६६
	लगाऊँगा	सहजि समाधि लगाऊँगा -	ना० ६६
+इहूं -	करिहूं	अपना राम की करिहूं सेवा	ना० १७३
	करिहूं	त्रिवेणी उथम मंथन करिहूं	ना० १६४
+ऐहौं	पैहौं	पुनि मैं पैहौं पंचौ लोग	ना० १४७
+वा	बतउवा	पंच जना सूं बात बतउवा -	ना० १६

कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में पदग्राम के रूप में गा प्रत्यय तथा सहपदग्राम के रूप में इहूं, ऐहौं तथा वा प्रत्यय प्राप्त होते हैं। अपभ्रंश कालीन साहित्य में स तथा ह वाले रूप मिलते हैं जिनमें से केवल ह वाले रूप ही कबीर के पूर्व खड़ीबोली साहित्य में प्राप्त होते हैं। आरंभिक ब्रजभाषा में भी केवल 'ह' प्रकार के अथवा इ अन्त वाले ही रूप मिलते हैं। 'ग' वाले रूपों का प्रचलन नहीं था।

उत्तम पुरुष बहुवचन

अभाव है।

मध्यमपुरुष एक वचन

+सी	जासी	जल जासी दौला	फ०रागसूब २।१
	जासी	तू जासी कौनें बाटी	गो०बा० पद २४
+गौ	जाइगौ	कहां जाइगौ पूता -	गो०बा०स० ११
+गा	पसतायेगा	फिर पसतायेगा दगा पायेगा	ना० १६२

+ऐगी	परैगी	जन जन के तूं पाइ परैगी	ना० १७८
	फिरैगी	ऐसैं तू कई बार फिरैगी	ना० १७८
+इगी	देइगी	कहा उतर देइगी	ना० १६६
+स्यौ	लैस्यौ	तुम्हैं बाल हत्या फल लैस्यौ रे - गो०बा०स० ५५	

मध्यम पुरुष एक वचन में पदग्राम के रूप में 'गो' प्रत्यय प्राप्त होता है । सउपदग्राम के रूप में सी, गा, स्यौ आदि प्रत्यय मिलते हैं । अपभ्रंशकालीन साहित्य के 'स' प्रत्यय वाले रूप इसमें दृष्टिगोचर होते हैं ।

मध्यमपुरुष बहुवचन

अभाव है ।

अन्य पुरुष एक वचन

+सी लै जासी मरण वर लै जासी वरवाहि - फ० रागसूही २।१

राखसी अचिंत मन राखसी - ना० १५१

+गा चलैगा - अवधू सहंस्त्र नाडी पवन चलैगा - गो०बा०स० ५३

+गा जायगा- निकल जायगा अवसान जू - ना० १६२

+ऐ झमकै-कोटि झमंकै नायं - गो०बा०स० ५३

चमकै-गगन मंडल में लैदचमकै - गो०बा०स० ५१

+इहै करिहै - करिहै राम होइहै सोई - ना० २१८

+औहौ समौहौ - संतनि जिरदै समौहौ नरहरि - ना० १६७

+ऐगो तारैगो - नामदेव कहै मोंहि तारैगो राम - ना० १७७

करैगो - हरिबिन कौन सहाई करैगो - ना० १७८

+ऐहौं पैहौं- पीछै पैहौं सगा सवाई - ना० १४७
+गै पछितासुगै - फिर पाछै पछितासुगै रे बौरे - ना० ६२
+अंबा जाणांबा - कोई न जाणबा मेंवं - गो०बा० स० ११२
+यबा आयबा- माता गरिभ जनम न आयबा - गो०बा०स० २७५
+स्युं - धरीस्युं - धरीस्यूँ गगन बईठा - गो०बा० पद ७
+इला - आइला - जादिन भाता आइला - ना० ३१

पदग्राम के रूप में गा तथा गौ प्रत्यय प्राप्त होते हैं। सहपदग्राम के रूप में ही, स्यु, ऐ, इहैं,ऐहौं, इला, बा, तथा बा प्रत्यय प्राप्त होते हैं। इसमें अवधी का 'बा' प्रत्यय भी प्राप्त होता है। अपभ्रंश कालीन साहित्य में ह तथा ह वाले दोनों ही प्रत्यय हैं। आरंभिक ब्रजभाषा ने इहैं, ऐहौं तथा ऐहौं तथा इहौ प्रत्यय भी मिलते हैं। आधुनिक खड़ी बोली का 'गा' प्रत्यय इस युग की ~~विशेषता~~ विशेषता है।

अन्यपुरुष : बहुवचन -

+इहैं हंसिहैं- नहीं तो हंसि हैं लोग - ना० १६४
+ऐंगे बिनसैंगे - यह परपंच सकल बिनसैंगे - ना० १७४
+इहौ सुमिरिहौ - काहथ बांभन तिलक सुमिरिहौ - ना० १११
सहनिगे - फो सहनिगे दुःख - फ० श्लोक ३१
+गै जाहिंगे - अनेक मरि मरि जाहिंगे - ना० ६४
कहैंगे - सोऊ कहैंगे केवल रामा.... ना० १७
+इस्यो पड़िस्यो - नर नारी दोन्यूं नरक पड़िस्यो - गो०बा०पद ०५५
+ भाजसी - गुरु मुष बिना न भाजसी ये इन्यौं बहु रोग
गो०बा०स० २३५
+ऐ - तूलै- राम नाम समितउ न तूलै - ना० ६१

पदग्राम के रूप में गै प्रत्यय है। सहपदग्राम के रूप में इहैं, इहौं, इस्यो, तथा सी और ऐ प्रत्यय है।

भविष्य निश्चयार्थ

स्त्रीलिंग क्रियायें : अन्य पुरुष -एकवचन

प्रकासा - तब ही जौनि प्रकासा - गो०बा०प० ८१

+आ सोष्या- बक्तरि मंद्रमा बाई सोष्या - गो०बा०स० ८३।५३

+ ई प्रगटी किरणि प्रगटी जब आंद - गो०बा०स० ५३

+ऐगा - चलैगा - ादस ऊंसा उलटि चलैगा- गो०बा०स० ८१

+ऐगी- बरसैगी - बरसैगी कंबली - गो०बा० पद ४७

+ऐ नासै - भूषा कै सबद विलख्या नासै - गो०बा० पद ५६

+गी भगती जाइगी आई रै नाम - ना० १७

गी प्रत्यय पदग्राम है तथा सउपदग्राम के रूप में, ऐ,गा, ई और आ प्रत्यय मिलते हैं।

साधारणाकाल

भविष्य संभावनार्थ

मध्यमपुरुष " एक वचन

+एगौ बिसरैगा - जो ऐसौ औसर बिसरैगौ - ना० १७८

धरैगौ - तौ मरकर कौ औतार धरैगौ - ना० १७८

+स्यौ - करैस्यौ - विधवा नारी नौ संग करिष्यौ - गो०बा०पद ५५

+ईस्या - पडीस्यौ - तौ रौमि रौमि नरक पडीस्यौ - गो०बा० पद ५५

+ए - निकले - फरीदा रुपी रुप न निकले जौ तन चीरै कौ प- फ०श्लोक ५३

भविष्य संभावनार्थ के रूपों में गौ, यौ तथा ए प्रत्यय मिलते हैं।

उत्तम पुरुष ; एक वचन

+ऐंद्व - दैहूं जौरै बिसारौ तौ रौई दैहूं - ना० ३७

विध्यर्थ काल

अन्य पुरुष एकवचन (पुंल्लिंग)

+इया - कड़िया -   भेद न कढ़िया - गौ०बा०ख० ६४

पीयवा-   पीयवा नीफर पाणी - गौ०बा०ख० ६४

कीड़िवा -   केते न कीड़िवा नादं - गौ०बा०ख०१२१

+० देइ-   काया थै मन जान न देइ -गौ०बा०प०५०

लेइ-   राति दिवस कोपर्णरि लेइ - ,,५०

+यां - धरणां-   दीज दीक्षा पग धरणां-गौ०बा०ख०७३

+इयै- डारियै   मधु सुधरण पैहरियै -गौ०बा०ख०७४

बंफाइए -   झूठी दुनियां ला न आप बंफाइए-

फ०बारामासा० ७

बोलिए-   बोलियै सचु धरमु झूठु न बोलिए-

फ०बारा महला ८

विध्यर्थ

भूतकाल

अन्य पुरुष एकवचन - स्त्रीलिंग

+या - बोलिया अमृत - बाणी ।

संयुक्त काल

संयुक्त काल में एक प्रधान कृदन्ती क्रिया होना सहायक क्रिया के संयोग से कालरचना होती है । संयुक्त काल आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की आधुनिक अवस्था की प्रमुख विशेषता है । आधुनिक भारतीय आर्य भाषा के आदिम काल में ये प्रयोग नाम मात्र को मिलते हैं । अपभ्रंशकालीन साहित्य में भी चार काल, सामान्य वर्तमान, अपूर्ण भूतकाल, पूर्ण वर्तमान तथा पूर्ण भूत मिलते हैं । आरंभिक ब्रजभाषा में भी यही रूप प्राप्त है ।

अपूर्ण वर्तमान संभावनार्थ, अपूर्ण भूत संभावनार्थ पूर्ण वर्तमान संभावनार्थ तथा पूर्ण भूत संभावनार्थ के प्रयोग प्राप्त नहीं होते हैं । संभवत: यह प्रयोग आधुनिक खड़ीबोली की मुख्य विशेषता है तथा अत्यधिक साहित्यिक रूप हैं । अत: इन प्रयोगों का न मिलना असाधारण नहीं कहा जा सकता है ।

संयुक्त काल को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है -

१. वर्तमान कालिक कृदन्त + सहायक क्रिया = अपूर्ण काल
२. भूतकालिक कृदन्त + सहायक क्रिया = पूर्ण काल

कृदन्तीय होने के कारण कारक के लिंग परिवर्तन से क्रिया रूपों में भी परिवर्तन हो जाता है ।

भूतकालिक कृदन्त + सहायक क्रिया

पूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ -

भूतकालिक कृदन्त के बाद वर्तमान कालिक सहायक क्रिया के विकृत तद्भव रूप को जोड़ने से पूर्ण वर्तमान अथवा आसन्न भूतकाल की क्रियायें बनती हैं ।

उत्तम पुरुष एक वचन

आयौ हूं — तू मेरौ ठाकुर तू मेरौ राजा लौं तेरै सरनै आयौ हूं — ना० १३१

हर्‍यौ है — तुम्हारी सरनि मैं आजि हर्‍यौं हूं - ना० ५३

लिया है — थावर जंगम जीति लिया है - ना० ५२

बैठा रहूं — बैठा रहूं न फिरूं न हालूं - ना० ५५

भूखा रहूं — भूखा रहूं न खाऊं ना० ६५

रह्या समाई — तौ साध संगति मैं रह्या समाई - ना० ११७

बैठे(हैं) — जिस आसन हम बैठे —फ० आसामज़ला० १०

वर्तमान कालिक कृदन्त + सहायक क्रिया

वर्तमान अपूर्ण निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष एक वचन

देखत रहैं - हम तौ निरालंभ बैठे देखत रहैं - गो०ज्ञा०स० ११८

परतु है — घरी पहर मौहि ल न परतु है ना० १७८

पूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ

अन्यपुरुष एकवचन

हारा है —जिन्ने जन्म हारा है तुजकूं - ना० १६२

साहै है - उडत पंखि मैं लखऊ पेख्या नर तुजै है साहै - ना०१६५

किया है - जा दिन तै पिया गवन कियो है - ना० २३०

मढ़्या है — अरध उरध बजार मढ़्या है — गो०बा०प० २७

राष्यारहै — राष्या रहै गमाणा जाय सति भाषंत श्री गोरख राय—गो०बा०प०२४३

रहै समाई — पंच तत मैं रहै समाई — गो०बा०स० १७६

रहै समाई — गगन मंडल मैं रहै समाई — गो०बा०पंद्रह तिथि २

रहै समांना — हिरदा पंकज मैं रहै समांना — गो०बा० प्राण संकली ।

रहिउ समाई — देखी देही रहिउ समाई — ना० १५३

धनावै हौ — कौउन ग्यांन बुझावै हौ — ना० १५५

आवै हौ — आपन दैही आवै हौ — ना० १५३

जाई हौ — पूछै किछु न जाई हौ — ना० १५३

रह्यौ समाई — संत संगति मैं रह्यौ समाई — ना० ३२

भई है — मुक्ति भई है बैरियां — ना० ६८

नाच्यौ है — नामदेव नटवा ह्वै नाच्यौ — ना० ७१

लागि रही — जाकी लागि रही ल्यौ रसनी — ना० १३ ह्वै क

ह्वै खेलै — एसा न कोई निरपष ह्वै खेलै — ना० १३

खेलै रहता — ग्यान ध्यान रहता खेलै — ना० १०८

राषि न सकई — पंच आत्मा राषि न सकई — ना० १०३

डौलै है — उहंस पंख मैं मूंगी चौकी भै है डौलै — ना० १६५

धरयौ है — करमकमल को भेष धरयौ है — ना० १६१

गाडु जिवा(धंसा गया है) यह तनु लहरी गडु जिवा — क० श्लोक १२३

वर्तमान अपूर्ण निश्चयार्थ

मध्यम पुरुष — एक वचन

कहता है — मूंगी काटी बलाल क्या कहता है — ना० १६३

भूलत हौ — काहै भूलत हौ अभिमानं — गो०बा०पद १४

अन्य पुरुष एक वचन

बसैत हैं	तन सरवर एक हंस बसैत हैं	ना० १७१
चलत है	निर्गुण कंदर जोति चलत हैं	गो०बा० श० २३६
कहती है	जैसे नांदना सब्द समान धरती कहती है	ना० २३
जात है	अवधू धौ मन जात है	गो०बा०श० २३४
खात है	अपरचै पिंड भिष्या खात है	गो०बा०प० २१४
गाजता रहै	अनहद सबद गाजता रहै	गो०बा०प० १०७
बकता रहै	बंक नालि बकता रहै	गो०बा० मंद्र तिथि १
होता है	हलाल कैसा होता है	ना० १६३
करत है	काहे रे मन गरब करत है	ना० १४०
होत है	प्राण गये ते मुक्ति होत है	ना० १२१
करता रहै	सऊ नामा हरि करता रहै	ना० २१८
होइ है	हरि है रामु होइ है सोइ	ना० २१८
लिपत न होइ	ताहु लिपत न होइ	ना० ११६
सुबीत रहै	पातन रहै सुबीत -	फ०सलोक ८७
देखता (है)	काफिर देखता मेरा अल्लाह मैली	फ० रागसूही ११६

बहुवचन

कहत है	ये अंमरा मांहि सुर कहत हैं	ना० १३१
खोजत रहै	खोजत रहैं ब्रह्म अपार	गो०बा०श० १७४

अपूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ काल में सम्मिलित रूप से विवेचन करने पर हम देखते हैं कि "त" के प्रत्यय अधिकांश रूप में मिलते हैं। अपभ्रंश कालीन साहित्य में भी कहीं कहीं कृदन्त तथा तिङन्त तद्भव रूपों के संयोग से काल रचना हुआ करती थी - जैसे करत अच्छ आदि रूप। आरंभिक ब्रजभाषा में इस तरह के कोई भी प्रयोग नहीं मिलते हैं।

अपूर्ण भूत निश्चयार्थ

वर्तमान कालिक कृदन्तकेबाद भूतकालिक सहायक क्रिया का लिङ्ग्ल्न्त रूप जोड़देने से अपूर्ण भूत काल का बोध होता है ।

अन्य पुरुष एक वचन

भरता रहिआ	नीझर झरता रहिया	गो०बा०स० ६१
जाती थी	लांगत लागत जाती थी	ना० २०८
खाती थी	तुमरी गायत्री लौंधे का खेल खाती थी -	ना० २०८
हींडी डोर	मनि हींडी डोर मांणा	क० श्लोक १२६
हींडे डोर	लाख हींडे डोर निताणां	क० श्लोक १२६

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में अपूर्ण भूत निश्चयार्थ के रूप मिलते हैं । अपभ्रंश कालीन साहित्य में भूतकालिक सहायक क्रिया का विकास न होने से इस काल के संयुक्त रूप प्राय: नहीं मिलते हैं लेकिन परवर्ती अपभ्रंश में इसके एक दो उदाहरण मिल जाते हैं जैसे - जैंत थाक इत्यादि ।

अपूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ : अन्यपुरुष बहुवचन

रहै समाय	लोग जुगति में रहै समाय	गो०बा०स० २२०
किये है	अनेक सूरज मिलि उदय किये हैं	ना० १६४

स्त्रीलिंग बहुवचन

परी हैं	पाय परी हैं बैरियां	ना० ६५
भई है	मुक्ति भई हैं बैरिया	ना० ६५

उत्तम पुरुष, अन्य पुरुष की एक वचन, बहुवचन, क्रियाओं का सम्मिलित विश्लेषण करने पर हम देखते हैं कि, होना तथा रहना सहायक क्रियाओं के लिङ्ग्ल्न्त तद्भव रूपों के ही सहयोग से पूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ क्रियाओं का

रूप को जोड़ने से पूर्ण भूतकाल की क्रियायें बनती हैं ।

उत्तम पुरुष एक वचन

लागि रह्यिा इहि लागि रह्यिा वरिवाह हमारा - गो०वा०पद २१

सहायक क्रिया

हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की काल रचना में सहायक क्रिया से विशेष सहायता ली जाती है। कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में प्राचीन अस् तथा भू धातु से विकसित 'ह तथा 'भु'- और - रह - रूप प्रधान क्रिया के रूप में तथा संस्कृत काल रचना में सहायक क्रिया की भाँति प्रयुक्त हुए हैं। सहायक क्रिया का विवेचन करने से यह ज्ञात हुआ है कि इन क्रियाओं के तिङन्त रूपों में लिंग परिवर्तन नहीं होता है और कृदन्तीय रूपों में होता है। कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में --होना, रहना, सकना, तथा भया सहायक क्रियाओं के रूप मिलते हैं। संस्कृत धातु अस् का रूप भी प्राप्त होता है। अतः हम कह सकते हैं कि आधुनिक हिन्दी की ही भाँति कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में भी सभी सहायक क्रियाएं प्राप्त थीं।

अपभ्रंशकालीन साहित्य में भी जो सहायक क्रियायें हैं, वे भी संस्कृत के तिङन्त रूपों के अवशेष हैं। प्रारम्भिक ब्रजभाषा में भू तथा अच्छ (अच्छई > अक्ष है) धातु से बनी सहायक क्रियायें प्राप्त होती हैं।

सहायक क्रिया 'होना'

वर्तमान निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष

एक वचन　　　　　　　　बहुवचन

हौं　　मैं नहीं हौं　ना० ५३

है　　मोंहि अनत परतु है　ना०रा० २५०

है- एक पाव लौ हीन तिया है - ना० १६५

वर्तमान निश्चयार्थ

मध्यम पुरुष

एकवचन बहु वचन

है जैसा तू है ना० १५
हौ मैं नहीं मैं नहीं माधी तू है ना० ५३
है - ग० सब संसार बझा है तेरा गौ०ब०पद ५८
हौं तू काल की कांती हौ ना० ५३

अन्य पुरुष

है - तूणा नीर पै जा है न्यारा ना० १४
मै - यह जग है कांटै की बडी -गौ०ब०प०७३
है - मरणा है मीठा -गौ०बा०म० २६
-हआ - हौइआ - पारसु कंपनु हौइआना०१५४
हौई - गुरु पैं गरम हौई - ना० ७७
सहज आनंद हौईं ना० ७७
है - वाकै गलै जम का है फांस ना० २१७
हौवै - निर्मल न हौवै - ना० २२
हौवै - नहीं हौवै आवागवन - गौ०बा०सिष्यादरसन
हुता(हौता है - ग्यानी हुतासु ग्यान पुष रख्या
गौ०बा०पद ४८
-हला -हौइला -दुर्थै धौपा कौपला उपला न
हौइला - गौ०प०पद ३५

हैं - गुन पैलै हैं मन मानिका ना०१२४
हौवैं - जितना लाइक बासणा हौवै
गौ०बा०म०२५४
हौई - घर कूडा जब हौईं न बौसी
ना० ८७
हैं - ये बाँभन मौंहि सुदकहत हैं ना०
१३१०
हैं - हरी हैं हमची नाव री ११०
३४
हैं -पाम परी हैं बेरियां - ना० ६८
हौई - सकल भवन हौईं उजियारा -
गौ०बा०पद ६०

एकवचन   बहुवचन

होई - ऊंकार साधे बिना सिद्धी न होई गो०बा०पद १२

हुवै- लूण नीर ये ना हुवै पारा - ना० १४

हो- काहू पै सही न जाती हो जा० ५३

हौं - देवा तेरा निसान ब्राज्या हौं - ना० ६८

हौ - पंडित कौ पत्वारा हौ , ना० ३१

(स्त्रीलिंग)

होई - बादल बिनु बरखा होई ना० १३।४

हो - धरनी बहती हो   ना० ५३

है- ढाली जिम्पा कौठे कौहे है काम ना- जा० ५६

आहि- तै पिता जननी आहि. लछमी ना० ७५

<u>वर्तमान संभावनार्थ</u>

<u>उत्तम पुरुष एक वचन</u>

होते- हम नहीं होते - ना० २०४

<u>मध्यमपुरुष एक वचन</u>

होते - तुम नहीं होते कम्बु कहाते आहआ- ना० २०६

<u>अन्यपुरुष एक वचन</u>

होई - तो होई आच्यंताहि लीन- ना० २४४

होई - दुध होई तौ घृत की आसा - गो०बा० पद ६२

होई -च्यंहै होई तौ पद की आसा गो०बा०स० ६२

हौता - सूरु न हौता पानी क्वनु मिलाइश्रा   ना० २०६

वेदु न हौता करमु कहाँ ते श्राइया   ना० २०६

हौहैं - जैहै हौहैं तौ भरै ना कौहैं - गो०बा०म० ७०

हौसी - तन हौसी लैह - फ० श्लोक ४३

हुवै - नामदेव बरवा क्लैंनाच्यौ तौ रीझ्यौ स्वामी रे ना० ७१

भूत निश्चयार्थ   हौना सहायकक्रिया

हौते   हम नहीं हौते   ना० २०६

था - तब था चैरा -   ना० ११

मध्यमपुरुष

एक वचन   बहुवचन

हौते - हम नहीं हौते तुम नहीं हौते - ना० २०६

हौय - तेरी बहुरि न हौय जारा मरन - ना० २२६

हौहैं - एसैह निरमल हौहैं रे मना - ना० २२५

हुवा - तू तौ आप आपते हुवा - गो०बा०पद ५८

अन्य पुरुष

एक वचन   बहुवचन

हुश्रा - सबदहिं सबद सूं परपाहूश्रा - गो०बा०क०२१   हुवा- अनंत सिधां जोगेश्वर हुवा गो०बा०प० ३

हौता (था) - कलमा का गुरु महंमद हौता - गो०बा०स०११

हुवा-ग्यारह पुरसाकीहुवा - गो०बा०३

हुता - गयौ पाप जे पीते हुता - ना० ८१

हुवा - आपस अग्यानी उपल हुवा - ना० २३

था - आवतु देखिआ था नाο २०८

हुवा - यूं मन हुवा चीरं - गौοबाοसο ६७

था - आभरा था - गौοबाοसο ६१

होइ - अविचल होइ सरीरं - गौοबाο ५०

होती - बाप नहीं होती - गौοबाο पद ७

भूत निश्चयार्थ

(स्त्रीलिंग)

अन्यपुरुष एक वचन

होती - मर्वमद छाषि करद जै होती - गौοबाοसο १

हुती - गरम बास मैं हुती दीनता - नाο १६३

होती - सर्व सौपनी लंका होती - नाο १४०

थी - लैत जाती थी - नाο १०८

थी - घर की छोईं गवाईं थी नाο २०८

थी - लागत लागत जाती थी - नाο २०८

भूत संभावनार्थ

अन्यपुरुष एक वचन

+वा होइवा - आगिला अगनि होइवा अवधू तौ आपण होइवा पांजी -
गौοबाοसο ६३

हूवा - सौ तौ फिर आपण ही हूवा - गौοबाοपद १४

अन्य पुरुष बहुवचन

होवैं - तौ सिव सक्ति संमि होवै - गौοबाοपद १२

भविष्य निश्चयार्थ

मध्यम पुरुष एक वचन   बहुवचन

+गा - क्यबुन होएगा रोगी - गो०बा०पद३३

अन्य पुरुष एक वचन

+हैं - होहैं बादुहि आवागवन न होहैं ना०१६८   हैं गे -काहू के हैंगे - ना० ८३

+सी - होसी - तिहि पर होसी उजियारा   होसी - सकल अनल गुह सौता होसी ।
गो०बा०पद ४   ना० ८७

+है - होइहै - होइहै सोई - ला० २१८

+ब - होइबा - रूप्र उलट फिरि होइबा धीर-गो०बा० सिध्या दरसन

अन्य पुरुष (स्त्री लिंग)

+है - हुवै है - देह ख्वैहै छार - ना० ७५

+ठै - ज्यू थिर हुवै बाईं - गो०बा० पद ५४

भविष्य संभावनार्थ

अन्य पुरुष (एक वचन)

+ला - ख्वैला - बसी करौं तौ घर भंग ख्वैला - गो०बा०पद ७

सहायक क्रिया "सकना"

वर्तमान निश्चयार्थ

अन्य पुरुष (एक वचन)

सकई - पंच आतमा राखि न सकई - ना० १०३

सहायक क्रिया आहि

वर्तमान निश्चयार्थ

अन्य पुरुष एक वचन	बहु वचन
अछै - तहाँ राम अछै न बुढाई - गो०बा०श०६६	अछैं - बोल अछै पौलाबल- गो०बा०पद २६
आहि - कुमरा कै कारि काँठी आहि -गो०बा०पद २	आहि - बारह कला रूप आहि गो०बा०पद १२
,, तेली कै घर तेल आहि - गो०बा०पद ४२	
आहि - सती माँथ रथ आहि - गो०बा०पद १२	
आहि- ऐसा आछि गुलाह - ना० १४	
आहै - घर ही भीतर बैणी आहै - ना० ११६	

सहायक क्रिया - रहना

वर्तमान निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष - एक वचन	बहुवचन
+इया रहिया - अब तौ रहिया रंगै - गो०बा०पद २६	
+इया रहिया - ग्यांन निरालंब रहिया - गो०बा० पद २६	
रहूँ - सदा संतोष रहू आनंद मैं ना० ६६	

अन्य पुरुष

+ऐ - रहै - अभिअंतरि राता रहै - ना० साखी ३	+ऐं-रहैं नैन रहैं भरपूर ना० २३०
रहै-बाहरि रहै उदास - ना० साखी ३	+औ-रह्यौ-सब घर राम रह्यौ रमि रमता- ना० १२३

+औ - रह्यौ- कौन कै कलंक रह्यौ ना० २८ +एं -रहै जैसे भृंगी कीट रहैं
त्यौं लाईं- ना० ५७

+इआ-रहिआ- भणति नामदेव राम रहिआ-ना० २२१ +रा-रह्या-इहि लागि रह्या
परिवार हमारा-गो०बा०

+ए - रहै -काचे भाडे रहै न पंखी - गो०बा०म०३७ +ऐ - रहै जहां रहै त्यौं ताईं-
गो०बा०पद २१

+इया-रहिया-सु ग्यानगुण रहिया-गो०बा०पद ४८
+औं- रह्यौं-संत संगति मैं रह्यौं समाईं ना० ३२
रहौं - तब आपे रहौं अकेला- ना० ७२

(स्त्रीलिंग)

+ऐ रहै - जैसे मीन पानी मैं रहै - ना० ६२
रही - जाकी लागि रही त्यौं रमनी - ना० १३
रह्यौ - बाजी लागि रह्यौ रे मना ना० ४०

वर्तमान संभावनार्थ

अन्य पुरुष एक वचन

+ऐ रहै - यहु मन कै जै अभव रहै तौ तीन लोक की बातां कहै - गो०बा०स० ५३
रहया - तौ साध संगति मैं रह्या समाईं - ना० ११७

मध्यमपुरुष ए०व० वर्तमान आज्ञा (आदरार्थ)

+इए रहिए-तिऊ रहिए भाईं = धा० २१५
+इ - रहि-रहि देखि सारं-गो०बा०म० ५६
+इबौ रहिबौ-गगन सिषर चंदा रहिबौ समाईं - गो०बा०पद ५४
+इला- रहिला- गुर कीजै गहिला निगुरा न रहिला - गो०बा०पद ३४
+ इबा - रहिबा-अहनिसी रहिबा पीरं - गो०बा०स० २७५

२. भूतनिश्चयार्थ

उत्तमपुरुष - एक वचन | बहुवचन

+ऊं-रहूं-बैठा रहूं न फिरूं न डालूं-ना० ६५ +ऐं-रहैं- जगतें रहैं निरास- ना० माखी ४

भूखा रहूं न खाऊं -ना० ६५

रहूं- कब लग तल रहूं = जा० १७४

+आं-रहांनां- भणत गोरखनाथ मछिंद्र नां

पूता अविचर थीर रहांनां-गो०बा०पद ।।

अन्य पुरुष एकवचन | बहुवचन

+ औ - रहौ-तब आपै रहौ अकेला-ना०७२

+इ-रहि- तब रहि गया पद निरवान-गो०बा०स०७५

+ईला-रहीला-गोरखरहीला मछिंद्र आई-गो०बा०पद४६

(स्त्रीलिंग)

रहि - रहि गई छोई - गो०बा०पद २

रही- जाकी लागी रही त्यौं रसनी- ना० १३

भूतसंभावनार्थ

अन्यपुरुष एकवचन

रह्या - तौ साध संगत मैं रह्या समाई ना० ११७

विध्यर्थकाल : अन्य पुरुष

+ - रहणा- जगमैं ऐसै रहणा- गो०बा०स० ७२

+ इबा - रहिबा-उनमनि रहिबा भेद न कहिबा- गो०बा०स०६४

+ इबा - रहिबा-पहूया न रहिबा- गो०बा०स० ३१

भविष्य काल

अन्य पुरुष एक वचन

रहैगा - काम गहै कंपन हुवै रहैगा - गी०बा०पद ५०

+ला रहैला-सेवक स्वामी संग रहैला - ना० ४५
रहिला-भगवत भगतां र थिर रहिला - म० ४५

+ला - रहैला- एक राम नाम तत रहैला - ना० ६८

सहायक क्रिया भया

वर्तमान निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष

अभाव है।

मध्यमपुरुष --

अभाव है

अन्य पुरुष एक वचन	बहुवचन
भयौ - पतित पावन भयौ रामकहत ही ना०२८	भया-सहजैं बाचैं पूरा भया - गी०बा०पद ५४
भयौ - जौ लग राम नामैं चित न भयौ- ना०२२	
भयौ - का भयौ बन मैं बासा - ना० ६२	

स्त्रीलिंग बहुवचन

भयौ - धन धरती अपला भयौ धूल - ना० ६२

वर्तमान संभावना

अन्यपुरुष एक वचन

भए - गौह भए डगमग - गौ०बा०पद ४३

भया - पेट भया टीला - गौ०बा०पद ४३

भूतनिश्चयार्थ

उत्तम पुरुष एकवचन

भए - जब हम हिरदै प्रीति विचारी
रसबल छांहि भए भिखारी ना० ।।

मध्यमपुरुष

भयौ - जौ लग राम नामै चित न भयौ - ना० २२

भइला - तुम बसि भइला - ना० ६६

अन्य पुरुष एक वचन -

भया - नामदेव चंदन भया- ना० साखी ४

भए - भाव भव भुवंग भए पैहारी - ना० ४३

भए - निदबै राजा भए निरदंद - गौ०बा०स० १५

भया - मार्यौ मृघ भया अवधूता - गौ०बा० पद २६

इला - भइला-भइला घोर अंधार- गौ०बा०पद १०

भयौ - कहा भयौ नहीं सायौ बांटि - ना० २७

ला- भैला - पूर्णा भैला बाई रमै ना० ६१

स्त्री लिंग

ई - भइउ - मुक्ति भइउ बहु युग जानिउ - ना० २११

भविष्यकाल

अन्यपुरुष (पुल्लिंग)

+ला भएला - केहू के बहु पुत भएला - ना० ३३

अन्यपुरुष (स्त्रीलिंग)

+ला - भइला - मुँ के भइला पाप जपैला - ना० ४५

क्रियायें- कृदन्तीय रूप

संयुक्त -क्रिया

धातुओं के कुछ विशेष कृदन्तों के आगे (विशेष अर्थ में) कोई कोई क्रिया जोड़ने से जो क्रियायें बनती हैं उन्हें संयुक्त क्रियायें कहते हैं । संयुक्त क्रिया में मुख्य क्रिया का कोई कृदन्त रहता है और सहायक क्रिया के काल के रूप रहते हैं । लेकिन कृदन्त के आगे सहकारी क्रिया आने से सदैव संयुक्त क्रिया नहीं बनती है । जहाँ कृदन्त की क्रिया मुख्य होती है और काल की क्रिया उस कृदन्त की विशेषता सूचित करती है वहीं दोनों को संयुक्त क्रिया उस कृदन्त की विशेषता सूचित करती ह -संयुक्त क्रिया कहते हैं । यह बात वाक्य के के अर्थ पर निर्भर करती है । इसीलिए संयुक्त क्रिया का निश्चय वाक्य के अर्थ से होता है ।

रूप के अनुसार आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में आठ प्रकार की संयुक्त क्रियायें होती हैं -

१. क्रियार्थक संज्ञा से बनी
२. वर्तमान कालिक कृदन्त से बनी
३. भूतकालिक कृदन्त से बनी
४. पूर्वकालिक कृदन्त से बनी
५. अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त से बनी
६. पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त से वनी
७. संज्ञा या विशेषण से बनी
८. पुनरुक्त संयुक्त क्रियायें

'कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य' का वि विश्लेषण करने पर हम देखते हैं कि उस युग में भी संयुक्त क्रियाओं के कुछ रूप प्राप्य हैं । संयुक्त क्रिया के समस्त आठों रूपों के उदाहरण तो नहीं मिलते लेकिन फिर भी काफी रूप हैं । अत: हम कह सकते हैं कि कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में भी आधुनिक भारतीय आर्य-

भाषाओं के समान संयुक्त क्रिया के रूप प्राप्त हैं । ये क्रियायें अधिकांशतः वर्तमानकालिक कृदन्त भूतकालिक कृदन्त, पूर्वकालिक कृदन्त तथा क्रियार्थक संज्ञा के विकारी रूपों की सहायता से बनाई जाती थीं । यही स्थिति कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य की है । आरंभिक ब्रजभाषा के साहित्य में भी संयुक्त क्रियाओं के लगभग यही चार रूप प्राप्त होते हैं ।

संयुक्त क्रिया

पूर्वकालिक कृदन्त से बनी

भरि भरि लावौ — गोरख बाला भाई भरि भरि लावौ — गौ०बा०पद ३७

बैसि आइला- — तिहाँ बैसि आइला — गौ०बा० पद ३४

हसि हसि आया — सब ही यसि हसि आया — गौ०बा० पद २६

भरि भरि पीया — जिनि कैवल्या तिनि भरि भरि पीया - गौ०बा०पद २८

लड़ि लड़ि मूवे — नर बंदर सब लड़ि लड़ि मूवे — गौ०बा०पद २१

भरि छक्या- — चैतनरावल यहु भरि छाक्या — गौ०बा० पद २८

भरि भरि दैवै — मनसा कलालिनि भरि भरि दैवै — गौ०बा० पद २८

उलटि समाना — सबदै उलटि समाना — गौ०बा०पद ११

करि राख्या — चंद सूर दोउ, सम करि राख्या — गौ०बा० पद ६

पढ़ि देखि — पढ़ि देखि पंडित — गौ०बा०पद ५६

रहि देखि — रहि देखि सारं — गौ०बा० पद ५६

करि राखि — सिद्ध करि राखि आपनां सील — स०गौ०बा० ७

धरी उठाई — अरध उरध बिचि धरी उठाई - — गौ०बा०स० ७८

भरि भरि खाई — भरि भरि खाई व ढूरि ढूरि जाई — गौ०बा०स० १५५

सीखि सीखि सिखाइया — सीखि सीखि सिखाया — गौ०बा०स० १५४

परषि परषि लै — परखि परखि लै आगै धरा — गौ०बा०स० १५६

करि देष   राजा परजा सथि करि देष   गो०बा०स० १३६

करि राषिबा - ऐसे करि राषिबा गुरु का भंडार - गो०बा०स० ८४

पढ़ि देषि   पढ़ि देषि पंडिता ब्रह्म ग्यांन   गो०बा०स० १६७

भरि भरि सींचता - भरि भरि सींचता जो सिंह मुला- गो०बा० कुछ पद ३

लै उतपनां   - पंच तत लै उतपनां सकल संसार - गो०बा० मछंद्र बोध १

उलटि चलैगा - मांमस जैसा उलटि चलैगा - गो०बा०स० ८१

मिलि बधावा- साधौ भाई सांचा सखी मिलि बधावा ए - ना० १३५

मिलि षेलीला - साध संगति मिलि षेलीला - ना० ३१

लै लै उधरयौ - तेरौ नाम लै लै उधरयौ - ना० ४६

जाय मिलां   जाय मिलां तिनां सज्जना   फ०श्लोक २८

आई बैठा - मलुक बैठा आप - फ०श्लोक ५०

देहि उठालि- एकना सुथि भागीहि उठालि - फ० श्लोक १२३

उड़नि जाहि - काया कुंड न पीपरा बहे न उड़नि जाहि फ०श्लोक ६३

मिलि बधावा- साधौ भाई पांचा सखी मिलि बधावा ए - ना० १३५

चल्यौ रिसाई - भागहि कंवलिया चल्यौ रिसाई - ना० १६७

मारि भगायौ - जस तुम्हारौ गावत गोविन्द इन लोगनि मारि भगायौ-ना०१३१

कोई उतारौ   मोंहि कोई उतारा - ना० ५१

काग्यौ कांटि - कहा भयौ नहीं कागौ कांटि - ना० २७

जानि बूझि   जानि बूझि बिष कायौ रे - ना० १४२

जाइ कहौ - तैन्हौं कोइ पार कहौं- ना० १३६

बनि आय - स्यौ सुराल मुकुट बनि आया - ना० १३०

बैठे आई - जहां लोग महाजन बैठे आई - ना० १६७

बैठे जाई- मन के पीछू बैठौ जाई - ना० १६७

पकरि उठाइ आ- भगति करत नामा पकरि उठाइया ना० ५१६

पलीउ पलटाई - लै कमली पलीउ पलटाई - ना० २१६

पलीउ- बैठा जाई- देहुरै पाछै बैठा जाई - ना० २१४

लिखि भेजी - प्रीतम की पतियाँ लिखि भेजी - ना० २३०

कहै समझाई - सांच बिना सीझनि नहीं नाम कहै समझाई - ना० साखी १२

जाइ चढ़ैली - तत तखर जाइ चढ़ैली - ना० ९७

जाइ लागी - अमर बेल अपने जाइ लागी - ना० ६७

संयुक्त क्रिया

वर्तमान कालिक कृदन्त से बनी

डरत फिरै - रीझा डरत फिरै पुजारी - ना० ५८

करत मिटै - हरि हरि करत मिटै - ना० २०६

चलत मिटै - चलत मिटै नहीं पीर - ना० १३६

भरमतौं फिरयौ - अनेक जनम भरमतौं फिरयौ - ना० ४६

आवत जाती - आवत जाती मनसा थीहै - गौ०बा०स० ७६

भटकत फिराई - सूनै जंगल भटकत फिराइ - गौ०बा०स० १५०

आवै जाइ - ना पाईं न्यहा आवै जाईं - गौ०बा०स० ११६

आवै जाईं - ज्यूं ज्यूं प्रूंगम आवै जाईं - गौ०बा०पद १८८

होते देखिला - कोलहा [illegible] मीतीजा मैं मैं होते देखिला - ना० १६५

खसत खेलत - खसत खेलत तेरै देवुरे पाखवा - ना० २१४

भरमत होते - मूरिख भरमत होते - ना० ६५

घूमत आया - मैंमत घूमत आया - ना० १०१

सूंघत देखि - सूंघत देखि भरैली - ना० ६७

देऊं दिखाई - कहो त मुर्ख गाऊं देऊं दिखाई - ना० २१८

पढ़ैं गुनै - पढ़ैं गुनै क्या कहै अनेक ना० १७५

जीवन भरै - जउ गुरुदेव त जीवत भरै - ना० २१६

संयुक्त क्रिया

भूतकालिक कृदन्त से बनी

चढ़ि गये   चाणा चवणा रमण से मुनिवर चढ़ि गये - फ०श्लोक ७८

चलि गये - जैसे मुनी धाई से जानी चलि गये - फ०श्लोक ७८

चलि गई - जैसी चलि गई - फ० श्लोक ६५

करि गये - कहा सौदा करि गये - फ० श्लोक ४८

बाँधि न सक्यौ - जैहा बाँधि न सक्यौ - फ० रागसूही २।१

गये बुझाई - दीवड़े गये बुझाई - फ० श्लोक ५८

लै जासी   जिंद बहुटी मरण वर लै जासी परणीमि - फ० श्लोक ३

बैसि गाँक्या - जैसे बैसि गाँक्या - फ० आसा महला १०

विचार लयि - चले चल्लन हाट विचार लयि मनौ - फ० आसा महला - १२

मिलि जाऊँगा - ब्रह्म ज्योति मिलि जाऊँगा - ना० ६६

सक्या न जाई - काल मैं आप सक्या न जाई - ना० ४४

रमिया समाई - नामदेव राम रमिया समाई - ना० २१८

मरि गई - बड़ी सौति मेरी मरि गई - ना० १४१

लटक्यौ गढ्यौ - लटक्यौ गढ्यौ गढ़ीया जौलें गढ़ीया देव हेरीलै - ना० १६५

गया जै भूलि - गुर की आया गया जै भूलि - गो०बा० आत्मबोध १६

टलि जाई - तौ चारि जुग लौ जैं टलि जाई गो०बा०पंन्द्रह तिथि २

दीयौ बताई - लक्ष्ण रतना गुरि दीयौ बताई - गो०बा० पन्द्रह वतिथि २

मार लिंइ - मार लिंवैं बरमारे - गो०बा०स० १५०

पड़ा पापा - सुपिनै मैं धन पापा पड़ा - गो०बा० स० १५४

उलझि जाई - उलझि जाइ रस भाय - गो०बा०स० १४३

लेहु बिचारी - बिसराम सुरता लेहु बिचारी - गो०बा०स० २१४

करि लै - करि लै सिध पुरिस सूं मेला - गो०बा०स० २०३

घट गया - बढि बढि बढ़ि बढु घट गया - गो०बा०प० २४८

करैगा समाई - बासल करैगा समाई - गो०बा०स० २५६

रौकि लै   अधु नव घाटि रौकि लै - गौ०बा०छ० ५०
बंच्या जाई- पुस्तकै न बंच्या जाई - गौ०बा०छ० ६
रौकि लेहु- रौकि लेहु नव द्वारं - गौ०बा०छ० ५२
गाडि गइला- रस कुम्भ गाडि गइला- गौ०बा० पद १
काढ़ि लीया - पीछी गौटा काढ़ि लीया- गौ०बा०पद ३४
बहि गयौ - उर प्रकाले बहि गयौ - गौ०बा० ४७।२०
समधि परी - अब मौहिं समधि परी - ना० ८
लागि रही - जाकी लागि रही ल्यौ रहनी - ना० १२
बैठे गाइये - अपने राम घर बैठे गाइये -ना० २६
टूटि गयौ - टूटि किंवार टूटि गयौ ताला - ना० ३६
भजि लीजै - तत कहन कूं राम है भज लीजै सौई ना० १४३
लहर्या जाई- भरमी सरवर लहर्या जाई - ना० १३६
चारूयौ भावै - बाई कौ दाम न चारूयौ भावै - ना० १०६
पकड़्या जाई-पकड़्या जाई न आवै मुष्टी - ना० १०७
लख्यौ न जाई - अलख लख्यौ न जाई - ना० १०४
मिलि जाऊंगा - ब्रह्म ज्योति मैं मिलि जाऊंगा - ना० ६६
देख्यौ कहूं - देख्यौ कहूं तौ निपट झूठा - ना० ७३
सुनी कहूं - सुनी कहूं तौ कूणरै - ना० ७३

संयुक्त क्रिया

क्रियार्थक संज्ञा से बनी -

बौलिबा लागा - अनहद लै बौलिबा लागा - गौ०बा०छ० ७६
लैनै जाई - ज्यू सांपौ सर लैनै जाई - ना० १७२
उठि लागिबा - सिंधि परिजलि उठि लागिया धूवा - गौ०बा०छ० २३३

जोवण्ण बैठा - आयै गोरष जोवण्ण बैठा - गो०बा० पद ६

बंधनि पड़िया - गुरुजी ओर्दै तुम्हें बंधनि पड़िया - गो०बा० पद ४६

नाचन लागा - लगाँ पांगुल नाचन लागा - गो०बा०पद २५

बाजन लागी - अमनि तांती बाजन लागी - गो०बा० पद १६

ढूंढ़ण जाता - जाथौं ढूंढ़ण जाता - गो०बा० पद १४

दीखण लागा - रूप सवैता दीखण लागा - गो०बा०स० ८०

दरसन भया - नामैव नरहरि दरसन भया - ना० १६७

जुलणि भेला - जुलणि भेला नाद कं - ना० ६१

सुसणि न परि - सुसणि न परि धाँपै - ना० १११

मिलन न देई - माधौ की माया मिलन न देई - ना० १०६

सारन लागी - मांजी काजल सारन लागी - ना० १०१

सींचण लागा - अमी महारस सींचण लागा - ना० ९७

पीवन लागै - अम्रित पीवन लागै - ना० ११३

कह्यौ नहीं मानत - पुत्र प्रह्लाद कह्यौ नहीं मानत - ना० ११८

कवन सुनन - कवन सुनन कउरूवा - ना० १६१

दैहि लैहि - दैहि लैहि एक तूं दिगरकौ नहीं - ना० १६१

कहै सुनै - कहै सुनै की कछू न मानै - ना० १७५

कण्नु न पाई - हरि की महिमा किछु कण्नु न पाई ना० २१५

आवनु पावऊ - पादि बहुरि न आवनु पावऊ - ना० २०१

क्रिया वाक्यांश

सिद्ध करि राखि - आपनां चीत - गो०बा० स० ७

रांषिबा कौलिबा गाढ़बा गीत - गो०बा०स० ७

लटक्या गड्यौ गढ़ीया जीलै गढ़ीया ऐवहै टीलै - ना० १६५

है सोवत जागत - ना० ५५

नहावे धोवे करै सनान नाo २४

घूंघट देषि भरैली नाo ६७

टारी हूं न टलैली नाo ६७

टारी हूं न हलैली नाo ६७

पीया पीऊं पीया पीऊं नाo ६५

आश्वत जात पर्यो नाo ८५

जतन करि काढ्या नाo ८२

देखत रोने लगी नाo १८५

लहै कर धर अलसाई नाo १८६

छीन लिया है नाo १६३

पीया कहता है नाo १६३

सिंमरनु करि षाना नाo २०४

काढ्या आवत देषिया था नाo २०८

लागत लागत जाती थी नाo २०८

पौहै पहुंच न साथै नाo २०८

क्रियायें - कृदन्तीय रूप

क्रिया के जिन रूपों का उपयोग दूसरे शब्द भेदों के समान होता है उन्हें कृदन्त कहते हैं। कई कृदन्तों का उपयोग कालरचना तथा संयुक्त क्रियाओं में होता है और ये सब धातुओं से बनते हैं।

हिन्दी में रूप के अनुसार कृदन्त दो प्रकार के होते हैं।

१. विकारी   २. अविकारी या अव्यय

विकारी कृदन्तों का प्रयोग बहुधा संज्ञा वा विशेषण के समान होता है और कृदन्त अव्यय क्रिया विशेषण व कभी कभी संबंध सूचक के समान आते हैं।

विकारी कृदन्त -

यह चार प्रकार के होते हैं -

१. वर्तमान कालिक कृदन्त
२. भूतकालिक कृदन्त
३. क्रियार्थक संज्ञा
४. कर्तृवाचक कृदन्त

अविकारी कृदन्त -

यह भी चार प्रकार के होते हैं --

१. पूर्वकालिक कृदन्त
२. तात्कालिक कृदन्त
३. अपूर्ण क्रिया द्योतक
४. पूर्ण क्रिया द्योतक

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में कृदन्त (आधुनिक खड़ी बोली) के आठों रूप प्राप्य हैं।

वर्तमान कालिक कृदन्त

वर्तमान कालिक कृदन्त धातु के अंत में ता प्रत्यय लगाने से बनता है। इसका प्रयोग बहुधा विशेषण के समान होता है और इसका रूप आकारान्त विशेषण के समान बदलता है। अर्थात् पुलिंग के साथ ता और स्त्रीलिंग के साथ ती। लेकिन कभी कभी इसकी कारक रचना आकारान्त पुलिंग संज्ञा के समान होती है।[1]

धातु	प्रत्यय	सिद्धरूप	सन्दर्भ
कह्	त	कहत	ना० २२७
बूझ	त	बूझत	ना० २२४
देख	त	देखत	ना० ४७
फार्	त	फारत	गो०ग्रा०पंद्रह तिथि ६
दुहाय	त	दुहायत	गो०ग्रा० पद ५।
मर्द	त	मर्दत	गो०ग्रा०पद० ५०
घड़	ता	घड़ता	ना० ५८
देख	ता	देखता	फ०राग सूही ६
दे	ता	देता	गो०ग्रा० पद ३१
धूम्	ताँ	धूमताँ	गो०ग्रा०पद ४६
चढ़्	ताँ	चढ़ताँ	गो०ग्रा०छ० २०८
उतर्	ताँ	उतरताँ	गो०ग्रा०छ० २०८
कहि	बा	कहिबा	ना० २०७
कर्	तीं	करतीं	ना० १६

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में वर्तमान कालिक कृदन्तीय रूपों में पदग्राम के रूप में त प्रत्यय प्रयुक्त हुआ है। सहपदग्राम के रूप में ता, ताँ तीं और

१, डा० कामताप्रसाद गुरु

अत प्रत्यय प्राप्त होते हैं अपभ्रंश कालीन साहित्य तथा आरंभिक सूरपूर्व व्रजभाषा में अधिकांश रूप में त या अत प्रत्यय लगाकर ही कृदन्तीय रूप बनाये जाते थे ।

भूतकालिक कृदन्त --

भूतकालिक कृदन्त धातु के अंत में 'आ' प्रत्यय जोड़ने से बनता है ।[1] इनकी रचना विभिन्न नियमों के अनुसार होती है । इनका प्रयोग बहुधा विशेषण के समा होता है । इनके साथ कभी कभी हुआ लगाते हैं । ये भी कभी कभी संज्ञा के समान आते हैं ।

धातु	प्रत्यय	सिद्धरूप	संदर्भ
बैठ	+आ	बैठा	फ०श्लोक १००
खड़्	+आ	खड़ा	फ० श्लोक ८६
जाब	+आ	जाबा	ना० १६७
लग	+ए	लगे	ना० २२६
सांच	+ए	सांचे	ना० २५
चल	+ए	चले	ना० ४
बैठ	+ए	बैठे	गो०बा०स० ११८
तरिब	+ए	तरिबे	ना० २०५
कह	+ए	कहे	ना० २०७
उछल	+ए	उछले	फ०रागसूह २।१
हंस	+एँ	हंसे (बहुवचन)	गो०बा०स० ८
खेल	+एँ	खेलें (बहुवचन)	गो०बा०स० ८
कह	+ऐ	कहैं	ना० १२८
आव	+ऐ	आवै	ना० १२८
जाग्	+यौ	जाग्यौ	गो०बा० पद १०

1-कामता प्रसाद गुरु

धातु	प्रत्यय	सिद्धरूप	संदर्भ
उलट्	+या	उलट्या	गो०बा०स० ८८
चीन्ह	+या	चीन्ह्या	ना०साखी ८
कह +	इया	कहिया	गो०बा०स० २२
ढ़ढ़ोल	+इया	ढढोलिया	फ० श्लोक १२
कह	+हि	कहहि	ना०२१८

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में भूतकालिक कृदन्तीय रूपों में ए प्रत्यय पदग्राम के रूप में प्राप्त होता है । सहपदग्राम के रूप में आ, इया, या, यौ तथा हि प्रत्ययमिलते हैं । अपभ्रंशकालीन साहित्य में इनमें से कोई प्रत्यय प्राप्त नहीं होता है । आरंभिक व्रजभाषा में एकवचन के अन्तर्गत, आ औ तथा बहुवचन के अन्तर्गत ए और ऐ प्रत्यय मिलते हैं ।

क्रियार्थक संज्ञा

धातु के अंत में ना जोड़ने से क्रियार्थक संज्ञा बनती है । इसका प्रयोग संज्ञा तथा विशेषण दोनों के समान होता है । क्रियार्थक संज्ञा केवल पुल्लिंग तथा एक वचन में आती है और इसकी कारक रचना संबोधन कारक को छोड़कर शेष कारकों में आकारांत पुलिंग संज्ञा के समान होती है ।

धातु	प्रत्यय	सिद्धरूप	संदर्भ
गम्	+ अन	गवन	ना० २३०
पीव	+ अन	पीवन	ना० १६३
पूज	+ अन	पूजन	ना० साखी ८
निवार	+ अन	निवारन	ना० १५
नाच -	+ अन	नाचन	गो०बा० पद ६

धातु	प्रत्यय	सिद्ध रूप	संदर्भ
रच	+ णी	रचणी	गो०ग्रा०प० २३०
रच	+ णि	रचणिं	ग०ग्रा० स० २६४
रच	+ नीं	रचनीं	गो०ग्रा०पद ६
पछता	+ णी	पछताणी	क० राग सूही ११३
चल	+ न(ै)	चलनै	ना० १९२

उपर्युक्त विवेचन से हम देखते हैं कि कबीर के पूर्व खड़ी बोली काल में क्रियार्थक संज्ञा की रचना आधुनिक हिन्दी के अनुसार ही है। पदग्राम के रूप में न प्रत्यय प्राप्त होता है। सहपदग्राम के रूप में णा, आना, ना, णा, णि, नी तथा नै प्रत्यय हैं। अतः हम कह सकते हैं कि क्रियार्थक संज्ञा का रूप उस युग में भी लिंग वचन के अनुसार परिवर्तित होता था।

अपभ्रंशकालीन साहित्य में "ना" लगाकर बनने वाले क्रियार्थक संज्ञा के कोई भी रूप प्राप्त नहीं होते हैं। इसके अतिरिक्त अण लगाकर कुछ रूप बनाये जाते थे। अपभ्रंश के इस रूप का प्रयोग कभी कभी आरंभिक ब्रजभाषा में मिल जाता है लेकिन आधुनिक हिन्दी में इस रूप का सर्वथा अभाव है। आरंभिक ब्रजभाषा में ण तथा न दोनों वाले रूप मिलते हैं। अधिकांशतः न व तथा नि लगाकर क्रियार्थक संज्ञा के रूप रूप बनाये गये हैं।

कर्तृवाचक कृदन्त (संज्ञा रूप)

क्रियार्थक संज्ञा के विकृत रूप के अंत में वाला लगाने से कर्तृवाचक कृदन्त बनते हैं। इसका प्रयोग कभी कभी भविष्यत्कालिक कृदंत विशेषण के समान होता है। कर्तृवाचक संज्ञा का रूपान्तर संज्ञा तथा विशेषण के समान होता है।

धातु	प्रत्यय	सिद्धरूप	सन्दर्भ
जान बूझ	+इ	जानिबूझि	गो०बा०पद० ४३
बाल	+इ	बालि	गो०बा०पद ५४
उलट	+ए	उलटे	गो०बा० आत्मबोध १
पढ़ि	+कै	पढ़ि कै	फ०श्लोक ८२
खाइ	+कै	खाइ कै	फ० श्लोक २६
हँसि	+कर	हँसिकर	ना० ११४
दिढ़	+करि	दिढ़करि	गो०बा० सर्वे बोध ८
हँसि	+करि	हँसिकरि	गो०बा० पद २५६
लै	+करि	लैकरि	गो०बा०प० ७३
छांड	+कर	छांड कर	ना० १६३
मिलि	+कै	मिलि कै	ना० २११
देख	+०	देख	फ० श्लोक ३२
देष्यौं	+कर कर	कर कर देष्यौं	ना० १६३

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में पूर्वकालिक कृदन्त के अन्तर्गत पदग्राम प्रत्यय इ है तथा सहपदग्राम प्रत्यय के रूप में ए ई के कर तथा करि और शून्य प्रत्यय है। अत: उस युग में आधुनिक हिन्दी के सभी प्रत्यय प्राप्त होते हैं। अपभ्रंशकालीन साहित्य में हेमचन्द्र ने इ, एवि, अवि, इवि, इउ, एप्पि, एप्पिणा तथा एविणु आठ प्रत्ययों का विधान बताया है। लेकिन इनमें से कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में केवल इ प्रत्यय की ही समरूपता है। आरंभिक ब्रजभाषा में भी इ प्रत्यय की ही प्रधानता रही। कुछ स्थानों पर यह इ दीर्घ भी हो गया है। तथा यह दीर्घ स्वरान्त पद कहीं कहीं ए भी हो गये हैं।

वर्तमान क्रिया द्योतक कृदन्त

वर्तमान क्रिया द्योतक कृदन्त अव्यय का रूप तत्कालिक कृदन्त अव्यय के समान ता को ते आदेश करने से बनता है परन्तु उसके साथ 'ही' नहीं जोड़ी है। इसमें मुख्य क्रिया के साथ होने वाले व्यापार की अपूर्णता सूचित होती है।

कर्मवाच्य , कर्मणि प्रयोग, प्रेरणार्थक क्रिया

प्रेरणार्थक क्रिया

मिला —(मिल) प्रत्यय आ

ता प्रभु मिलावै - फ०सूही ५

कर्मवाच्य

लगाइये - किं चरण छल लगाइये ।

फ०श्लोक १६

निन्दिये - फरीदा खाक न निन्दिये - फ०श्लोक १०

कढिए - बैदल कढिए भिस्सु - (संयोगात्मक) फ०श्लोक १३

कर्मणि-प्रयोग

सम्भल बुज्झ मरीं - फ० श्लोक ७

अव्यय

अव्यय चार प्रकार के होते हैं :–

१. क्रिया विशेषण
२. सम्बन्ध सूचक
३. समुच्चय बोधक
४. विस्मयादि बोधक

(१) क्रिया विशेषण –

जिस अव्यय से क्रिया की कोई विशेषता जानी जाती है उसे क्रिया विशेषण कहते हैं। विशेषण शब्द से अर्थ है स्थान काल रीति तथा परिमाण। अतः अर्थ के अनुसार क्रिया विशेषण को हम चार प्रमुख वर्गों में विभाजित कर सकते हैं –

१. स्थान वाचक
२. काल वाचक
३. परिमाण वाचक
४. रीतिवाचक

लेकिन रूप रचना की दृष्टि से क्रिया विशेषण के दो वर्ग बनते हैं।

(१) सर्वनाम मूलक – जो सर्वनाम के मूल + प्रत्यय लगाकर बनते हैं।

(२) क्रियामूलक + संज्ञा मूलक + क्रिया विशेषणमूलक

२. सम्बन्ध मूलक अव्यय –

जो अव्यय संज्ञा (अथवा संज्ञा के समान उपयोग में आने वाले शब्द)

के बहुधा पीछे आकर उसका सम्बन्ध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ मिलता है उसे सम्बन्ध सूचक अव्यय कहते हैं । (कामताप्रसाद गुरु)

(३) समुच्चय बोधक अव्यय –

जो अव्यय एक वाक्य का सम्बन्ध दूसरे वाक्य से मिलाता है उसे समुच्चय बोधक अव्यय कहते हैं । लेकिन -कभी -कभी कोई कोई समुच्चय बोधक वाक्य में परस्पर दो शब्दों को जोड़कर भी समुच्चय बोधक अव्यय का निर्माण किया जाता है ।

(४) विस्मयादि बोधक अव्यय –

जिन अव्ययों का सम्बन्ध वाक्य से नहीं रहता जो वक्ता के केवल हर्ष शोकादि भाव सूचित करते हैं उन्हें विस्मयादि बोधक अव्यय कहते हैं ।

(१) क्रियाविशेषण :–

स्थानवाचक (सर्वनाममूलक)

कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में स्थान वाचक (सर्वनाममूलक) क्रिया विशेषण के प्राय: सभी रूप पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं –निम्नलिखित रूपों से यह स्पष्ट हो सकता है ।

जहाँ - जहाँ सुरति तहाँ पूरन कामा नाo ४२
जहिंया - आसा करि मन पहये जहिंया - नाo १२३
जहाँ - जहाँ तुम चंदा तहाँ मैं चकोरा - नाo १६१
जाँ - फरीदा जां लों तां नेह कह- फo श्लोक ११
कहाँ - स्पंध के भोजन कहाँ लुकाना - नाo २३

कहीं	पायौ कहीं नहीं विश्राम	ना० १२४
कह्यां	सतगुरु सबद कह्यां तै जूस्या	गो०बा०प्राण संकली
तहां	जहां तुम चंदा तहां मैं चकोरा	ना० १६१
तहियंया	राम बिना सुष नाहीं तहियां	ना० १२३
तहां	तहां निरंजन जोति प्रकासा	गो०बा० प्राण संकली
तहां	तहां विमल विमल जल पीपा	गो०बा०स० २
तां	तां नेह कह- घ० श्लोक ११	

जिहिं, तिहिं	जिहिं गुम मिले तिहिं पारि उतारे	ना० २१५
जह	जह अनहत सूर उपारा	ना० २००
जिहा	जिहा निंबडी बत्तीस बोकरी	ना० १८०
तह	तह दीपक जलै अंधारा	ना० २००
जहँ	जहँ बाजै अनहद तू ।।	ना० १७०
तत्र, जत्र,	जत्र जाऊं तत्र बीठल मेला	ना० ६१
तिहि	तिहिं परमारप अनंत सिध	गो०बा०स० ४६

जहां तहां	जहां तहां मिल्यौ सोहं - ना० ७३	
जित- जित-जित	प्राव तित ही तेरी सेवा	ना० १२६
तित-[illegible]	तित ही तेरी सेवा	ना० १२६

स्थान वाचक (संज्ञा किया, क्रि०वि०मूलक) कबीर के पूर्व खड़ीबोली काव्य में निम्न रूप पाये जाते हैं --

पीछे	आगे पीछे जाता ही जाना	ना० १२२
पिच्छल	फरीदा पिच्छल बात न जागियौ फ० श्लोक १०७	
अपूठौ	ज्यूं उलटि अपूठौ आंजि	गो०बा०स० २३४
पिछा	आगउ नेड़ा आया पिछा रहिया दूर	ध० श्लोक ६८
नेड़ा	आगउ नेडा आपा	ध० श्लोक ११
पास	कै तंहि आ जुग आपरै इक्त पइया पास	ध० श्लोक ६८

पाछै	फिर पाछै पछतांणी	क० रागपुती ११३
पाछैं	पीछि पाछै घरब यतमां	स०गौ०ना० २१०
ऊचै नीचै	ऊचै नीचै परबत पिलि भिलि थाइँ	गौ०बा०पद ३६
इहां,उंहा	इहां नहीं उहां नहीं	गौ०बा० पदु ३६
नेड़ी	तहां जम की बाप न नेड़ी आईं	गौ०बा०प० ६१
बाहर	बाहर धोपै कैसे भीतरि भेदिला	गौ०बा०स० १६२
भीतरि	सौ विधान धरि भीतरि पाया	ना० २६
आगै	पाउन आगै देव कटीला	ना० ४७
तलि	दूर दूर रके पसै पल्वलि तलि	ना० ७४
तलि	सब टंकी तलि आवै	स०ना०क० १३४
धूरि	औघट घाट अस धरि पयांना	ना० १२२
दूर	घर की रखिबा मन न पाइँ दूर	स०गौ०क० १३४
अंदरि	सिरा पैसी किया पैखिबा अंदरि क० सलोक १२०	
जिधर	जिधर रब्ब रजाये तिधऊ गवन करे	क०सलो ८५
तिधाऊ	तिधाऊ कब्ब गवन करै	ध० सलोक ८५
निकटि	चाढ़ दरसन के निकट न जाइबा	ना० १७
सकल	सकल सास्त्र की लीजै भेद	ना० १५६
पाछे	पाछे जौ मैं सुबाीं	ना० १५६
निच	गंग जमन बिच बहै गोमती	ना० १०८
नेरै	कोउं नौले नेरै	ना० ७६
मध्यौ	औगुन मध्य गुंन करिले	है गौ०बा०स० ६०
मधि	मधि सुंनि मैं बैठा जाई	गौ०बा०स० ७८
को	को भूल न आवसी	क० सलोक ७५

क्रिया विशेषण

कालवाचक (सर्वनाम मूलक)

तब	तब अनंत एक मैं समाया	गो०बा०पद १४
जब	प्रगटी जब आंद	स०गो०बा० ५३
तऊ	तऊ नामा हरि करता है	ना० २१८
कबहू	कबहू भूमि पै आस न परवै	ना० २१५
अब हूं	अबहूं न रहिआ	ना० २११
तबहीं	इह संसार ते तबही छूटऊ	ना० २०१
अब	अब तौ भली बनी है जी	ना० १६३
जै (सब)	जै बोलिए तौ कहिए राम	ना० १८२
कब लग	कब लग लैत रहूं	ना० १७५
अब कै	अब कै नामदेव भया निहास	ना० १६६
जब लगि	जब लगि इनकी आभा	ना० ६५
तब लग	तब लग सिध दुर्लभ जोग	गो०बा०स० २५०
जब तक	जब तब कलंक लगाइसी	गो०बा०स० २५०
जै	चार कला रवि की जै ससि धरि आवै	- गो०बा०पद १२
इंब	सीवना सीऊ हौ सीऊ इंब सीऊं	- ना० १८
जौ लग	जौ लग राम नामै हित न भयौ	- ना० २२

जब लग, तब लग - रम तब लग पी षैला जब लग तब - ना० २२

किचरु (कब तक) - फरीदा कोंचै भरी रखिए मियस ताईं नीर -फ०१७

भी-	कंधी वहन न ढाहि तौ भी लेखा देवना	-फ०श्लोक ६५
कदे	कदे न सोमैं सुन्दरी सनकादिक कै साथ	- गो०बा०स० २५०
कधि	प्रयत्न मकु कधि न गैला	मा० १४८

काल वाचक (संज्ञा,क्रिया, क्रिया वि०मूलक)

अबहुं	अबहुं न आइक त्रिभवन धणी	ना० २१८
छिन छिन	छिन छिन जात न लगै बार	ना० १६६

बहुरि	मनिषा जनम बहुरि नहिं पावै	ना० १६६
आगै पीछै	आगै पीछै जाना ही जाना	ना० १२२
बहोरि	बहोरि जनम नहीं आवै	ना० ७४
लागि लागि	झूठी मया लागि लागि	ना० ७०
अहनिस	मरूं न जिऊं अहनिस भुगतूं	ना० ६५
निस दिन	निसिदिन झारझ पचि पचि मरै	गो०बा० स० १३४
सदा	रिजक रोजी सदा हुयूर	गो०बा०स० १५६
फिरि फिर-	फिरि फिरि मनिषा जनम न आयबा	जो०बा० स० २०३
अंतिकालि	अंतिकालि होयगी भारी	गो०बा०स० २१६
निति	निति प्रति करत गोरखबाला	गो०बा०स० २५८
अजहूं	भोगियवा सूते अजहूं न जागे	गो०बा०पद ४४
पहली	पहली बास कू भंवरे लीनी	ना० ६१
फिरि	यै दो नैना मत छुवो फिरि देखन की आस - फ०श्लोक ६२	
नित सित	नित नित दुखिए कौन - फ० श्लोक ८८	
अजो	तू अजो न पतलियो	फ० श्लो ७४
कछु	कछु आवही आजु	फ० श्लोक ७०
अंति काल	अंतिकाल हरि अंतर जागी	ना० ४१
घटि घटि	घटि घटि व्यापक बाप जी	ना० १४०
पल पल	बढ़त पल पल	ना० १६६
घडी महूरति	घड़ं महूरति पल नहिं आंऊं	ना० ३७
फिर पीछै	फिर पीछै पछिताओगे बौरे	ना० ६२
पूरबी	पूरबी जोगी वादी	गो०बा०स० ४१
राति दिवस	राति दिवस अभिअं तरि लेह	गो०बा०पद ५०
घड़ी मूरति	घड़ी मूरति कूं सब कोई सेवै	गो०बा०पद ५८
रैनि दिन	परत्रिया सू रमै रैनि दिन	ना० १०३
नितै ही	नितै ही रवि चंदा	ना० ११६
निसु बासर	निसु बासर मोहि नींद न आवै	ना० २३०

आरम्भ	निसिदिन आरम्भ पचि पचि मरै	गो०बा०स० १३६
रैंण बिहांणी	- सीस नवावंत सतगुर मिलीया जागत रैन बिहाणी -गो०बा०स०२२२	
सदा	उभल मीन सदा रहै जल मैं	गो०बा०स० २४०
निता	सकल चिता राखिले निता	ना० ६
पैली तिरी	हरी उतारै पैली तिरी	ना० ३४

क्रिया-विशेषण

रीति वाचक (सर्वनाम मूलक)

क्यों-	तामैं तोहि क्यों आवै हांसा	ना० १७
ऐसा	दास नामदेव को ऐसा ठाकुर - ना० १६८	
ज्यों	ज्यों पंडितवेद भजे रे	ना० १६८
क्यूं	बीज बिना क्यूं निपजै षेत	ना० १७१
ऐसे	ऐसे ही मना रे मेरे	ना० ७२
ज्यूं	ज्यूं पंथी पंथ मांही हरै ।	ना० १७२
जैसे	बाल बुधि जैसें कोढी देह	ना० १७२
ऐसो	जो ऐसो औसर बिसरोगे	ना० १७८
कैसा	तुम कैसा भुल पड़ी यू	ना० १६२
जिंउ	जिंउ आकासै पंखिअ से खोज निरखिअ न जाई ना० १६६	
तैसे	तैसे संत जना काम नामु न छाडै -	ना० २२०
कासौं	होरी मैं कासौं खेलौं	ना० २३४
कैसे	कैसे तिरबो केसवै	ना० साखी १
तापैं	तापैं कहै सुनै तब कोई	ना० ७३
काहू	काहू के लाघि मो कोटि भंडार	ना० ८३
ऐसा	ऐसा बुध गियाना	ना० १०१
यूं	यूं जोगी कों गुरुमुखि पाना	गो०बा०स० १३
क्यंकरि	क्यंकरि पावै	गो०बा०स० १५६
क्यूंकरि	क्यूंकरि सीसै	गो०बा०स० १५६

ज्यूं ज्यू	ज्यूं ज्यूं भुयंगम आवै जाइं	गो०बा०स० १८८
ज्यूं	ज्यूं कबहु न होयबा रोगी	गो०बा०स० २१५
जोऊ जोऊ	जोऊ जोऊ जांश सुलांच	गो०बा०पद १७
जिन जिम	जिम जिम बेलीं दाखबा	गो०बा० पद १७
कैसे	कैसें बोलौं पंडिता देव कौनै ठंई	गो०बा० पद ३७
जोइ जोइ	जोइ जोइं क्यू उलटि मौंहि बाधि	ना० ४८
कबहीं	सांगइं मौसला कबहीं नायवीला	ना० १८०

रीतिवाचक (संज्ञा क्रिया, क्रि०वि०मूलक)

फिरि फिर	फिरि फिरि मनिषा जनम न पाइबा	गो०बा०स० २०३
सहजैं	अवधू सहजैं लैला सहजै देवा	गो०बा०स० २५६
सहजैं सहजैं -	सहजैं-सहजैं चलैगा रे अवधू	गो०बा०स० २५६
सहसि	येही पांचौ तत बाबू सहसि प्रकासा	गो०बा०पद १२
सहस	सहस पलांव पवन करि घोडा	गो०बा०पद १४
पचि	काहे कौ पचि मरना	सौ०ब०स० २२
बिणही	बिण ही मढ़िया मंदला बाजै	गो०बा० १०।५७
यण विधि	यण विधि लौका रीझै जी	गो०बा० पद ५७
पुनरपि	पुनरपि जनम न आऔंगा	ना० ६६
बार बार	बार बार सीधा चुप लैइ	ना० १६७
भली	अब तौ भली बनी है जी	ना० १६३
सिहज	सद्०गगुरु देव सिहज निकसाइं	ना० २१६
भरपूर	नैन रहे भरपूर	ना० २३०
ढिग ढिग	ढिग ढिग ढूंढे आंध जुं	ना० साखी ७
धीरैं	धीरैं धारिबा पांव	गो०बा०स० २७
घटि घटि	घटि घटि गोरखबाही क्यारी	गो०बा०स० ३७
भल	पामा लौ भल पामा लौ	गो०बा०स० ८०
पचि पचि	निसिदिन आरम्भ पचि पचि मरै	गो०बा०स० १३४
छिन छिन	छिन छिन जोगी नानां रूपं -	गो०बा०न० १३८

पुनि	काडरा का पांणी पुनि न गिर पहले	गो०बा०पद ४०

रीतिवाचक: कारणावाचक

काहे	एकादशी व्रत करै काहे को तीरथ जाई	ना० २८
क्यों	तामें तोहि क्यों आवें हांसा	ना० १७
काहे	काहे भूलत हौं अभिमानं	गो०बा० पद १४
कारणि	ता कारणि गोरख अवधूता	गो०बा०स० १४२
कारण कत	जीवनि पाई जनम कत हारी	ना० ३४
काहे	रे मन गोविंद काहे न आवें	ना० १६६
काम	काम के खातिर रोयाम्	ना० १६२
काहे कौ	काहे कौ पचि मरना	गो०बा०स० २२
कत	अरंड अमीं कत सींचौ	गो०बा०पद २२
काहे कू	काहे कू कीजे ध्यानं जपना	ना० २३
कारन	जा कारन त्रिभुवन फिर आये	ना० २६
कैसी	कैसी सेवा कैसा ध्यानं	ना० ४३
काहे कूं	काहे कूं छहे रे	ना० ७०
काइल	कंवला सेती काइल पढीया	ना० ६४
कारणा	कारण क्या भीजै जी	ना० १६७
काम के	काम के खातर सोया	ना० १६२

रीतिवाचक क्रिया विशेषण : निषेधात्मक

न	ता मैं गोरष मांगि न षाई	गो०बा०स० २०३
नहीं	सो बल नहीं सरीरं	स०गो०बा० १०
म (मत)	मूल म हारौ म्हारा भाई	गो०बा० पद १
न	काल मैं बाधा सह्या न जाई	ना० ४४
नांहिन	कलि के चिह्न देखि नांहिन ह्यौ	ना० ४३
नांहि	चारे कुंडा ढूंढिआ रहन कि थाहू नांहि	फ० श्लोक १०३

नांही	तिस बिन कांई नांही	फ० श्लोक ७६
ना	फरीदा देख पराई चूपड़ीना तरसाए जीव - फ० श्लोक ३२	
न	न को साथी न को मेली	फ० रागसूही ११६
नु	ढांउ न भया गंवा	फ० श्लोक २४
मत	ये दो नैना मत छूवो	कूवो फ० श्लोक १२
मतु	फरीदा में भुलावा पग दा मतु मेली हो पाय - फ० श्लोक २	
नहितर	नहितर फिरे अकेला	गो०बा० प० २७१
नां	माया नां भौ वशी	गो०बा०पद १६
मति	कुल का नास करै मति कोई	गो०बा०पद १७
नहीं	मैं नहीं मैं नहीं	ना० ५३
नांह	गोविंदा कै नांह लिये भवजल तिरिए रे	ना० ७०
जिनि	तू जिनि जाने ग्रेही ग्रेहा	ना० ७८
जिनि	जिनि बिसरै गोविंद	ना० ८४
जिनि	तुम जिनि जानो तन अपना	ना० ६३
नहं	फरीदा रुख सपूरी परिआं भखिआ नहं बहंसि - फ० श्लोक १०	

रीतिवाचक क्रिया विशेषण

अवधारणा वाचक

सहजि	सहजि मुनि गृह मेला	ना० ६५
तो	नहीं आ पिला तो प्राण त्यागिला	ना० ६६
ही	धर ही वेणी तीरथ आछै	ना० ११४
हि	तू हि बकरी मारी	ना० १६३
तो	एक पाव तो चीन लिया है	ना० १६३
त	लभ त कूड़ा नेह	फ० श्लोक १७
भी	सिर भी मिट्टी खाप	फ० श्लोक २६
भी-	बापै भी मरिए अन बाये भी मरिए	गो०बा०स० १४०

तौ	साँय कहूं तौ सतगुर मानै	गो०बा०स० २५
केवल	तऊ कहैगे केवल रामा	ना० १७
ही	नाद ही तौ आछे सब कछू	गो०बा०स० १२
ही	इंहां ही आछै इहां ही अलोप- गो०बा०स० ३	
तौ, त	बन खंडी जाऊँ तौ छुध्या व्यापै नग्री जाऊँ त मापा - गो०बा०स०३२	
हीं	तब हीं जोति प्रकासा	गो०बा० स० ८१
हि	पऊ गुरुदेव लिलार हि लेख	ना० २१६
ता	नांही ता हंमी दंडां आहि	फ० श्लोक ६

रीतिवाचक क्रिया विशेषण

परिमाण वाचक

कछू	काया तैं कछू अगम बतावै	स०गो०बा० २२४
चौहोत	महंमद का चौहोत विचार	स०गो०बा० २२५
बहु	बहु भांति दिखलावै	गो०बा०पद ४२
भ्यंनै- भ्यंनै	भ्यंनै-भ्यंनै अष्यरै जे दैखै के दुहाई	गो०बा० पद १२
कहु	कैसे तिरन बहु कुटिल भरयौ	ना० ४३
कछू	पुत्र प्रहलाद कहत नहीं मानत वहिं कछु औरै ठानी - ना० ११८	
जैब	रिसी कैपै चौरासी जैब	ना० ४४
कीनै	सुनि सुनि कीनै कन्न	फ० श्लोक १४
बाहुड़ि	बाहुड़ि आमागवन न होइं	गो०बा० स० १६८
धीरै धीरै	धीरै धीर षाइबौ कथम न जैबौ	ना० १४७
बहुतक	बहुतक करम करति	ना० ६४
अति	अति अहार यंद्री बल करै	गो०बा०स० ३७
बहुत	खलिअउ तोही बहुतु पिहीनी	ध०राग सूही ११७
पकिआं	पकिआं मखिआं नह बहंति	फ० १ श्लोक १०

संबंध बोधक अव्यय

संबंध सूचक — कबीर के पूर्व खड़ी बोली काव्य में हम निम्नलिखित संबंध सूचक अव्यय के रूप प्राप्त करते हैं —

संगि	राम संगि नामदेव जिनउ प्रतीति पाई	ना० २२
सहेता	वैस्नो जन परिवार सहेता	ना० २३
संगे	आथि संगे रहै जूवा	गो०बा०स० ३
संगै	जीव सीव संगै बासा	स०गो०ब० २२७
पास	केतंडिआ जुग आपरे इकत पइआ पास	फ०श्लो० ६८
आगे	आगे भूल न आवसी	फ० श्लोक ६८
बाजहु (बिना)	साई बाजहु आपनोकेदस कहिए किस्सु	फ० श्लोक १३
नजीक	होन नजीकि खुदायि दै	फ० श्लोक ११६
अंदर सबर-अंदर	सबर अंदर साबरी	फ०श्लोक ११६
विच	दुनि विच दरगाह आए वसि	फ०श्लोक १०१
बिनु	पीरहि बिनु कतिहि सुख पावै	फ० राग सूही १।५
बिन	बिन चीन्हा नही पाइयो	ना० साखी ८
बिन	प्रभु बिन और रैनि दिन सुपनी	ना० १३
बिच बिच	बिच बिच लागी नौ नौ वली	गो०बा०प्राण संकली १३
निकटि	षट दरसन के निकटि न पाइबो	ना० १७
बिना	राम बिना हूं कैसे जीऊं	ना० १८
समीप	राखि समीप कहै जन नामा	ना० ५८
बीचि	मो तो बिचि पड़दा	ना० ५१
संग	संग न साथी मीतुला	ना० ५२
साथी	संगनसाथी मीतुला	ना० ५२
अगाई	अगइ हूं अब गाऊं	ना० ६६
लांई	सूम की नांई मैटिले नामा	ना० १०६
बिनै	बिनै बजाया बाया बाये	ना० ११२
संगति	तो साध संगति मैं रहया समाई	ना० ११७
बिनि	नलनी बिनि फरै नीर	ना० १३९

बिहूनौं	जैसे भुयंगम पंष बिहूंनौ	ना० १३६
बीना	पैं अनुभौं बीना न नीपयै	ना० १८०
बीन	राम नाम बीन और न दूजा	ना० १८८
हीडंन	हीनडी जाती मौरी	ना० २१६
सरीखै	आपु सरीखै वाकौ कीन	ना० २२१
सहैती	बास सहैती सब जग बास्या	गो०बा०न० २५
पटल	अढूठ पटल मैं भिष्या करै	गो०ब०स० ४४
बाहरि	बाहरि जाता भीतरि आसै	गो०ब०स० ४४
बिहूंणा	थिति बिहूंणा झूठ जोगी	गो०व०स० १०४
संमिकरि	राजा प्रजा संमि करि दैष	गो०बा०स० १३६
हींज	बोलिये हींज तत तै चैला	गो०बा०स० १६१
विहुणी	धंम बिहूंणी गगन रमीलै	गो०बा० स० २०४
बिषि	बिषि बैंसंदर जोति बलत है - गो०बा०स० २३६	
पासि	पासि बैठी सौमै नदी	गो०बा०स० २५१
रहता	हम रहता का साथी	गो०बा०स० २७०
संमि	मैं सिव सक्ती संमि होवै	गो०वा०पद १२
बिहूनडै	पंगा बिहून है चौरी कीधी	गो०ब०पद २०
बिहूंना	जाति बिहूंना लाल उगलिया	गो०बा०पद २०
संगाती	पांच संगाती मिलि षेलै नव षंडा -	गो०बा०पद ५३
अंदरि	अंदरि बैठौ अपनौ साहिब	गो०बा०स० ५५
मंझि	फरीदा भूमि रंगाली मंझि विसूला बाग - फ०श्लोक ८३	
सनमुष	नामदेव बीठल सनमुख बोलीला	ना० ६६
सहैरा	प्रकवंत नामा राम सेहरा	ना० १४
सहित	षट क्रम सहित विप्र आचारी	ना० १७
निरन्तरि	सकल निरन्तरि चीन्हिलै आपन	ना० २१
संझ	मुलमा मंझ हीरा रै	ना० २७
सौं	आनदेव सौं दीननभाषौ	ना० ३०
सा	अंतरगति कोइला सा करला	ना० २४

भाँति	कौन भाँति हरि सेइयै राम सवन ही माँहि	ना० साखी ६

संयोजक—

और	राम नाम बीन और न दूजा	ना० १८८
फुनि	फुनि मुनि वरनि धर्म मति चौष ी	ना० १६८
फुनि	तऊ फुनि मौपै जबानु न होई	ना० १२२
अरु	बौल्या अरू लाधा	गो०बा०स० २८
फिरि	फूल्या फूल कली फिरि फूल	गो०का०स० ८७
औरै	पंडित गान मरै कथा सुसि	
	औरै लैह परमपद बूभि	गो०बा०स० १३४
अर	बैद क रोगी रमायली अर जसि षाय	गो०बा०स० २१०
र	वैद र रोगी रसापली अर सचिबाप	पौ०बा०प० २१०
अर	देह बिसर अर निंद्रा व्यापै	गो०बा०स० २१३
अरु	सूकै कंठ अरु फुंठ संतापै	गो०बा०स० २१३
र	विद्या पढ़ि र कहावै ग्यानी	गो०बा०स० २२३
होर	जिन मनु होर मुख होर	फ०आसा महला १
अरू	कमादि अरू कागतै -	फ० श्लोक ५१
औ	बहुरि और देख बंदे के भाग-फ०श्लोक ६१	
और	नामसूं कहै और आस न करि हूं	ना० ३७
आरौ	आरौ मारि राम रटि लैहूं	ना० ३७
अवर	आतम राम अवर नहीं दूजा	ना० २०

विभाजक000000भाव०

विभाजक

भावै-	गावै तौ जाइं भावै मति गावै राम	ना० १७१
तौ	जौ ऐसौ औसर विसरैगौ तौ मरकट कौ औतार धरैगौ - ना० १७८	
सौ जै	जौगी सौ जै मन जौगवै	गो०बा०स० १०२

कै	सिध कै सैकेत बूझिकै सुग	गो०बा०ब्र० ११५
कै	भीख कै मारग रोपी लै मायं	गो०बा०ब्र० १८२
तौ	चापि रहै तौ दामल फूटै	गो०बा०ब्र० २५५
ज	तिहाँ हुं ही प ढिंढोला झारी सी	गो०बा०सा०पद ७
भावै	भावै गावै भावै नाचै	ना० २६
कै	आपन हत्थी जौलि कै, कै गल लगै ख्राहि	फ० रागसूही २।३
तां	जै जाखा बहु नउला तां थोडा मागु करी	- फ० श्लोक ७

विरोधक

पै	ए रमना तो पै मांगू दान	ना० १७७
पै	- पै र जोइ नै एदा फरिद पधार्या	गो०बा०पद ४

दशावाचक -

जे	तन मन सूं जे परया	गो०बा०पद २२
जे तूं	जे तूं करख्य करख्य थाई	ना० २२५
ऐसे तूं	ऐसे तूं निह चल होइ रे मना	ना० २२५
तऊ फुनि	तऊ फुनि मो पै जाय न होई	ना० २२२
जिह	जिह ग्रह रमई आ कवलापती	ना० २१०
यह	यह पौलै की नाराइना	ना०२१०
तह	तह अनहद सबद बाजता	ना० २००
तैजै	तैं जै बहु मैं नाही	फ०श्लोक ८
जौ तैं	फरीदा जौतू खटलवैला	फ०श्लोक ११
ता तू	फरीदा जातू खरल टैला तांतू रवा दुनी सिऊ	फ० श्लोक ११
जिधर	जिधर रब रजाई	फ० श्लोक ८५

जहँ	पंह परै जहँ जाइयै	ना० ४८

विस्मयादिबोधक अव्यय

बावलि	बावलि होईं सो सबु तीरैं	फ़ा० रामगुड़ी १।१

आदर सूचक

जी	तिहाँ हूँ ही स पिंडालन वारी जी	गो०आ०पद ७

—

अध्याय — १०

समास

समास

तत्पुरुष समास

गहर गंभीर -	सारमसार गहर गंभीर गगन उछलिया नांद -गो०बा०स०१२
दूधाधार	दूधाधारी पर धरि चीट-गो०बा०स० ४०
घरबारी	घरबारी सौ घर की पावैं गो०बा०स० ४४
प्रेमभगति	दास नांमदेव प्रेम भगति अंतरि जो पागैं ७८।३
अर्थधरम	अर्थं धरम करम की करम की कइ मैषि मागैं । ना० ३
पारब्रह्म	पारब्रह्म का जे गुन गावैं - ना० ५
गुरपरसादी	गुर परसादी पाइआ - ना० १०६
सतिगुरू	सतिगुरु होइ लाइआ ना० २०६
रतन कमल	रतनकमल कोठरी ना० २२०
दीनदयाला	भणत नामदेव दीन दयाला - ना० १०६

कर्म धारय समास

अगम अगोचर	वसती नसुन्यं सुन्यंनवसती अगम अगोचर एसा गो०बा०स० १
अहनिसि	अहिनिसि कथिषा ब्रह्म गियान गो०बा०स० ८
धन जोवन	धन जोवन की करैं न आस गो०बा०स० १६
भुवनपति	सकल भुवनपति मिल्यौ है सहज भाइ ना० ६
रामरसाइन	रामरसाइन पीवरे भगरा - ना० २३
राम रसाइनु	रसना रामु रसाइनु पीवै । ना० २१४
बादु विवादु	बादु विवादु कारका उनकी पं - रा० २१४
मानसरोवर	जैसे सुरू बालहा मानसरोवर अंगुला - ना० २०२
हरि निरमल	हरि निरमल जाको अंत न भार ना० १२०

द्वन्द्व समास

गगन सिषर	गगन सिषर महिं बालक बोलैं - गो०बा०म ० १
जाँति पाँति	जाति पाँति गुरुदेव गोकंदा - गो०बा०स० ३
घड़ी महूरति	घड़ी महूरति पल नहीं टारूं ना० ३७
दान पुंनि	दान पुनि पासंगतुलैं ना० भारवी १३
निसु बासर	निसुवासर औहिं नींद न आवै -ना० २ अ
तनुमनु	तन मनु राम पिआरै जोगी ना० २१४
साधिक सिद्ध	साधिक सिद्ध सगल मुनि चाही ना० २०२
गंगा जमुना	गंगा जमुना संगम दौइ - ना० ११४
पतरा पौथी	पतरा पौथी परहा करौ ना० 126

पुनरुक्तियाँ -

आपैं आपैं	ना० २२३
घटि घटि	ना० २२३
बलि बलि	ना० २२७
दौड़ै दौड़ै	ना० २२८
घट घट	ना० २२३
रचि रचि	ना० २१४
धनि धनि	ना० २१०
मधुर मधुर	ना० २१०
लाँगत लाँगत	ना० २०८
जहाँ जहाँ	ना० २०५
हरि हरि	ना० २०३
गुनी गुनी	ना० २०३

जौंति जौंति	ना० ७४
लागि लागि	ना० ७०
जन्म-जन्म	ना० ७४
छाँडि छाँडि	ना० ६१
हरि हरि	ना० ११८
सुमिर सुमिर	ना० ६५
अभी अभी	ना० १०१

ग्रन्थ-सूची

आधार ग्रन्थ

रचना	सम्पादक	प्रकाशन तिथि
गोरखबानी	डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल	२०१७ वि०
सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली	भगीरथ मिश्र राजनारायण मौर्य	सन् १९६४
बाबा फरीद की बानियां		

संदर्भ ग्रन्थ

१. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, डा० नामवर सिंह

२. आधुनिक हिन्दी साहित्य- डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय-हिन्दी परिषद्, प्रयाग विश्वविद्यालय, १९४१ ई०

३. हिन्दी साहित्य डा० मातावदल जायसवाल - हिन्दी साहित्य, द्वितीय खण्ड-भारतीय हिन्दी परिषद

४. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव तथा विकास - डा० श्रीराम शर्मा

५. सूरपूर्व ब्रजभाषा डा० शिवप्रसाद सिंह

६. ध्वनि तथा ध्वनिग्राम शास्त्र - जयकुमार जलज

७. गोरखबानी डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल

८. नामदेव (हिन्दी शब्द कोश) डा० राजेन्द्रकुमार- हिन्दी शब्दकोश, द्वितीय खंड

९. सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली- भगीरथ मिश्र व राजनारायण मौर्य

१०. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डा० रामचन्द्र शुक्ल

११. नाथ संप्रदाय- डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी

१२. हिन्दुस्तानी पत्रिका - भगवानदीन

१३. खड़ीबोली का आन्दोलन- शीतिकंठ मिश्र

१४. पुरानी हिन्दी - चन्द्रधर शर्मा गुलेरी

१५. खड़ीबोली काव्य में अभिव्यंजना - डा० आशा गुप्त

१६. हिन्दी सलेक्शन - शिवप्रसाद

१७. हिन्दी साहित्य का इतिहास - सातवाँ संस्करण - रामचन्द्र शुक्ल

१८. खड़ी बोली का उद्भव तथा विकास- प्रो० आनन्दनारायण शर्मा

१९. हिन्दी गद्य का उद्गम तथा विकास - शम्भुनाथ पाण्डेय

२०. हिन्दी गद्य के प्रथम चार आचार्य नामक निबंध

२१. हस्टविक (१८५६) प्रेमसागर शब्दकोश

२२. कौरवी तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी राजर्षि अभिनन्दन ग्रन्थ - कृष्णचन्द्र शर्मा

२३. खड़ी बोली भारतीय साहित्य - डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

२४. हिन्दी अनुशीलन- वर्ष ७ अंक १ - खड़ीबोली नाम का इतिहास

२५. डा० विश्वनाथ प्रसाद आगरे की खड़ी बोली - भारतीय साहित्यकी,पृष्ठभूमि

२६. मकरन्द - डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल

२७. हिन्दी साहित्य का आदिकाल- आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

२८. गद्य साहित्य का उद्गम तथा विकास से हिन्दी का प्रारम्भिक गद्य साहित्य नामक निबंध - बा० गुलाबराय

२९. हिन्दी व्याकरण - कामताप्रसाद गुरु

३०. पश्चिमी हिन्दी बोलियों की व्याकरणिक कोटियाँ - डा० कैलाशनाथ शुक्ला

३१. कबीर की भाषा - डा० माताबदल जायसवाल